ISSN 0974-1100

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

PŪRVADEVĀ - A Social Science Research Journal

Peer Reviewed Bilingual International Research Journal
The Journal indexed in the UGC-CARE list.

वर्ष 28 अंक 112 ❊ जनवरी-मार्च, 2023

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी प्रकाशन

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी
❐ संक्षिप्त विवरण ❐

तथागत् बुद्ध के संदेश 'अत्त दीपो भव' तथा डॉ. अम्बेडकर के आव्हान 'संगठित रहो, शिक्षित बनो, संघर्ष करो' से अनुप्राणित प्रदेश के प्रमुख दलित समाजसेवियों, साहित्यकारों एवं बुद्धिजीवियों के सम्मिलित प्रयास से सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक परम्परा से समृद्ध नगर उज्जैन में एक स्वशासी संगठन के रूप में 'मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी' की स्थापना की गई। तदुपरान्त म.प्र.सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट,1973 के अन्तर्गत (क्रमांक 19066 दिनांक 18 नवम्बर,1987 पर) संस्था का विधिवत् पंजीकरण कराया गया है। अकादमी का प्रधान कार्यालय उज्जैन स्थित है। अकादमी का लक्ष्य समाज के शोषित–पीड़ित दलितजनों को अपने मानवीय अधिकारों एवं समृद्ध सांस्कृतिक विरासत से अवगत कर, उनमें नवीन चेतना का संचार करना और शोषण व असमानता के विरूद्ध संघर्ष के लिए सतत् प्रेरित करना है। इस निमित्त दलित साहित्य सृजन एवं शोध–अनुशीलन तथा तदुनुरूप परिवेश का सजृन करना है। साथ ही दलितों के मानवोचित सामान्य अधिकारों की उपलब्धि के लिए उन्हें सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान कर अपनी सक्रिय वैचारिक–साहित्यिक पहल द्वारा उनकी सामाजिक–सांस्कृतिक अस्मिता की समाज में पुनसर्थापना का प्रयास करना है।

❐ अकादमी की प्रमुख गतिविधियाँ :

निर्धारित कार्य योजना के अनुसार अकादमी की प्रमुख गतिविधियाँ एवं उल्लेखनीय उपलब्धियाँ एवं संचालित गतिविधियाँ अधोलिखित हैं :

❐ सामाजिक विज्ञान शोध केन्द्र की स्थापना

अनुसूचित जाति के विकास एवं समस्याओं पर केन्द्रित एक उच्चस्तरीय अध्ययन–अनुसंधान केन्द्र स्थापित किया गया है। जिसके अन्तर्गत एक समृद्ध ग्रन्थालय, शोधपत्र–पत्रिकाऐं, शोध–अध्ययन कक्ष, म्यूजियम आदि अन्य आवश्यक अनुसंधान सुविधाएँ उपलब्ध है।

❐ ग्रन्थालय एवं प्रलेखन केन्द्र

अकादमी के ग्रन्थालय में दलित साहित्य, भारतीय समाज व्यवस्था, धर्म.दर्शन, राजनीति, अर्थशास्त्र, इतिहास आदि विषयों पर प्रमुख ग्रंथ संग्रहित हैं। ग्रन्थालय में देश के विभिन्न भागों से प्रकाशित दलित समस्याओं पर केन्द्रित पत्र–पत्रिकाएँ, जर्नल्स आदि संग्रहित किये गये हैं। ग्रन्थालय में शोध–अध्ययन की विशेष सुविधाऐं उपलब्ध कराई जाकर उसे एक समृद्ध प्रलेखन केन्द्र के रूप में विकसित किया जा रहा है ।

❐ राष्ट्रीय सम्मेलनों, प्रान्तीय सम्मेलनों, राष्ट्रीय शोध संगोष्ठियों का आयोजन, कार्यशाला,व्याख्यानमाला, जयंती,स्मृति व्याख्यान कार्यक्रमों का आयोजन स्थानीय, प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर किया जाता है।

❐ दलित साहित्य अकादमी पुरस्कार

अकादमी द्वारा दलित साहित्य, इतिहास, कला एवं संस्कृति के क्षेत्र में सृजित उत्कृष्ट कृतियों शोध ग्रन्थों को पुरस्कृत करने के उद्देश्य से उच्चस्तरीय 'दलित साहित्य अकादमी पुरस्कार' की स्थापना की गई है।

❐ शोध पत्रिका "पूर्वदेवा" का प्रकाशन–वर्ष 1994 से नियमित प्रकाशन किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत माह–सितम्बर, 2022 तक 110 अंकों का नियमित प्रकाशन किया जा चुका है जिसमें 955 से अधिक शोध आलेख प्रकाशित किये जा चुके हैं

❐ पुस्तक प्रकाशन – पुस्तक, पाण्डुलिपि प्रकाशन योजनान्तर्गत अब तक 10 पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है। साथ ही राष्ट्रीय सम्मेलन प्रसंग विशेष पर स्मारिकाओं का प्रकाशन भी किया गया है।

❐ अकादमी भवन व परिसर –प्रशासकीय भवन, जिसके अन्तर्गत अकादमी कार्यालय, ग्रन्थालय एवं शोध केन्द्र एवं संत कबीर सभागृह संचालित है। अकादमी प्रधान कार्यालय, बाणभट्ट मार्ग (केन्द्रीय विद्यालय सम्मूख) उज्जैन, मध्यप्रदेश में स्थित 1.672 हेक्टे. क्षेत्रफल के भूखण्ड पर स्थित है।

पी.सी. बैरवा–सचिव **डॉ. हरिमोहन धवन**–अध्यक्ष

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

PŪRVADEVĀ **A Research Journal of Social Sciences**

Peer Revied Bilingual International Research Journal
This Journal is included in the UGC-Consortium for Academic and Research Ethics

वर्ष 28, अंक 112 **जनवरी–मार्च, 2023**

❒

प्रधान सम्पादक
डॉ. हरिमोहन धवन

❒

प्रकाशक
पी.सी. बैरवा

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी
बाण भट्टमार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन (म.प्र) 456010
दूरभाष (0734) 2518737
E-mail : mpdsaujn@gmail.com Website : www.mpdsa.org

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

परामर्श मण्डल

डॉ. प्रकाश बरतुनिया
कुलाधिपति– बाबा साहेब अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

डॉ. अनिल दत्त मिश्रा
प्रतिष्ठित गांधीवादी विद्वान व वरिष्ठ उपाध्यक्ष, सुलभ अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक सेवा संगठन, नईदिल्ली

डॉ. रामगोपाल सिंह
पूर्व आचार्य, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (म.प्र.)

डॉ. जयप्रकाश कर्दम
वरिष्ठ साहित्यकार एवं सम्पादक, दलित साहित्य वार्षिकी, नईदिल्ली

डॉ. रमेशचन्द्र जाटवा
पूर्व अतिरिक्त संचालक, उज्जैन संभाग, उच्च शिक्षा विभाग, मध्यप्रदेश

डॉ. डी. डी. बेदिया
आचार्य एवं निदेशक, व्यवसाय प्रबंध संस्थान, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

सम्पादक मण्डल

डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा
पूर्व आचार्य अर्थशास्त्र व प्राचार्य, शास.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर

डॉ. प्रभा श्रीनिवासुलु
पूर्व आचार्य इतिहास व प्राचार्य, शास. माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

डॉ. शैलेन्द्र पाराशर
पूर्व आचार्य समाजशास्त्र व अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर पीठ, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. एच.एम. बरूआ
पूर्व आचार्य, समाजशास्त्र, शास. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन

डॉ. प्रेमलता चुटैल
पूर्व आचार्य, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. अरूण कुमार
प्राध्यापक,राजनीति विज्ञान, शासकीय तिलक महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन
आचार्य, राजनीति विज्ञान व पूर्व प्राचार्य, उच्च शिक्षा विभाग, (म.प्र.)

प्रकाशक : पी. सी. बैरवा

© स्वात्वाधिकारी : मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी,
बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन (म.प्र.)

इस अंक का मूल्य रूपये 150/–

वित्तीय सहयोग

भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, नईदिल्ली

सम्पादन व प्रकाशन सर्वथा अवैतनिक एवं अव्यवसायिक

वर्ष 28, **अंक** 112 **जनवरी–मार्च, 2023**

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

वर्ष 28 अंक 112 जनवरी–मार्च, 2023

❐ अनुक्रम ❐

1. वैदिक कृषि की उन्नति में आधारभूत उपकरण के रूप में 'हल' की विवेचना (वैदिक वांग्मय के विशेष संदर्भ में) – डॉ.प्रशांत कुमार, डॉ. अजीत कुमार राव 1

2. आजादी का अमृत महोत्सव–एक आत्मावलोकन – डॉ. कामना जैन 8

3. छत्तीसगढ़ के छुईखदान रियासत में राष्ट्रीय एवं सामाजिक जागरूकता – दीपक वर्मा 17

4. उत्तराखण्ड में रिवर्स माइग्रेशन एवं उसके सामाजिक–आर्थिक प्रभाव (चम्पावत जिले के संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण) –डॉ.देवकीनंदन भट्ट 28

5. सलाहकार के रूप में स्त्रियों की भूमिका–प्राचीन भारत के विशेष सन्दर्भ में – डॉ.सुमिति सैनी 37

6. वज्रयानी बौद्ध देवमंडल में प्रमुख ब्राह्मण देवियों का आत्मसातीकरण – डॉ.सत्यप्रकाश 45

7. उत्तर प्रदेश में क्षेत्रीय राजनीतिक दल के रूप में अपना दल (सोनेलाल) एक विश्लेषणात्मक अध्ययन – रानी गुप्ता, डॉ. सांत्वना पाण्डे 52

8. भारत में सतत् औधोगिक विकास एवं पर्यावरण–एक समीक्षात्मक अध्ययन – डॉ. के.एल. टाण्डेकर, डॉ. (श्रीमती) मीना प्रसाद 61

9. भारत की जनजातियाँ और वैश्वीकृत सिनेमा में उनका दृष्टांत – डॉ. देबांजना नाग 68

10. गढ़वाल की शिल्पकार जातियों के उत्थान में आर्य समाज की भूमिका (20वीं शताब्दी के विशेष संदर्भ में) – वन्दना आर्य 76

11. अटल विहार आवास योजना का हितग्राहियों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में योगदान (छत्तीसगढ राजनांदगाँव के विशेष संदर्भ में) – कु. रागिनी पराटे, डॉ.के.एल.टांडेकर 87

12. वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में सांस्कृतिक एवं भाषाई अवरोध
— डॉ.रामहेत गौतम 94

13. प्राचीन बौद्ध मूर्तिकला में अभिव्यक्त सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन
— प्राची रंगा 100

14. गढ़वाल हिमालय की कार्तिकेय प्रतिमाओं की लोकप्रियता की प्रमाणिकताः
एक विश्लेषण — प्रो.देवेन्द्र कुमार गुप्ता, श्वेता कुमारी 105

15. ग्रामीण भारत को सशक्त करने में मनरेगा की भूमिका — बंशीलाल 114

16. Shifting Paradigm of India's Foreign Policy Nehru to Modi
- Rahul Shrivastava 124

17. Neurocognition A paradigme shift to innovative pedagogy of teaching
- Tehseen Sartaj, Dr. S. Amutha, Dr. Mohammad Amin Dar 132

18. Financial Inclusion Among Koraga Tribal Community
An Overview - Venkatesha Nayak, Dr. Jayavantha Nayak 142

19. Paliamentary Institutions & Construction of India's Foreign
Policy Decision Making - Vishakha Jha 149

20. A Study on investment anyalysis of the salaried people
at Nashik City - Dr. Surinder B. Sethi 160

पूर्वदेवा में प्रकाशित लेख एवं उनमें व्यक्त विचार लेखकों के निजी विचार है.
सम्पादक व प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है.

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 1–7

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

वैदिक कृषि की उन्नति में आधारभूत उपकरण के रूप में हल का महत्व (वैदिक वांग्मय के विशेष संदर्भ में एक विवेचन)

डॉ.प्रशांत कुमार
सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, हर्ष विद्या मन्दिर पी.जी. कॉलेज, रायसी, हरिद्वार
E-mail : prashantkumar.hvmpg@gmail.com Mob.- 9997958451.
डॉ. अजीत कुमार राव
सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, हर्ष विद्या मन्दिर पी.जी. कॉलेज, रायसी, हरिद्वार

सारांश

उपकरण मानव जीवन एवं संस्कृति के सम्बन्ध में ज्ञान के सबसे पहले तथा प्रमुख स्रोत हैं। प्रारम्भ से ही मानव ने अपनी सुरक्षा एवं अपने विभिन्न कार्यों को सुचारू रूप से करने के लिए नाना प्रकार के उपकरणों का प्रयोग किया। ये उपकरण विभिन्न पदार्थों यथा–पत्थर, लकड़ी एवं हड्डी आदि से निर्मित किये गये थे। इन उपकरणों एवं यंत्रों के माध्यम से ही मनुष्य पशु श्रेणी से अपने को अलग रख सका। उपकरण ही उसके प्रकृति से संघर्ष के प्रथम अशारीरिक अवयव थे और वर्तमान में भी हैं। वैदिक वांग्मय के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन लोगों की आर्थिक गतिविधियों में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान था। कृषि कर्म के विकास के कारण ही उपकरण के रूप में हल का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया था। ऋग्वेद के एक मंत्र से स्पष्ट होता है कि सर्वप्रथम अश्विन देवताओं ने आर्यों को हल चलाना सिखाया और बीज बोने की शिक्षा दी थी। वैदिक लोगों द्वारा कृषि की समस्त प्रक्रियाओं की सफलता के लिए अनेक देवी–देवताओं की पूजा–अर्चना भी की जाने लगी थी जिनकी कृपा से उनकी फसल उत्तम प्रकार की हो। इन देवी–देवताओं में हल से सम्बन्धित देवी सीता तथा देवता शुनःसीर के सम्मिलित होने से तत्कालीन कृषि की उन्नति में उपकरण के रूप में हल का महत्व स्पष्ट परिलक्षित होता है।

मूल शब्द– वैदिक, वांग्मय, कृषि, उपकरण, हल

प्रस्तावना

कृषि कर्म को सुनियोजित एवं व्यवस्थित रूप से पूर्ण करने के लिए विभिन्न प्रकार के उपकरणों एवं यंत्रों का होना अति आवश्यक है। वैदिक वांग्मय में कृषि की विभिन्न प्रक्रियाओं को सुचारू रूप से सम्पन्न कराने के लिए अनेक महत्वपूर्ण उपकरणों का उल्लेख प्राप्त होता

है। शतपथ ब्राह्मण[1] में कृषि की सभी महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं का विस्तार से उल्लेख मिलता है। यथा– कृषन्तः (जुताई), वपन्तः (बुआई), लुनन्तः (कटाई) और मृणन्तः (मणनी)। वैदिक कृषक इन क्रियाओं को ठीक प्रकार से पूर्ण करने हेतु अनेकानेक उपकरणों का प्रयोग करते थे। यथा–हल, खनित्र, दात्र, शूर्प तथा तितउ आदि। इन सभी उपकरणों में वैदिक कृषि के चातुर्दिक विकास में हल का सबसे महत्वपूर्ण योगदान था जिसका वैदिक साहित्य में विशेष उल्लेख प्राप्त होता है। यजुर्वेद के एक मंत्र से हल एवं फाल का महत्व स्पष्ट ज्ञात होता है–

शुनं सुफाला विकृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभियन्तु वाहैः।
शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तनास्मै।।[2]

अर्थात् उत्तम फाल भूमि की कृषि करें। कृषक बैलों के साथ आनन्द से कृषि करने को जाएं। हल और फाल हवि से संतुष्ट होते हुए इसके लिए वनस्पतियाँ दें। इस मंत्र में हल और फाल के माध्यम से मनुष्य का कल्याण होता है, स्पष्ट बताया गया है। अथर्ववेद में वैदिक काल के सबसे प्रमुख देवता इन्द्र को सीरपति (हल का स्वामी) कहा गया है।[3]

वैदिक काल से पूर्व हल के साक्ष्य

नवपाषाण काल में कृषि कर्म का प्रारम्भ होने के साथ ही कृषि कार्य को सुगम एवं सरल बनाने के लिए आवश्यकतानुसार समय–समय पर विभिन्न प्रकार के उपकरणों का निर्माण किया गया। इन्हीं उपकरणों के उत्तरोत्तर विकास के परिणामस्वरूप हल का आविष्कार सम्भव हुआ। नवपाषाण कालीन उपकरणों के आधार पर जी. आर. शर्मा का मत है कि मुद्रिका पाषाण का उपयोग कृषि हेतु जमीन खोदने वाले डण्डे पर भार देने हेतु किया गया होगा।[4] राधाकान्त वर्मा के मतानुसार छेनी का प्रयोग कृषि कार्य में फाल के रूप में गदाशीर्ष के साथ किया जाता रहा होगा। इसके अतिरिक्त कुदाल का प्रयोग भी खेत को खोदने के लिए फाल के रूप में सम्भव है। यदि लम्बी कुल्हाड़ी को कुदाल के समान डण्डे में मढ़ा जाए तो उससे खोदने का कार्य भी किया जा सकता है।[5] कालान्तर में कुदाली को और परिष्कृत करके हल का निर्माण किया गया होगा। हल का आविष्कार कृषि क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन था। पुरातत्त्वविदों का मानना है कि हल का आविष्कार ताम्रपाषाण काल में हुआ था। मेसोपोटामिया में हल का उपयोग 3000 ई.पू. के आस–पास होना आरम्भ हो चुका था।[6] सम्भवतः इसका आविष्कार इस समय से बहुत पहले ही हो गया होगा। भारत में सिंधु सभ्यता के समय से हल के प्रमाण मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। कालीबंगा में विकसित सिंधु संस्कृति से पूर्व की संस्कृति में बस्ती क्षेत्र में दक्षिण–पूर्व की ओर स्थित एक जुते हुए खेत के प्रमाण मिले हैं। इस खेत में पूर्व–पश्चिम तथा उत्तर–दक्षिण हल से बनी हराइयों के निशान मिले हैं। इन हराइयों के बीच की दूरी पूर्व–पश्चिम 30 सें.मी. तथा उत्तर–दक्षिण 190 सें.मी. है। दो दिशाओं में हराइयों के निशान से स्पष्ट होता है कि यहाँ एक ही खेत में दो फसलें एक साथ बोई जाती थीं। बी. बी. लाल के अनुसार जैसा कि वर्तमान हरियाणा, राजस्थान, पश्चिम उत्तरप्रदेश में जुताई की इसी प्रकार की विधि के प्रचलन से प्रतीत होता है कि अधिक दूरी वाली हराइयों में सरसों तथा कम दूरी वाली हराइयों में चना बोया जाता था।[7] अच्छेलाल यादव ने भी इस मत का समर्थन किया है उनके अनुसार सरसों गौण तथा चना मुख्य फसल के रूप में बोया जाता था और धान्यों की प्रकृति के अनुसार हराइयों की दूरी

का औचित्य भी स्पष्ट है।[8] हरियाणा के बनावली से पकाई गई मिट्टी से बना हल का एक सुरक्षित मॉडल प्राप्त हुआ है। जो वर्तमान हल के समान ही है।[9] सिंधु सभ्यता से प्राप्त खाद्यान्नों की संख्या के आधार पर कृषि व्यवस्था के विकसित अवस्था में होने के प्रमाण स्पष्ट हैं। इतनी अधिक संख्या में खाद्यान्नों की मात्रा एवं उत्पादन विकसित उपकरणों के अभाव में सम्भव नहीं है। अतः उपकरण के रूप में हल निश्चित ही यहाँ कृषि कार्य में बड़े पैमाने पर प्रयोग होता रहा होगा। झा एवं श्रीमाली[10] के अनुसार भी 3000 ई.पू. के आस–पास कृषि जीवन में सिंधु घाटी में सिंध एवं पंजाब में फैल चुका था और कुछ ही समय बाद यह पूर्व की ओर जिसमें प्राचीन सरस्वती नदी घाटी क्षेत्र भी है प्रचलित हो चुका था।

वैदिक हल

वैदिक वांग्मय में कृषि के सबसे महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में सबसे पहले हल का वर्णन प्राप्त होता है। कृषि की सबसे पहली प्रक्रिया के रूप में भू–कर्षण का कार्य किया जाता था जो वर्तमान के समान वैदिक काल में भी हल एवं बैलों की सहायता से किया जाता था।[11] वैदिक वांग्मय में हल के लिए वृक[12], अरं[13], सील[14], सीर[15] तथा लांगल[16] शब्दों का प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद में प्रयुक्त 'वृक' शब्द को मैकडॉनल एवं कीथ[17] ने दो स्थानों पर हल का द्योतक माना है। सूर्यकान्त के वैदिक कोश में भी दो स्थलों पर वृक को हल का पर्याय माना गया है।[18]

यवं वृकेणाश्विना वपन्ते वं दुहन्तामनुशाय दस्त्रा।
अभि दस्युं वकुरेणां धमन्तो रू ज्योतिचक्रधुरार्याय।।[19]
यवं वृकेण कर्षथः।[20]

ऋग्वेद में इन दोनों स्थानों पर वृक द्वारा अश्विन देवताओं ने आर्यों के लिए यव का वपन किया ऐसा उल्लेख किया गया है। इन दो स्थानों के अतिरिक्त ऋग्वेद में तथा बाद के वैदिक साहित्य में भी 'वृक' शब्द का प्रयोग कुत्ते तथा सियार के लिए हुआ है।[21] श्रेडर ने ग्रिम के मत का उल्लेख करते हुए बताया है कि अनेक प्राचीन भाषाओं में जानवरों के नाम पर ही हल या उसके किसी भाग का नामकरण कर दिया जाता था।[22]

एस. एस. मिश्र[23] ने वैदिक वांग्मय में प्रयुक्त 'अरं' शब्द को हल के फाल का पूर्व रूप माना है। उनके अनुसार अरं, सीर के समान तीक्ष्ण दण्ड युक्त कोई आयुध था जिससे भू–कर्षण कर बीज वपन का कार्य किया जाता था। सी. डी. बक के अनुसार अन्य भाषाओं में जैसे– यूनानी भाषा में अरो या अरोत्रोन, लैटिन में अरार या अरात्रुम, आयरिश में एरिम तथा लिथुआनियन में अर्ति आदि शब्दों का प्रयोग अरं के समान ही हल के अर्थ में प्राप्त होता है।[24] अरं के आकार–प्रकार के सम्बन्ध में श्रेडर का मत है कि शारोपीय काल का यह हल वैसा ही प्रतीत होता है जैसा कि प्राचीन काल में रोम का अरार तथा यूनान का अरोत्रोन आतोगुआन था। इसका निर्माण किसी कठोर एवं मजबूत लकड़ी के दण्ड से किया जाता था जो बिना मूठ का तथा हुक के समान मुड़ा होता था। बीज वपन से पूर्व इसकी सहायता से भूमि को खोदा जाता था तथा हाथ से मिट्टी के टुकड़ों को तोड़ कर घास की जड़ों एवं पत्थर आदि को बहार निकाल दिया जाता था।[25]

वैदिक वांग्मय में हल का एक नाम सीर भी प्राप्त होता है। सूर्यकान्त के वैदिक कोश में सीर को काफी बड़ा और भारी हल माना गया है, क्योंकि सीर में अनेक बैल जुड़ते थे[26]– ''इमं यवमश्टायोगैः भाडयोगेभिरचर्कृषुः।''[27] (अर्थात् इस यव को आठ बैलों वाले तथा छः बैलों वाले हल से जोतकर उत्पन्न किया गया है।) ''सीरं द्वादशायोगं।''[28] (अर्थात् सीर (हल) में बारह बैल जोते जाते हैं।) एम. एस. रंधावा ने भी सीर को बड़ा और भारी हल माना है।[29] अथर्ववेद में लांगल का उल्लेख ''लांगलं पवीरवत्सुशीमं सोमसत्सरू।''[30] अर्थात् वज्र के समान कठोर, चलाने के लिए सुखकारक, लकड़ी के मूठ वाला हल के रूप में मिलता है।

निरुक्त में लांगल का वर्णन इस प्रकार मिलता है– 'वृको लांगलं भवति विकर्तनात् लांगलं लंगतेर्लागगूलवद्धा' अर्थात् भूमि को खोदने के कारण वृक लांगल कहलाता है।[31] एम. एस. रंधावा में लांगल को तीक्ष्ण नुकीला तथा चिकनी मुठिया वाला माना है।[32] तीक्ष्ण नोक के कारण ही यह जमीन को उखाड़ने का कार्य करता था।

ब्रजदेव प्रसाद राय के मतानुसार वेदों में प्राप्त होने वाले इन शब्दों के माध्यम से हल के विकास की सम्पूर्ण अवस्थाओं का आभास होता है। उनके अनुसार प्रथम चरण में कृषि हेतु अरं के माध्यम से भूमि खोदकर बीज छींट दिया जाता होगा। दूसरे चरण में मुठिया वाले लांगल को मनुष्यों द्वारा खींचकर भूमि की जुताई और बीज की बुआई की जाती होगी। कृषि के विकास के तीसरे चरण में सीर अथवा लांगल में मनुष्य के स्थान पर बैलों का प्रयोग होने लगा जो हल को खींचने तथा भू–कर्षण का कार्य करते थे।[33] कुछ समय पूर्व इरफान हबीब ने उत्तर–पश्चिम पाकिस्तान के सोयाट अंचल में चमत्कारी पुरातात्त्विक साक्ष्य का परिचय दिया है। इस क्षेत्र के आलिग्राम में उत्खनन से 1200 ई.पू. के एक जुते हुए खेत के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं, जिसमें हल चलाने की सामान्तर रेखाएं (सीता) स्पष्ट दिखती हैं।[34] यह पुरातात्त्विक साक्ष्य ऋग्वैदिक काल का समकालीन है, क्षेत्र की दृष्टि से भी यह ऋग्वैदिक काल के भूगोल के अंतर्गत आता है। इस खोज से स्पष्ट होता है कि वैदिक जन भूमि की जुताई के लिए हल का प्रयोग करते थे।

हल के प्रमुख भाग

वैदिक काल में हल प्रायः लकड़ी के बने होते थे। हलों में 6 से लेकर 24 बैलों तक जोते जाते थे। ए. के. यज्ञनारायण अय्यर के मतानुसार सम्भवतः वैदिक कालीन हल भी आधुनिक हलों के समान ही अंग्रेजी वर्ण अ के आकार के ही होते थे और इन हलों में जुताई के लिए अश्वों का प्रयोग किया जाता था।[35] वैदिक वांग्मय का अध्ययन करने पर हल के निम्नलिखित भागों का उल्लेख प्राप्त होता है–

फाल – हल का नुकीला भाग जो भू–कर्षण का कार्य करता था, फाल कहलाता था।[36] यह प्रायः तीक्ष्ण तथा नुकीली धार वाला होता था। वेदों में फाल के लिए स्तेग शब्द का प्रयोग मिलता है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में एक स्थान पर यह उल्लेख मिलता है कि 'स्तेगो न क्षामत्येति पृथ्वीं।' अर्थात् स्तेग भूमि में प्रवेश करके खोदता है।[37] मैक्डॉनल तथा कीथ के अनुसार स्तेग का आशय सम्भवतः कृषक या फाल से हो सकता है।[38] सूर्यकान्त के अनुसार स्तेग सम्भवतः हल के फाल का द्योतक है।[39] कुछ विद्वानों ने वैदिक साहित्य में वर्णित 'शुन' शब्द को भी फाल का पर्याय माना है।[40] ऋग्वेद के एक मंत्र –

शनुं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभि यन्तु वाहैः।
शुनं पर्जन्यों मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्यासु धत्तम्।।[41]

में कहा गया है कि हल के फाल हमारी भूमि की जुताई अच्छी प्रकार से करें। किसान बैलों के साथ खशी से चलें। पर्जन्य उत्तम प्रकार से वृष्टि करके हमारा कल्याण करें। हल और फाल हमारे अन्दर आल्हाद धारण करें। दामोदर सातवलेकर के अनुसार इस मंत्र का शुन शब्द जैसे हल के फाल का वाचक है। वैसे ही पवित्रता, कल्याण, सुख, आनन्द, उन्नति, विजय, मंगल और प्रगति का द्योतक है।[42] उनके अनुसार यजुर्वेद[43] में भी इसी प्रकार का मंत्र प्राप्त होता है। जहां हल और फाल के साथ मनुष्यों के कल्याण का सम्बन्ध दर्शाया गया है। इन मंत्रों से वैदिक कृषि में हल और फाल के महत्व का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है।

हल का फाल लकड़ी तथा धातु से निर्मित होता था। फाल के निर्माण में अधिकाशतः खादिर (खैर) एवं उदुम्बर (गुलर) की लकड़ियों का प्रयोग किया जाता था क्योंकि यह काफी मजबूत एवं कठोर होती थी। ऋग्वेद[44] में प्राप्त उल्लेखों जहाँ विल्व तथा उदुम्बर को फलदायी माना गया है के आधार पर एस. एन. मिश्र[45] ने अपना मत दिया है कि प्रारम्भ में भू–कर्षण का कार्य बिल्व या उदुम्बर की लकड़ी के तीक्ष्णाग्रदण्ड से किया जाता होगा। अथर्ववेद में खादिर के हल के फाल से गाय, बकरियाँ, सन्तान एवं अनाज प्रदान करने की प्रार्थनाएं की गई हैं।[46] अथर्ववेद में नोकदार फाल का स्पष्ट वर्णन मिलता है।[47] सुफाल (उत्तम फाल) उसे कहा जाता था जो सुगमता से भूमि की जुताई कर सके।[48] शतपथ ब्राह्मण में फाल को हड्डियों के समान कठोर बताया गया है।[49] इस सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि आज भी उत्तर प्रदेश (वर्तमान उत्तराखण्ड) में गढ़वाल और हिमाचल प्रदेश के किन्नौर के कुछ क्षेत्रों में चीड़ की लकड़ी से बने हल वाले फालों का प्रयोग होता है।[50] रामशरण शर्मा[51] के अनुसार आज भी बनारस क्षेत्र में एक धार्मिक अनुष्ठान के अन्तर्गत जोतने की प्रक्रिया को प्रारम्भ करने से पूर्व लकड़ी के फाल से लगे हुए हल से एक छोटे खेत में हराइयां बनाई जाती हैं।

वैदिक वांग्मय में प्रयुक्त 'पवीरवन्त'[52] तथा 'पवीरव'[53] शब्दों को विद्वानों ने धातु के बने फाल का पर्याय माना है।[54] अथर्ववेद में एक स्थान पर उल्लेख है कि वह वज्र के समान कठोर (पवीरव) और चलाने में सुखद हो।[55] शतपथ ब्राह्मण में 'लांगल पवीरव' शब्द धार वाले हल के फाल के लिए प्रयुक्त हुआ है।[56] दामोदर सातवलेकर का मत है कि इस काल में लकड़ी के हल में लोहे के फाल का प्रयोग भू–कर्षण के कार्य के लिए होने लगा था, यह उल्लेख फाल के सम्बन्ध में वेदों में प्राप्त होता है।[57] रामशरण शर्मा के अनुसार वेद मंत्रों के उच्चारण के समय धातु या लकड़ी के बने 'कुशी' नामक उपकरण का प्रयोग चिन्ह अंकित करने हेतु होता था। परवर्ती कालों में यह शब्द हल में लगे लोहे के फाल के लिए प्रयुक्त होने लगा और अब भी इसका प्रयोग इसी अर्थ में पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हरियाणा की बोलियों में होता है।[58]

हल की मुठिया– हल का वह भाग जिसे वैदिक कृषक खेत की जुताई का कार्य करते समय हाथ से पकड़कर हल को नियंत्रित करते थे, हल की मुठिया कहलाता था। वेदों में इसके लिए 'मूठ' अथवा 'त्सरू' शब्द प्रयुक्त हुआ है।[59] हल की मूठ प्रायः सुन्दर और आकर्षक होती थी।[60] यह सम्भवतः लकड़ी से निर्मित होती थी।

ईशा, युग, वरत्रा तथा तोत्र – हल में एक लम्बा मोटा बांस या लकड़ी का भाग होता था। हल को युग (जुए) से जोड़ता था जिसे ईशा कहते थे।[61] ईशा के ऊपर जुआ रखा जाता था जो बैलों को आपस में जोड़े रखती थी।[62] बैलों को आपस में जोड़े रखने के लिए वरत्राओं (रस्सियों)[63] का प्रयोग और बैलों को हाँकने के लिए हलवाहे द्वारा अष्ट्रा (चाबुक)[64] का प्रयोग किया जाता था। अष्ट्रा के लिए वेदों में 'तोद'[65] तथा 'तोत्र'[66] शब्द प्रयुक्त हुए है। वर्तमान समय में भी बैलों एवं अन्य पशुओं को हाँकने के लिए इसका उपयोग होता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार उपरोक्त विवरणों से स्पष्ट हो जाता है कि कृषि उपकरण के रूप में हल का वैदिक कृषि के विकास में महत्वपूर्ण योगदान था। इसी कारण हल का प्रारम्भ से ही धार्मिक महत्व भी रहा है। गृह्यसूत्रों में वर्णित कृषि अनुष्ठानों हलाभियोग तथा सीतायज्ञ से वैदिक कालीन कृषि में हल का महत्व स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। वेदों में इन्द्र की सीरपति (हल का स्वामी) कहा गया है तथा शुनासीर से उत्तम धान्य उत्पन्न करने के लिए प्रार्थनाएं की गई हैं। इन सभी तथ्यों से स्पष्ट है कि कृषि के अन्य उपकरणों की अपेक्षा हल वैदिक काल से लेकर वर्तमान समय तक अपनी प्रासंगिकता बनाये हुए है।

❐

सन्दर्भ –

1. उपाध्याय, पं. गंगा प्रसाद, 2010, शतपथ ब्राह्मण (हिन्दी अनुवाद), गोविन्द राम हासानन्द, दिल्ली, 1/6/1/3
2. सातवलेकर, पं. श्रीपाद दामोदर, 2010, यजुर्वेद सुबोध भाष्य, स्वाध्याय मण्डल, किल्ला–पारडी, जिला बलसाड़, गुजरात, 12/69
3. सातवलेकर, पं. श्रीपाद दामोदर, 1990, अथर्ववेद सुबोध भाष्य, स्वाध्याय मण्डल, किल्ला–पारडी, जिला बलसाड़, गुजरात, 6/30/1, 'इन्द्र आसीत् सीरपतिः।'
4. शर्मा, जी. आर. एवं अन्य, 1980, बिगनिंग ऑफ एग्रीकल्चर, अवीनाश प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 63
5. वर्मा, राधाकान्त, 1977, भारतीय प्रागैतिहासिक संस्कृतियाँ, परम ज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 118
6. शर्मा, जी. आर. एवं अन्य, पूर्वोक्त, पृ. 113
7. लाल, बी. बी., 1970–71, पुरातत्व, बुलेटिन ऑफ द इण्डियन आर्कियोलॉजिकल सोसाइटी, नई दिल्ली, नं. 4, पृ. 1–2
8. यादव, अच्छेलाल, 1980, प्राचीन भारत में कृषि, सिद्धार्थ प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 20
9. थपलियाल, के. के. एवं संकटा प्रसाद शुक्ल, 2003, सिंधु सभ्यता, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृ. 202
10. झा., डी. एन. एवं कृष्ण मोहन श्रीमाली, 2016, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, पृ. 88
11. सातवलेकर, पं. श्रीपाद दामोदर, 2000, ऋग्वेद : सुबोध भाष्य, स्वाध्याय मण्डल, किल्ला–पारडी, जिला बलसाड़, गुजरात, 1/23/15, 1/176/2
12. वही, 1/117/21, 8/22/6
13. वही, 7/7/6, 10/101/2, 10/106/8
14. मैकडॉनल एवं कीथ, 1962, वैदिक इण्डेक्स (हिंदी अनु. रामकुमार राय), चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, भाग–2, पृ. 499
15. ऋग्वेद, 4/57/8, 10/101/3–4, अथर्ववेद, 6/30/1, 6/91/1, 8/9/16, 3/17/1–25, सातवलेकर, पं. श्रीपाद दामोदर (संपा), 1983, मैत्रायणी संहिता, स्वाध्याय मण्डल किल्ला पारडी, जिला बलसाड़, गुजरात, 2/7/12, 2/11/4, शास्त्री, डॉ. रामकृष्ण, 2007, वाजसनेयी संहिता (माध्यन्दिन शाखा हिन्दी अनुवाद), चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 12/67–68, शतपथ ब्रा. 7/2/2/2,4–5, 2/6/3/2
16. ऋग्वेद, 4/57/4, 10/101/4, अथर्ववेद, 2/8/4, 3/17/3,6, मैत्रायणी सं. 2/7/12, वाजसनेयी सं., 12/71, शतपथ ब्रा. 7/2/2/11
17. वैदिक इंडैक्स, भाग–2, पूर्वोक्त, पृ. 357
18. सूर्यकान्त, वैदिक कोश, 1963, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, बनारस, पृ. 490
19. ऋग्वेद, 1/117/21

20. वही, 8/22/6
21. वही, 8/66/8, 10/95/14, अथर्ववेद, 20/97/2, शतपथ ब्रा., 5/5/4/10, 12/7/1/8
22. श्रेडर, ओ., 2016, प्री. हिस्टोरिक एण्टिक्वटीज ऑफ द आर्यन पीपुल्स, वेनवोर्थ प्रेस, पृ. 288–89
23. मिश्र, एस. एन., प्राचीन भारत में ग्राम एवं ग्राम्य जीवन के कतिपय पक्ष, पूर्वा–संस्थान, गोरखपुर, पृ. 104–13
24. बक, कार्ल डार्लिंग, 1949, ए डिक्सनरी ऑफ सेलेक्ट सिनॉनिम्स इन द प्रिंसिपल इण्डो–यूरोपियन लेंग्वेज, यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, पृ. 211
25. श्रेडर, ओ., पूर्वोक्त, पृ. 287
26. सूर्यकान्त, पूर्वोक्त, पृ. 558
27. अथर्ववेद, 6/91/1
28. मैत्रायणी संहिता, 2/6/2
29. रंधावा, एम. एस., 1980, ए हिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर इन इण्डिया, वॉल्यूम–1, इण्डियन काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चर रिसर्च, नई दिल्ली, पृ. 317
30. अथर्ववेद, 3/17/3
31. झा, पं. मुकुन्द, 1989, निरुक्त (यास्ककृत), चौखम्भा सुभारती प्रकाशन, वाराणसी, 6/26
32. रंधावा, एम. एस., पूर्वोक्त, पृ. 317
33. राय, ब्रजदेव प्रसाद, 1984, दि लेटर वैदिक इकॉनमी, पटना, पृ. 131
34. चक्रवर्ती, रणवीर, 2017, भारतीय इतिहास का आदिकाल (प्राचीनतम पर्व से 600 ई. तक), ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, हैदराबाद, पृ. 93
35. अय्यर, ए. के. यज्ञनारायण, 1949, एग्रीकल्चर एण्ड एलाइड आर्ट्स इन वैदिक पीरियड, बैंगलोर, पृ. 14–16
36. ऋग्वेद, 4/57/8, 10/117/7, अथर्ववेद, 3/17/5, मैत्रायणी सं., 2/7/12, वाजसनेयी सं., 12/6/9, सातवलेकर, श्रीपाद दामोदर, 1983, काठक संहिता, स्वाध्याय मण्डल, किल्ला–पारडी, जिला बलसाड, गुजरात, 12/7, 16/12, 19/1
37. ऋग्वेद, 10/31/9, अथर्ववेद 18/1/39
38. वैदिक इंडैक्स, भाग–2, पूर्वोक्त, पृ. 435
39. सूर्यकान्त, पूर्वोक्त, पृ. 580
40. चक्रवर्ती, चन्द्रा, 1977, कॉमन लाइफ इन द ऋग्वेद एवं अथर्ववेद, पुनथी पुस्तक, कलकत्ता, पृ. 22
41. ऋग्वेद, 4/57/8
42. सातवलेकर, श्रीपाद दामोदर, 1923, वेद में कृषि विद्या, स्वाध्याय मण्डल, औंध (जिला सतारा), पृ. 06
43. यजुर्वेद, 12/69
44. ऋग्वेद, 5/22/10
45. मिश्र, एस. एन., पूर्वोक्त, पृ. 198
46. अथर्ववेद, 10/6/23
47. वही, 10/6/6–10
48. वही, 3/17/5
49. शतपथ ब्रा., 13/4/4/9
50. पाठक, वी. एस., 2004, प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहास (प्रारम्भ से 600 ई. तक), उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, पृ. 131
51. शर्मा, रामशरण, 2008, प्राचीन भारत में भौतिक प्रगति एवं सामाजिक संरचनाएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 100
52. अथर्ववेद, 3/17/3, वाजसनेयी सं. 12/71
53. ऋग्वेद, 1/174/4, अथर्ववेद, 3/17/3, काठक सं. 16/12, मैत्रायणी सं. 2/7/12
54. वैदिक इण्डेक्स, भाग–1, पूर्वोक्त, पृ. 509, 580
55. अथर्ववेद, 3/17/3
56. शतपथ ब्राह्मण, 7/2/2/11
57. सातवलेकर, श्रीपाद दामोद, 1923, पूर्वोक्त, पृ. 25–26
58. शर्मा, रामशरण, 1992, प्रारम्भिक भारत का आर्थिक एवं सामाजिक इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, पृ. 99–100
59. ऋग्वेद, 7/50/1,3
60. अथर्ववेद, 3/17/3
61. ऋग्वेद, 3/53/17, 8/5/29, 10/135/3, अथर्ववेद, 2/8/4, 8/8/23, शतपथ ब्रा. 1/1/2/12
62. ऋग्वेद, 1/115/2, 1/184/3, 2/39/4, 3/53/17, 8/80/7, 10/60/8, 10/101/3–4, अथर्ववेद, 2/8/4, 3/17/1, शतपथ ब्रा., 3/5/1/24, 34, 7/2/2/4–5
63. ऋग्वेद, 4/57/4, 10/60/8, 10/102/8, अथर्ववेद, 3/17/6, 11/3/10, 20/135/13
64. ऋग्वेद, 4/57/4, 6/53/9, 10/102/8, मैत्रायणी सं., 2/7/12
65. ऋग्वेद, 1/150/1, 4/16/11, 6/6/6, 6/12/3, मैत्रायणी सं., 4/14/5
66. शतपथ ब्राह्मण, 12/4/1/10

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 8–16

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

आजादी का अमृत महोत्सव - एक आत्मावलोकन

डॉ. कामना जैन

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, एस.एस.डी.पी.सी.गर्ल्स कॉलेज, रूड़की, हरिद्वार
E-mal : drkamna1977@gmail.com Mob. 9756208382

सार संक्षेप

15 अगस्त 2022 को भारत की आजादी के 75 वर्ष पूर्ण हो जाएंगे। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के दिशा निर्देशानुसार आजादी की 70 वीं वर्षगांठ को अमृत महोत्सव के रूप में विविध कार्यक्रमों के साथ वर्ष 2021 से प्रारंभ कर वर्ष 2023 तक निरंतर जारी रखा जाएगा। यह अमृत महोत्सव एक अवसर है स्वतंत्रता सेनानियों के अदम्य साहस और बलिदान के प्रति श्रद्धांजलि प्रकट करने का, तो वहीं दूसरी तरफ नयी ऊर्जा व सामर्थ्य के साथ आत्मनिर्भर भारत के भविष्य की ओर कदम बढ़ाने का संकल्प भी है। साथ ही यह अवसर है आत्मावलोकन का। सत्य ,धर्म ,अहिंसा आदि नैतिक स्तंभों के साथ स्वतंत्रता आंदोलन इस लक्ष्य के साथ प्रारंभ किया गया था कि स्वतंत्र भारत में न्याय ,समानता, बंधुत्व जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना के साथ सबका विकास होगा। अतः भविष्य की रूपरेखा तय करने से पूर्व यह विश्लेषण करना अनिवार्य है कि इन 75 वर्षों में भारत कहां तक अपना लक्ष्य प्राप्त कर चुका है। हालांकि यह तो स्पष्ट दृष्टिगोचर है कि सत्ता व शक्ति की राजनीति ने धनबल एवं बाहुबल का आश्रय लेकर जनता को धर्म ,जाति, क्षेत्र जैसे संकीर्ण मुद्दों में उलझा कर दिशा हीनता की ओर अग्रसर किया है। किंतु दूसरी तरफ अपनी पूरी क्षमता से भारत ऊर्जा, व्यापार, सैन्य शक्ति आदि विविध क्षेत्रों में निरंतर प्रगति कर अंतरराष्ट्रीय राजनीति में मुख्य भूमिका निभाते हुए पुनः विश्व गुरु बनने की दिशा में अग्रसर है। अतः प्रस्तुत शोध पत्र में उपरोक्त उल्लिखित विषय वस्तु पर विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य बिंदु– स्वतंत्र भारत, राजनीति, आशंकाएं, आकांक्षाएं, भविष्य

आजादी का अमृत महोत्सव मनाने के साथ–साथ यह विश्लेषण करना अत्यंत आवश्यक है कि हमारी लोकतांत्रिक प्रणाली, संस्थाऐं एवं नागरिक राष्ट्र को मजबूत बनाए रखने में कितना योगदान दे रहे हैं। वैश्विक मानचित्र में आज भारत की स्थिति कैसी है? साथ ही भारत को भावी

प्रगति हेतु अन्य किन सोपानों का आरोहण करना है। स्वतंत्रता के पश्चात् देश की जनता ने गुलामी के जख्मों एवं आर्थिक जर्जरता को दरकिनार कर कर्मठता के साथ स्वर्णिम भारत के निर्माण में अपना योगदान देना प्रारम्भ किया। अन्तर्राष्ट्रिय स्तर पर यह चर्चा जोर पकड़ने लगी कि 21वीं सदीं की महाशक्ति भारत ही होगा, पर समय प्रवाह के साथ भारत सामाजिक व सांस्कृतिक स्तर पर भटकाव की स्थिति में आ गया। सत्य, धर्म, अहिंसा, समानता आदि श्रेष्ठ मूल्यों के सहारे जो स्वाधीनता संग्राम लड़ा गया था, साथ ही आशा की गई थी कि इन्हीं मूल्यों की नींव पर भारत का नव निर्माण होगा किन्तु सत्ता व शक्ति की राजनीति ने नैतिकता को छोड़कर देश कि जनता को धर्म, जाति, क्षेत्र जैसे संकीर्ण मुद्दों में उलझाकर दिशाहीनता की ओर अग्रसर कर दिया।

दूषित राजनीतिक वातावरयण :

स्वतंत्रता के बाद से ही भारतीय राजनीतिक वर्ग में दोष उभरने प्रारंभ हो गए थे। स्वार्थपरक भावनाएँ सिर उठाने लगी थीं। क्षेत्रीय प्रांतीय विभाजन को अथक प्रयासो से रोका तो, भाषायी आधार पर प्रांतीय विभाजन सामने खड़ा हो गया। सांप्रदायिकता का दंश, जातिगत वैमनस्य, लैंगिक असमानता, आर्थिक जर्जरता आदि विभिन्न झंझावातों से जूझते हुए विश्व का विशालतम लोकतंत्रात्मक देश आज भीड़तंत्र एवं भ्रष्टतंत्र का सबसे बड़ा उदाहरण बन चुका है। देश में भ्रष्टाचार बढ़ने का मुख्य कारण चरित्र निर्माण की अच्छी बातों को मात्र उपदेशात्मक मानना और स्वयं उस पर अमल नहीं करना रहा है। **प्लेटो** का कथन अक्षरशः सत्य है कि, 'राज्य बलूत के वृक्षों या चट्टानों से नहीं बनते वरन् उसका निर्माण उसमें रहने वाले नागरिकों के चरित्र से होता है'। अतः किसी भी राष्ट्र का उत्थान व प्रगति, योग्य व उत्कृष्ट चारित्रिक गुणों वाले नागरिकों की ही देन है। हमने इतनी लम्बी गुलामी इसलिए झेली क्योंकि हमने अपनों के साथ विश्वासघात करके विदेशी शासन के भारत में पैर जमाने में सहायता की। विदेशियों से ज्यादा हमने खुद ही घर को लूटा। देश आजाद करते समय **ब्रिटिश प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल** ने पहले ही शायद भाँप लिया था और उसने कहा था कि हम सत्ता लुटेरों के हाथ मे सौंप रहे हैं।[1]

विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत में आज राजनीति कर्त्तव्यहीनता एवं अपराधों से भरी हुई है। अनैतिकता एवं कुमार्ग से नेता सत्ता हथियाने के लिए अपराधियों को आश्रय एवं संरक्षण प्रदान करते हैं। केन्द्र के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को प्रदत्त सूचना के आधार पर विधि निर्माण में सहभागिता करने वाले कुल 4,896 सांसदों व विधायको में से 1,765 अर्थात 36 प्रतिशत सदस्यों के खिलाफ अपराधिक मामले दर्ज है।[2] **नेशनल इलेक्शन वॉच और एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म** (ADR) द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2009 में गंभीर आपराधिक मामलों वाले सांसदों की संख्या 76 थी जोकि 2019 में बढ़कर 159 हो गयी। इस प्रकार 2009 से 2019 के बीच गंभीर आपराधिक पृश्ठभूमि वाले सांसदों की संख्या में कुल 109 प्रतिशत की बढ़ोतरी देखने को मिली।[3]

स्वाधीन भारत के संविधान निर्माताओं के लिए लोकतंत्र एक ऐसा शब्द था जहाँ वर्ग, जाति, क्षेत्र, लिंग, रंग वर्ण आदि भेदों के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए लेकिन ऐसा हो नहीं सका।[4] जब स्वयं के संकीर्ण स्वार्थ सर्वोपरि हो जायेगे वहाँ राष्ट्रहित गौण हो जाता है और

शेष रह जाता है केवल पाखंड।[5] एक आलोचक ने लिखा है कि इस समय जो सबसे पहला काम करने की आवश्यकता है, वह है–तीन भयानक चीजों–धनबल, बाहुबल और माफिया बल को समाप्त किये जाने की है। इनके अलावा चार– 'C' करप्शन, क्रिमीनलाइजेशन, कम्युनलिज्म तथा कास्टिज्म (भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, सांप्रदायिकता तथा जातिवाद) को भी दूर किये जाने की जरूरत है।[6]

स्वर्णिम भारत के मार्ग के बाधक तत्वः–

समकालीन भारत में विभिन्न समस्याऐं राष्ट्र की एकता, अखण्डता एवं अस्मिता पर लगातार चोट कर रही हैं। यह उग्र उन्मादी व्यवहार हमारी सामाजिक–राजनीतिक अपरिपक्वता का ही उदाहरण है, जो राष्ट्र की संपत्ति को नुकसान पहुँचाकर अपने क्षुद्र राजनीतिक इरादे पूरे करते हैं। स्वार्थपरक राजनीति ब्रिटिश साम्राज्य की 'फूट डालो राज करो' नीति का ही आसरा लिए हुए है। गुलाम भारत में अज्ञानतावश विभेदकारी तत्वों को प्रश्रय दिया गया, किंतु स्वतंत्र भारत में सोची समझी रणनीति व वोट बैंक की राजनीति के तहत सारे कार्य किए जा रहे हैं। लौह पुरूष सरदार पटेल भी इसी भारत भूमि की देन हैं, जिन्होंने भारत को खण्ड खण्ड करने वाली ब्रिटिश कूटनीति को समझ लिया और राष्ट्रीय एकीकरण हेतु देश की विभिन्न रियासतों एवं रजवाड़ों को अखण्ड भारत से जुदा नहीं होने दिया। जम्मू कश्मीर रियासत की चूक लम्बे समय तक भारत के गले की फांस बनी रही। वर्तमान में भी कुछ तत्व ऐसे हैं जो भारत की प्रगति में बाधक हैं, जिनकी चर्चा यहां समीचीन है–

- **भ्रष्टाचारः**– राष्ट्र विकास का सबसे बड़ा अवरोधक भ्रष्टाचार है। करोड़ो–अरबों की योजनाएं या तो मात्र कागजों पर बनती हैं या फिर उनको पूरा करने में वर्षों लग जाते हैं और पूरा होने के बाद भी कार्य में वह गुणवत्ता नहीं रहती, जो ब्रिटिश भारत के समय किए गए कार्यों मे थी कि समय की मियाद वर्षों पहले निकल गयी और निर्मित पुल अथवा भवन अभी भी कारगर अवस्था में है। हमारे देश की व्यवस्थापिका, कार्यपालिका, मीडिया, केंद्रीय सतर्कता आयोग आदि पर तो भ्रष्टाचार के आरोप पहले ही लग चुके हैं और अब तो देश की न्यायपालिका एवं शीर्षस्थ जाँच ऐजेन्सी CBI तक भ्रष्टाचार के आरोपों से नहीं बची। सरकारी तंत्र के कार्यों में पारदर्शिता लाने एवं निगरानी बनाए रखने के लिए वर्ष 2005 में सूचना का अधिकार लागू कर दिया गया था, किंतु तब से अब तक कई आर.टी.आई. कार्यकर्त्ताओ की हत्या हो चुकी है, भ्रष्ट लोग उन लोगों को ही रोक देते हैं जो कानून का सहारा लेकर उनके कार्यों की जाँच करना अथवा सहयोग देना चाहते हैं। **ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल** द्वारा जारी भ्रष्टाचार धारणा सूचकांक वर्ष 2020 की सूची में 180 देशों में से भारत 86 वें स्थान पर है।[7] (इस सूची में 0 का अर्थ हैं अत्यधिक भ्रष्ट एवं 100 श्रेणी का अर्थ हैं भ्रष्टाचार मुक्त स्वच्छ छवि।)

- **शिक्षाः**– समग्र सामाजिक विकास के लिए समाज के प्रत्येक जन का शिक्षित होना तथा सामाजिक व राष्ट्रीय प्रगति में योगदान देना आवश्यक है।

विशेषकर प्रजातंत्रात्मक राष्ट्र की सफलता का प्रथम आधार शिक्षित नागरिकों का होना है। UNESCO के शिक्षा के लिए वैश्विक मॉनिटरिंग 2010 के अनुसार, लगभग 135 देशों ने अपने

संविधान में शिक्षा को अनिवार्य कर तथा निःशुल्क एवं भेदभाव रहित शिक्षा सबको देने का प्रावध ाान किया है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में शिक्षा के उत्थान हेतु विभिन्न प्रयास किए गए, जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण कानून–शिक्षा का अधिकार कानून 2009 है। मुक्त और दूरस्थ शिक्षा से लेकर उपग्रह से शिक्षा तक भारत विश्व का तीसरा बडा देश है।[8]

भारतीय केंद्र सरकार के इतिहास की सबसे बड़ी योजना तथा शिक्षा के क्षेत्र में विश्व इतिहास का सबसे बड़ा कार्यक्रम 'सर्वशिक्षा अभियान' चलाया गया। किंतु आज शिक्षा पूर्व की भांति गुणवत्तापरक नहीं है। 40 प्रतिशत से ज्यादा स्कूलों में संबधी सूचकांक में स्थिति बद्तर है। 191 देशों में भारत 145 वें स्थान पर है।[9]

- **स्वास्थ्यः**– स्वस्थ नागरिक ही स्वस्थ समाज का निर्माण करते हैं। भारत में सब कुछ महंगा है, सिर्फ आदमी के लिए भारत में स्वास्थय पर कुल GDP का लगभग 1 प्रतिशत ही खर्च हो पाता है, जो दुनिया में सबसे कम है। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च करने वालों में भारत का स्थान विश्व में नीचे से 18 वें क्रम पर है। भारत में सामाजिक समानता, गरीबी, प्राथमिक शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति के आकलन पर अमर्त्य सेन द्वारा निर्देशित समिति का कहना है कि एशिया सहित दूसरे राष्ट्र जिनकी प्रति व्यक्ति आय कम है, स्वास्थ्य सेवा के मामले में भारत से आगें है। WHO के अनुसार माताओं और शिशुओं की विश्व भर मे जितनी मौतें हुई उनमें से 20 प्रतिशत से ज्यादा अकेले भारत में हैं।[10]

- **जनसंख्या वृद्धि बेरोजगारी एवं गरीबीः**–

विश्व में भारत की आर्थिक स्थिति और भविष्य को लेकर समय–समय पर विभिन्न सर्वेक्षण प्रकाशित हुए हैं, वे चिंताजनक तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। देश की 68 प्रतिशत जनसंख्या आज भी गाँव में निवास करती है, जो की निम्न आय वर्ग में आता है। 1991 के आर्थिक सुधार का दौर शुरू होने के पश्चात तो शहर एवं गाँव के मध्य की खाई और अधिक चौड़ी हुई है। इसके साथ ही वैश्विक स्तर पर भारत की वर्तमान स्थित को जानने वे समझने के लिए विकास के सामूहिक सूचकांको की रिपोर्ट का अध्ययन किया जा सकता है, जो किं विभिन्न अन्तर्राष्ट्रिय संस्थाओ द्वारा भारत व अन्य राज्यों के तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित है।

आबादी की दृष्टि से विश्व में दूसरा स्थान रखने वाले देश भारत में करीब एक करोड़ बीस लाख लोग प्रतिवर्ष श्रम बाजार में कदम रखते है। नौकरी के लिए उम्मीदवारों की कुल संख्या हर साल करीब 80 लाख होती है। इतनी संख्या में नए रोजगार का सृजन कर पाना बहुत कठिन है।[11] **सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इण्डियन इकोनॉमी** (CMIE) के द्वारा जारी आकड़ों के अनुसार लॉकडाउन की वजह से कुल 12 करोड नौकरियां चली गयी। कोरोना संकट से पूर्व भारत में कुल रोजगार आबादी की संख्या 40.4 करोड थी, जोकि संकट के बाद घटकर 28.5 करोड हो चुकी है।[12]

वर्ष 2006 से ग्लोबल हंगर रिपोर्ट जारी हो रही है, जो– जरूरत से कम भोजन मिलना, बालमृत्यु दर, कमजोर बच्चे और बाल वृद्धि में रोक को देखकर हर वर्ष एक रिपोर्ट तैयार

करती है। Global Hunger Index 2020 में 107 देशों में भारत का स्थान 94वाँ है। इस रिपोर्ट में भारत को उन 45 देशों में रखा है जिनकी भुखमरी में स्थिति बहुत ही गंभीर है। इस भूखमरी सूचकांक मे 27.2 स्कोर के साथ भारत गंभीर स्थिति में है। भारत के पड़ोसी देशों में नेपाल 73वें, श्रीलंका 64वें, बांग्लादेश–75वें, तथा पाकिस्तान 88वें, स्थान पर है।[13] (इस रिपोर्ट में अगर किसी को 0 रैकिंग दी गई है, तो भुखमरी की स्थिति बिल्कुल भी नहीं है। ज्यों–2 रैंकिग बढ़ती जाती है वह उस देश में भुखमरी की स्थिति को उजागर करती है।)

देश द्वारा अर्जित उच्च विकास दर और उल्लेखनीय आर्थिक प्रगति के बावजूद आबादी के बड़े हिस्से से घनघोर गरीबी खत्म नहीं हुई है। नस्ल जाति, धर्म के आधार पर गरीबी में भेद नहीं है। **वैश्विक आर्थिक मंच** (WEF) द्वारा जारी वैश्विक लैंगिक अन्तराल रिपोर्ट 2021 में भारत 156 देशो में 140 वें स्थान पर है (इण्डेक्स में 1 उच्चतम स्कोर होता है जो समानता की स्थिति तथा 0 निम्नतम स्कोर होता है जो असमानता की स्थिति दर्शाता है) भारत में लैंगिक अन्तराल 62.5 प्रतिशत तक बढ़ गया है। जिसका मुख्य कारण राजनीति में महिलाओं का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व, तकनीकी और नेतृत्व की भूमिका, महिला की श्रम शक्ति की भागीदारी दर में कमी, खराब स्वास्थ सेवा, पुरूषो की अपेक्षा महिला साक्षरता दर में कमी, आय असमानता आदि हैं।[14] फ्रांसीसी एन.जी.ओ. **रिपोर्टस विदआउट बॉर्डर्स** (RSF) द्वारा निर्मित 2021 **वर्ल्ड प्रेस फ्रीडम इंडेक्स** के अनुसार 180 देशों की सूची में अवरोही क्रम में भारत 142 वें स्थान पर है। 2020 में चार पत्रकारो की मौत के साथ भारत दुनिया के सबसे खतरनाक देशों में से एक है, जो पत्रकारों को अपना काम ठीक से करने में बाधक बन रहा है।[15] **मानव विकास सूचकांक** (HDI) 2020 के अनुसार भी भारत 189 देशो में 131 वें स्थान पर है।[16]

- **सांप्रदायिकता एवं जातिवाद** :– सरदार पटेल ने देशवासियों को आश्वस्त किया था कि ''भारत कभी हिंदू भारत की धारण का समर्थक नहीं बनेगा। यह भारत की आत्मा का हनन होगा।[17] सांप्रदायिक हिंसा धर्मान्धों द्वारा भड़काई जाती है, असामाजिक तत्वों द्वारा प्रेरित की जाती है, राजनैतिक सक्रियतावादियों द्वारा समर्थित होती है, निहित स्वार्थ हितों वाले व्यक्तियों द्वारा वित्तीय सहायता दी जाती है और पुलिस तथा प्रशासकों की निष्क्रियता से फैलती है।[18] नबम्बर 1946 में नौआखली से लेकर 25 अगस्त 2017 के मध्य होने वाले विभिन्न सांप्रदायिक दगों में अबतक कुल 10,138 मासूमों की जानें गयी हैं।[19]

धार्मिक उन्माद से उत्पन्न दंगों ने सामाजिक–राजनीतिक सुरक्षा पर प्रश्न चिन्ह लगा दिए हैं। इसी प्रकार जातिवाद पर आधारित संघर्ष कभी दलित संघर्ष के नाम पर उभर कर सामने आता है, कभी ब्राह्मणवाद के नाम पर और कभी ठाकुरवाद के नाम पर– और अब तो अगड़े और पिछड़ो के नाम पर समाज को कुछ इस तरह से बाँट दिया गया है कि ऐसा लगता है कि इससे देश को जल्दी मुक्ति नहीं मिलेगी।[20]

- **रैली संस्कृतिः**– भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली में इन दिनों रैली संस्कृति पनप रही है। राजनेताओं के द्वारा बड़ी बड़ी राजनीतिक रैलियाँ की जाती हैं और इस काम के लिए व्यापारियों से चंदे की उगाही की जाती है, रैली में आए लोगों के रहने और खाने के इंतजाम में करोंड़ो रूपये खर्च होते हैं, तब जाकर कोई रैली सफल होती है।[21] भारत जैसे गरीब, अशिक्षित

एवं राजनीतिक अपरिपक्वता वाले देश में रैली निकालना केवल समय, धन एवं श्रम की बर्बादी है।

कुछ आकाँक्षाऐं: अंधकार में चिगांरी:–

1947 से लेकर वर्तमान समय तक विदेशी आलोचकों ने भारतीय लोकतंत्र, उसके विकास और उसके आगे बढ़ने की क्षमता को संदेह की दृष्टि से देखा है। उन्होने यह भविष्यवाणी की थी कि भारतीय लोकतंत्र एवं भारतीय समाजवादी व्यवस्था कुछ समय के अंतराल पर ढ़ह जाएगी। इन्होंने तर्क दिया कि भारत की असंख्य जातियाँ, धर्म, भाषायी और जनजातीय विभिन्नताऐं और उसके ऊपर से इसकी गरीबी, सामाजिक विषमताऐं, आर्थिक असमानताऐं, कठोर एवं श्रेणीगत सामाजिक संरचना, विशाल बेरोजगारी इस देश की एकता एवं इसकी लोकतांत्रिक संस्थाओं को निश्चित ही समाप्त कर देंगी। भारत या तो टूट जाएगा या फिर किसी नागरिक अथवा सैन्य तानाशाह के निरंकुश शासन के माध्यम से ही एकजुट रह पाएगा।[22]

किंतु भारतीय जनमानस ने उपरोक्त समस्त धारणाओं को निराधार साबित किया है। इन भविष्यवाणियों के पीछे का तार्किक आधार भारत में विभिन्न क्षेत्रीय दलों का उदय, 1964 में नेहरू की मृत्यु, चीन एवं पाक के साथ सैन्य युद्ध, सांप्रदायिक, भाषायी एवं जातीय हिंसा, नक्सली आंदोलन, कश्मीर, उत्तर पूर्व तमिलनाडु और पंजाब में भारतीय राजनीति को अस्थिर करने वाले आंदोलनों में खोजा जा रहा था। लेकिन भारतीय राजनीति के अध्ययन कर्त्ता **मौरिस जोंस** ने 1966 में ही यह घोषित कर दिया कि **''भारत के विकास पर अत्यधिक संदेहवादी दृष्टिकोण रखना एक रिवाज सा बन गया है।**[23] सुरक्षापरिषद में भारत की दावेदारी के प्रश्न पर वर्ष 2018 में भारत की यात्रा पर आये संयुक्त राष्ट्र के महासचिव **एंटोनियो गुटैरस** ने एक विशेष साक्षातकार में कहा कि ''यू.एन. की स्थाई परिषद में भारत की उम्मीदवारी के तर्क से कोई भी इनकार नहीं कर सकता आपके पास 1.3 अरब की आबादी हैं। आप वैश्विक पावर हाउस बन रहे हैं। आप दुनिया के विभिन्न हिस्सों में चलने वाले शान्ति कार्यक्रमों के सबसे बड़े दलों में से एक हैं और आप यू.एन. की सभी केन्द्रीय गतिविधियों, जलवायु परिवर्तन सहित सभी मुद्दों पर गहराई से जुडकर अपना योगदान दे रहे हैं और सबसे बढ़कर तथ्य यह है कि भारत एक जीवंत लोकतन्त्र है।''[24]

लाख कमियों के बाद भी देश में एक मजबूत लोकतंत्र है, जिसमें जनता निरकुशं व भ्रष्ट सरकारों को सत्ता से बाहर खदेड़ना जानती है। वर्तमान में तो बदलती वैश्विक व्यवस्था का अध्ययन करने वाले संस्थानों का यह साझा आकलन है कि आने वाले कुछ दशकों में भारत विश्व की आर्थिक महाशक्ति बन सकता है। इसके लिए भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न अवयवों जैसे सार्वजनिक क्षेत्र, निजी क्षेत्र अधिरचना निर्माण संबधी आदि के साथ–साथ हमें अनुसंधान और विकास की तेज गति पकड़नीं होगी।[25] विषम परिस्थितियों के बावजूद भारत ने वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान कायम की है। राष्ट्र की यह उपलब्धियाँ अंधकार में उस प्रकाश पुँज के समान हैं जो भारत को निरन्तर आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है:–

- भारत विश्व की सबसे तेजी से बढ़ने वाली विशाल अर्थव्यवस्था है।

- वैश्विक स्त्तर पर योग के महत्व को समझकर उसे ना केवल जीवन का अंग बनाया जाना, वरन् 21 जून को वैश्विक योग दिवस भी घोषित होना।
- जलवायु परिवर्तन से लड़ाई में भारत की मुख्य भूमिका।
- उडी हमले का बदला सर्जिकल स्ट्राइक द्वारा लेकर आंतकवाद को करारा जवाब।
- न्यूनतम खर्च में मंगल ग्रह में मंगलयान भेजना। साथ ही इसरो द्वारा 104 सैटेलाइट्स को सफलता पूर्वक लाँच किया गया।
- उज्जवला योजना के अन्तर्गत ग्रामीण महिला को धुआँ एवं श्वास रोग रहित जीवन प्रदान करना।
- जम्मू कश्मीर से धारा 370 को निष्प्रभावी कर एक देश एक विधान को लागू करना।
- सवर्ण समुदाय को आर्थिक आधार पर 10 प्रतिशत आरक्षण।
- जी.एस.टी. के द्वारा एक राष्ट्र एक टैक्स की व्यवस्था करना।
- डिजिटल भुगतान को आसान बनाना।
- पुलमावा हमले का जवाब एयर स्ट्राइक के माध्यम से देना।
- चीन के साथ डोकलाम व गलवान घाटी विवादो में भारत द्वारा कड़ा रूख अपनाना।

• भारत की गिनती मानव संसाधनों के विशाल स्रोत के तौर पर भी होती है। एक ओर जहाँ ज्यादातर विकसित देश बुजुर्ग आबादी की बहुतायत की तरफ बढ़ रहे हैं। वहीं भारत 2022 तक दुनिया में सबसे ज्यादा युवाओं वाला देश बनने को तैयार है। भारत की कुल आबादी में युवाओं की हिस्सेदारी 40 प्रतिशत है। **सैंट एन्ड्रूज विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्स के एसोसिएट प्रोफेसर क्रिस ऑगडेन** का मानना है कि, 'भारत एक सौम्य देश है घरेलू समस्याओ को हल करने में धीरज से काम लेता है और अंतराष्ट्रीय स्तर पर भी हमेशा सबको साथ लेकर चलने की कोशिश करता है। फिर भी चुनौतियों का सामना करने और गंभीर मुद्दो को हल करने की उसकी समझ महाशक्ति के रूप में बहुत उपयोगी सिद्ध होगी... यह पूरे विश्व के लिए कारगर हो सकती है।'[26]

भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना

भारत के संविधान निर्माता जानते थे कि सामाजिक ऊँच नीच, सांप्रदायिक खाई तथा आर्थिक दरिद्रता हमारे जीवन की वास्तविकता है और वे भारत को ऐसे राष्ट्र के रूप में उभारना चाहते थे जहाँ सामाजिक विषमता, सांप्रदायिकता तथा गरीबी इतिहास बन जाऐं और हम अपनी राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करते हुए देश के विकास का मार्ग प्रशस्त करें। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए जिस व्यवस्था की आवश्यकता थी, उन्होने उसका प्रावधान हमारे संविधान में किया था। इसीलिए डा. अम्बेडकर ने संविधान को अंगीकृत करते समय अपने भाषण में स्पष्ट कहा था, कि यह संविधान व्यवहारिक है और इसमें वांछित लचीलापन है और इसमें देश को

शांति तथा युद्ध दोनों की ही परिस्थितियों में इकट्ठा रखने की क्षमता है। अतः यदि संविधान लागू होने के बाद स्थिति खराब होती है, तो इसके लिए संविधान नहीं वरन् मानवीय दुष्टता दोषी है।[27] अतः मानवीय सभ्यता व व्यवहार के दोषों को समाप्त करने के लिए प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की पुर्नस्थापना आज आवश्यक हो गयी है। हिंदू दर्शन एक और वर्तमान की अतीत के साथ निरन्तरता में विश्वास करता है और दूसरी ओर वर्तमान को भविष्य में अभिव्यक्त करता है।[28] भारतीय सांस्कृतिक मूल्य अनंतकालीन और चिर युवा हैं और उनकी प्रांसगिकता 21वीं सदी में भी उतनी ही है जितनी ईसा से 20 सदियों पूर्व थी। भारत का अतीत कला, साहित्य, संस्कृति विज्ञान, आध्यात्म, ज्ञान, योग चिकित्सा आदि की दृष्टि से अत्यंत स्वर्णिम व उच्च कोटि का रहा है।[29] आज के इस विध्वंसक दौर में ना केवल भारत वरन् सम्पूर्ण मानव सभ्यता का कल्याण प्राचीन भारतीय मूल्यों यथा–**अहिंसा परमो धर्मः आत्मवत् सर्वभूतेषु, सर्वधर्म समभाव** आदि को अपनाने से ही होगा।

महर्षि अरविंद कहा करते थे, ''युगों का भारत मृत नहीं हुआ है और ना उसने अपना अंतिम सृजनात्मक शब्द उच्चरित ही किया है। वह जीवित है और उसे अभी भी स्वयं अपने लिए और मानव लोगों के लिए बहुत कुछ करना है।[30]

जन–जन को आत्मोत्सर्ग के सिद्धान्त को अपनाना होगा। विशेषकर उच्च पदों पर बेदाग चरित्र वाले व्यक्तियों को आसीन करके। जैसा कि विदित है ''यथा राजा तथा प्रजा''। **भागवत् गीता** में भी कहा गया है–

''यत् यत् आचरतिः श्रेष्ठा, तत् तत् एव इतर जनः''[31]

अर्थात् जैसा आचरण समाज के उच्च पदस्थ श्रेष्ठ जन करते हैं उसका ही अनुसरण समाज का साधारण वर्ग करता है। समस्त भारतीयों को **''उत्तिष्ठ, जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।**[32] (अर्थात उठो, जागो और अज्ञानमय अंधकार से निकल कर ज्ञान प्राप्त करो) के मूलमंत्र को हृदयंगम करना होगा, तभी गुरूदेव रविन्द्र नाथ टैगोर की वाणी से निकले शब्द सार्थक सिद्ध हो सकेंगे कि ''भारत की नियति विश्व के सभी देशों का गुरू व शिक्षक बनने की है।''

❐

सन्दर्भ –

1. *सरिता, जनवरी (प्रथम), 2011, प 0 24*
2. *https://timesof india.indiatimes, 12 march 2018*
3. *https://www.drishtiias.com, राजनीति का अपराधीकरण, 29 जनवरी 2020*
4. *नरेन्द्र मोहन, आज की राजनीति और भ्रष्टाचार, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 1997, पृ.13*
5. *उपरोक्त, पृ. 21*
6. *योजना, जूलाई 2014, लेख–सुब्रत के मित्रा, चुनाव, चुनाव सुधार और मजबूत होता लोकतंत्र, पृ. 25*
7. *http://www.transparency.org>india*
8. *प्रवीण कुमार, सामाजिक क्षेत्र का बदलता स्वरूप; शिक्षा एवं स्वास्थ्य नीति के संदर्भ में, आज का भारत (अर्थ और समाज) बासुकी नाथ चौधरी, युवराज कुमार, ओरियंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2013, पृ.121*

9. अमर उजाला, 11 नबम्बर 2018, लेख–पी0 चिदम्बरम्, जो लोग पीछे छूट गए हैं।
10. रीता रानी, वर्तमान आर्थिक नीति के महत्वपूर्ण घटकः वित्तीय व्यापार तथा बुनियादी सरंचना, आज का भारत (अर्थ और समाज) पूर्वोक्त पृ.11
11. योजना, सितम्बर 2018, लेख– राजीव कुमार, रोजगार के विश्वसपनीय आँकड, पृ. 6
12. https://m.economictimes.com , कोरोना संकट के बीच क्या है भारतीय अर्थव्यवस्था कि चुनौतियां, 26 April 2020
13- https://www.globalhungerindex.org, india glogal hunger index.
14- https://livemint.com>news
15- https://www.indianexpress.com, world press freedom index: 21 April 2021, Krishna Kaushik
16- https://www.aajtek.in, 17 December 2020
17. राम आहुजा, भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2011, पृ. 247
18. नाना पालखी वाला, आज का भारत, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली, 2000 पृ. 113
19. https://en.m.wikipedia.org
20. नरेन्द्र मोहन, पूर्वोक्त
21. सुनीता त्रिपाठी, भारतीय लोकतंत्र का वर्तमान स्वरूप एक अध्ययन, भारतीय राजनीति विज्ञान ोध पत्रिका, अंक–अगस्त–दिसम्बर 2013, पृ. 336
22. बासुकी नाथ चौधरी, विनीत कुमार सिन्हा, भारत में लोकतंत्र एवं संसदीय व्यवस्था, आज का भारत (राजनीति और समाज) बासुकी नाथ चौधरी, युवराज कुमार, ओरियंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2013, पृ. 70
23. उपरोक्त, पृ. 71
24. इंडिया टुडे, राज चेंगप्पा के साथ विशिश्ट साक्षत्कार, अक्टूबर 2018, पृ. 34
25. प्रवीण, पूर्वोक्त, पृ. 116
26. https://www.casi.sas.upenn.edu, क्रि ऑगडेन, अनुवाद डा0 विजय कुमार मल्होत्रा, 18 छवअमउइमत 2019
27. अमर उजाला, 15 अगस्त 2012, आरिफ मोहम्मद खान, पैंसठ साल के सफर का इतिहास
28. राम आहूजा, भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2011, पृ. 4
29. नाना पालखी वाला, पूर्वोक्त, पृ. 117
30. नरेन्द्र मोहन, पूर्वोक्त, पृ. 17
31. भागवत् गीता 3.21
32. कठोपनिषद् 1.14

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 17–27

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

छत्तीसगढ़ के छुईखदान रियासत में राष्ट्रीय एवं सामाजिक जागरूकता

दीपक वर्मा
सहा. प्राध्यापक–इतिहास, शासकीय रानी अवंतीबाई लोधी महाविद्यालय, धुमका (छ.ग.)
E-mail ID : deepakverma9@gmail.com Mob. No. 9179571281

सारांश

छत्तीसगढ़ का छुईखदान रियासत भारतीय इतिहास में महत्वपूर्ण योगदान रखता है। सामाजिक एकता एवं राष्ट्रीय जागरूकता के केन्द्र होने के साथ–साथ यह सामाजिक, सांस्कृतिक नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण था। इस रियासत में सभी वर्गों के लिए शिक्षा के पर्याप्त अवसर उपलब्ध थे। शिक्षित वर्ग और शासक वर्ग अपनी साहित्यिक व आध्यात्मिक अभिरुचियों से लिए समर्पित थे। इस रियासत में स्वाधीनता आंदोलन अवधि में रियासती प्रजा द्वारा दोहरे दबाव के बावजूद सभी गतिविधियों में सत्याग्रह पूर्ण भागीदारी दिए। यहां हुई स्वदेशी खादी प्रचार कार्य, शराबबंदी आंदोलन, अछूतोध्दार कार्य, लगान बंदी आंदोलन, जंगल सत्याग्रह और किसान आंदोलन इन आंदोलनों में सम्मिलित होने के लिए नैतिक और सामाजिक मूल्यों के साथ जागरूकता, समर्पण, सात्विकता और दृढ़तापूर्वक अहिंसा और सत्याग्रह का पालन भारतीय इतिहास में अद्वितीय स्थान रखता है। इन गतिविधियों का नेतृत्व ना केवल समाज के उच्च वर्ग के व्यक्तियों द्वारा किया गया अपितु निम्न वर्ग के लोग भी नेतृत्व किए, साथ–साथ औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध सत्याग्रहियों में किसान, मजदूर, स्त्रियों की निर्भीकतापूर्वक भागीदारी इनके आत्मबल और जन चेतना को रेखांकित करती है।

मूल शब्द – छत्तीसगढ़, छुईखदान रियासत, सामाजिक जागरूकता, शराबबंदी, अछूतोध्दार, खादी प्रचार, नैतिक मूल्य, जंगल सत्याग्रह, लगान बंदी, सत्याग्रह, राष्ट्रीय जागरूकता ।

शोध प्रविधि– अभिलेखागारीय, समाजशास्त्रीय एवं विश्लेषणात्मक प्रविधि।

मानव विकास का क्रमबद्ध एवं सुव्यवस्थित जानकारी प्राप्त करने के लिए अतीत का गहन अवलोकन एक श्रेष्ठ माध्यम है। इसके माध्यम से हम मानव समुदाय के सामाजिक,

राजनीतिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक ढांचा का विस्तार से क्रमानुसार अध्ययन कर विभिन्न युगों की अलग–अलग विशिष्टताओं का जानकारी प्राप्त करते है। साथ–साथ मानव समाज के अलग–अलग कालखण्ड में व्यवस्थाओं, इन व्यवस्थाओं में होने वाली परिवर्तनों व इन परिवर्तनों के उत्तरदायी कारकों का सूक्ष्मता से जांच करते है। भारतीय राष्ट्रीय इतिहास व समाज में छत्तीसगढ़ के इतिहास व समाज की अपनी विशिष्ट पहचान रही है। छत्तीसगढ़ के सिंघनपुर, कबरा पहाड़, चितवा डोंगरी जैसे अनगिनत गुफाओं से प्राप्त असंख्य चित्रकारी तथा पत्थर के औजार जैसे पुरातात्विक प्रमाण मानव सभ्यता व संस्कृति के उद्‌भव के प्रागैतिहासिक स्त्रोतों के रूप में चिन्हाकिंत किए जा सकते है। छत्तीसगढ़ में कलचुरियो के सन् 1000 ई. से सन् 1741 ई. तक दीर्घकालिक शासन के बाद मराठा शासन सन् 1758 ई. से 1853 ई. तक रही। इसके बाद छत्तीसगढ़ प्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश शासन के दायरे में आ आया। ब्रिटिश शासन ने छत्तीसगढ़ में कलचुरी एवं मराठा भाासनकाल से प्रारंभ जमींदारी व्यवस्था को नया रूप प्रदान कर बड़े व समृद्ध जमींदारी को देशी रियासत का दर्जा प्रदान किया। इस प्रकार ब्रिटिश शासन काल में छत्तीसगढ़ में कुल चौदह रियासतें अस्तित्व में थी। छत्तीसगढ़ के उत्तर में सरगुजा, कोरिया, उदयपुर, चांग–भखार एवं जशपुर रियासत थी, दक्षिणी भाग में बस्तर व कांकेर, पूर्व में सक्ती, रायगढ़ एवं सारंगढ़ तथा राज्य के पश्चिमी भाग में कवर्धा, खैरागढ़, राजनांदगांव और खुईखदान रियासतें थी। इन रियासतों में रियासत के शासक ब्रिटिश प्रभुसत्ता को स्वीकार करते हुए शासन करते थे। स्वाधीनता आंदोलन अवधि में भारत भर के अलग अलग ब्रिटिश प्रांतों व विभिन्न रियासतों के समानांतर छत्तीसगढ़ के देशी रियासतों में भी स्वाधीनता के लिए समाज में जन चेतना व राष्ट्रीय चेतना के फलस्वरूप विभिन्न गतिविधियां संपन्न हुई जो ना केवल स्थानीय महत्व की थी अपितु राष्ट्रीय महत्व का था। छत्तीसगढ़ इतिहास के हर दौर में अपनी सामाजिक मूल्यों व मानवीय मूल्यों के साथ एक प्रकाश स्तंभ की तरह रहा है जिसका एक उदाहरण छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव जिले की छुईखदान रियासत में विद्यमान सामाजिक जागरूकता है इनके अलावा यहां राष्ट्रीय भावनापूर्ण गतिविधियां आज भी प्रासंगिक है एवं समाज के लिए समरसता पूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करती है।

छत्तीसगढ़ में छुईखदान रियासत 21^0 30′ उत्तरी अक्षांश से 21^0 38′ उत्तरी अक्षांश तक और 80^0 53′ पूर्वी देशांतर से 81^0 11′ पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित थी। इसका क्षेत्रफल 154 वर्ग मील था।[1] इसका नाम छुईखदान, छुई (छुही) अर्थात् एक प्रकार की सफेद मिट्टी जो मिट्टी की दीवाल को पुताई करने के लिए प्रयुक्त होती थी और खदान से मिलकर बना है।[2] यह एक छोटी रियासत थी जो चार पृथक खंडो छुईखदान, बोरतरा, बिदोतरा और सिमई को मिलाकर बनी है। रियासत का प्रारंभिक इतिहास अस्पष्ट है, माना जाता है कि रियासत का केंद्र बिंदु कोन्डका क्षेत्र था, इसे महंत रूपदास ने परपोड़ी के जमींदार से लगभग अठारहवीं शताब्दी के मध्य स्वयं द्वारा दिए ऋण के एवज में प्राप्त किये थे। इसके बाद तुलसीदास ने शासन किया जिसे मराठा शासन ने जमींदार के रूप में मान्यता प्रदान किया। इसके बाद लक्ष्मणदास उत्तराधिकारी हुए, इसके बाद श्याम किशोर दास गद्दी पर आसीन हुए, फिर इनका पुत्र राधा वल्लभ किशोर दास उत्तराधिकारी हुए। इनके बाद दिग्विजय किशोर दास शासक रहे। दिग्विजय दास के बाद महंत भूधर किशोर दास उत्तराधिकारी हुए। इसके बाद महंत ऋतुपर्ण

किशोर दास शासक बने। इस रियासत की 75 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि पर निर्भर थी, शेष नौकरी या दिहाड़ी मजदूरी करते थे।

छुईखदान रियासत में वैष्णव मतानुयायी बैरागी राजाओं का शासन था यहां के शासकों द्वारा रोजगार, शिक्षा तथा साहित्य के क्षेत्र में प्राथमिकता पूर्ण कार्य किया गया जिससे इस रियासत के नागरिकों में पर्याप्त जागरूकता थी। यद्यपि इस रियासत का आकार एवं स्वरूप छोटा था किंतु यहां के राजाओं का बैरागी होने के कारण आध्यात्मिक दृष्टिकोण से इसका अलग महत्व था। सामाजिक और सांस्कृतिक जागरूकता के फलस्वरूप यहां प्रजा में परस्पर सहयोग एवं सहभागिता की संचेतना से यह रियासत स्वाधीनता आंदोलन में भी पुरी तन्मयता से संलग्न थी। छुईखदान रियासत के लोकजीवन में सहजता, स्वाभाविकता और आडंबरहीनता के तत्व प्रचुर मात्रा में थी। इस स्टेट में गोड़ जनजाति जो कुल आबादी का 17 प्रतिशत थी, फिर 10 प्रतिशत जनसंख्या लोधी जाति की थी जो बहुत अच्छे कृषक होते है, सतनामी, तेली, पनका (बुनकर), मरार, अहीर (चरवाहे), लुहार, धोबी, नाई, ढीमर, महरा (मराठी बुनकर), कलार, ब्राम्हण, राजपूत, बैरागी, कुरमी, सोनार, कायस्थ और बनिया प्रमुख जातियां थी। इनके अलावा मुसलमान, क्रिश्चियन, जैन धर्म और कबीर पंथी अनुयायी भी यहां निवास करती थी। इस रियासत में लगभग सभी धर्मों को समान दृष्टि से देखा जाता था और धार्मिक या सामाजिक संघर्ष या टकराव का कोई उदाहरण इस रियासत में नहीं मिलता है। छुईखदान रियासत की संपर्क भाषा छत्तीसगढ़ी थी, इस भाषा उत्पति अर्ध मागधी से हुई थी। इसके अलावा यहां की प्रमुख जनजाति द्वारा गोड़ी भाषा बोली जाती थी।

शिक्षा मानव सभ्यता के विकास का सर्वप्रमुख साधन है। छुईखदान रियासत के शासक शिक्षा प्रेमी थे, इन्होने समय अनुसार शिक्षा के प्रचार–प्रसार में अपना भरपूर सहयोग और योगदान प्रदान किया था। महंत राजा लक्ष्मण दास जो स्वयं काफी विद्वान व्यक्ति थे, इनके शासन अवधि में इस रियासत में प्रारंभिक शिक्षा की नींव रखी गई थी जो परवर्ती शासको के शासन अवधि में धीरे धीरे–धीरे विकसित होती चली गई। छुईखदान में 1901 में शिक्षा का प्रतिशत 6.9 प्रतिशत थी।[3] सन् 1905 ई. में इस रियासत से 5 रूपये की छात्रवृत्ति युवाओं को कृषि कक्षाओं में प्रशिक्षण में प्रोत्साहन हेतु दी जाती थी, जिसकी प्रशिक्षण संस्थान नागपुर में थी। महंत भूधर किशोर दास ने इस रियासत में स्त्री शिक्षा बढ़ाने की ओर बहुत ध्यान दिये थे। इनके शासनकाल में ही इस रियासत में पुत्री शाला प्रारंभ किया गया था। रियासत में शिक्षा विभाग के स्कूलों के निरीक्षण के लिए अलग से विभाग निरीक्षक की नियुक्ति की गई थी। इस रियासत के अधिकतर शासक अपनी विशेष अभिरुचियों के लिए जाने जाते थे भक्ति संगीत, शिक्षा और साहित्य के प्रति शासको की अभिरूचि इस रियासत को विशिष्टता प्रदान करती थी। इस रियासत के प्रथम शासक महंत रूपदास शिक्षित, वीर, राजकाज के अनुभवी तथा धर्म निष्ठ व्यक्ति थे, वे अवकाश के समय ईश्वर की आराधना और अध्यात्मिक चिंतन में लीन रहते हुए उस समय के मिश्रित भाषा साहित्य में भजन तथा कविता की रचना किया करते थे। सन् 1867 में अंग्रेजी शासन ने महंत लक्ष्मणदास को इकरारनामा के अनुसार 'फ्युडेटरी चीफ' के अधिकार प्रदान किये थे, इन्हें अनेक अधिकार तो मिले किंतु इकरारनामा के अनुसार अंग्रेजों ने राजाओं के अनेक वंशानुगत अधिकारों को छीन लिया।[4]

भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन की दासता से मुक्ति के लिए असंतोष के स्वर छुईखदान रियासत से भी मुखरित हुए थे। भारत के स्वाधीनता संग्राम में छुईखदान रियासत की प्रजा ने शेष भारत के प्रजा की तरह स्वाधीनता समर में कंधे से कंधा मिलाकर काम किया। ठाकुर प्यारेलाल जिन्होने रायपुर एवं राजनांदगांव में स्वतंत्रता की ज्योति जलाई, इनके प्रयासों से छुईखदान में भी स्वतंत्रता की चेतना प्रबल हुई। छुईखदान में स्वाधीनता की चेतना सन् 1919 ई. के लगभग बलवती हुई। यहां सन् 1919 ई. में राजा महंत भूधर किशोर दास के वैचारिक विरोधी महंत रामदास के द्वारा 'सेवा दल 'नामक गठित की गई । इसी वर्ष उन्होंने एक 'बालचर दल' भी गठित किए। सेवादल के माध्यम से स्वदेशी का प्रचार और सेवा कार्य होता था। स्वतंत्रता सेनानी गोवर्धन वर्मा उस समय विद्यार्थी थे। वे बालचर दल के सदस्य बन गये और उन्होंने विद्यार्थी जीवन से ही खादी पहनना शुरू कर दिया था।

जलियांवाला बाग हत्याकांड, रॉलेट एक्ट, भारत शासन अधिनियम 1919 के प्रतिकार में गांधी जी ने ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध प्रथम अहिंसक आंदोलन चलाने का निश्चय 1920 में किये। इस संबंध में दिसंबर सन् 1920 में नागपुर में कांग्रेस का अधिवेशन संपन्न हुई। कांग्रेस के इस नागपुर अधिवेशन में छत्तीसगढ़ से पंडित सुंदरलाल शर्मा, वामन राव लाखे, ई. राघवेन्द्र राव, पं. रविशंकर शुक्ल, ठाकुर प्यारे लाल सिंह और ठाकुर छेदीलाल सिंह के साथ छुईखदान रियासत से भी लोग अधिवेशन में सम्मिलित हुए, जिससे यहां भी जन चेतना की लहर आयी। रियासती जनता में जन जागरण लाने के लिए' सेवा समाज' नामक संस्था की भी स्थापना की गई, इस संस्था के माध्यम से जन जागरण का कार्य किया गया। जीवों की रक्षा, लोगों को सहायता पहुंचाना, धार्मिक कार्य, स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार कार्य किया गया। तात्कालिक शासक ने इन संस्थाओं का चेतावनी दी, फिर भी ये संस्थाएं काम करते रहे। गांधीजी द्वारा चलाए जा रहे असहयोग आंदोलन के समय इस रियासत में कोई विशेष आंदोलन तो नहीं हो पाया लेकिन घरों के दीवारों पर ब्रिटिश विरोधी नारे लिखे गए।

अप्रैल 1920 में राजनांदगांव में मजदूरों की 36 दिनों की ऐतिहासिक हड़ताल और 20–21 दिसंबर 1920 को महात्मा गाँधी के प्रथम छत्तीसगढ़ आगमन ने छत्तीसगढ़ रियासत के लोगों को आंदोलन में भाग लेने के लिए और अधिक प्रेरित किया। सन् 1921 में छुईखदान में 'गौ सेवा संघ' की स्थापना की गई। सन् 1929 ई. में लाहोर में कांग्रेस के अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव पारित होने पर इस क्षेत्र में भी आजादी का जोश समाज के सभी वर्गों में उमड़ गया। इस प्रकार यहां 1930 तक असंगठित रूप से विभिन्न गतिविधियां चलती रही।

खादी प्रचार समिति –

सन् 1930–31 में गांधी जी ब्रिटिश हुकुमत के कानूनों के तोड़ने के लिए सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारंभ किया तो इस आंदोलन की लहर से जागृत छुईखदान में भी राष्ट्रीय कार्यक्रमों के क्रम में विदेशी कपड़ों का बहिष्कार, शराब बंदी के लिए धरना–प्रदर्शन, पिकेटिंग के लिए आंदोलन चलाया गया । सन् 1930 में छुईखदान रियासत में एक खादी भंडार खोला गया, खादी का प्रचार हेतु 'खादी प्रचार समिति' का गठन किया गया। गोवर्धन राम वर्मा का इन गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका था । खादी के अधिक से अधिक उपयोग के माध्यम से

स्वदेशी के प्रति जागरूक करने और मितव्ययिता पूर्ण सात्विक जीवन निर्वाह हेतु प्रेरित करने का सुविचारित प्रयास किया गया। खादी प्रचार समिति के सदस्यों को निम्न उद्देश्य के साथ कार्य संचालन करना आवश्यक होता था –

1 .इस समिति का पहला पहला ध्येय खादी पहनने के लिए अपने परिवार व अपने परिचितों को इसके प्रयोग के महत्व को समझाने हेतु कार्य करना।

2. कुछ सदस्य हर एक सामाजिक कार्य में सम्मिलित होकर मादक पदार्थों के सेवन का सामाजिक बहिष्कार कराने का प्रयास करें।

3. विदेशी वस्त्र बिक्री करने वालों को विदेशी वस्त्र बिक्री न करने और खरीददारों को विदेशी वस्त्र न खरीदने का महत्व बताकर सविनय अवज्ञा हेतु प्रेरित करना।

4. जब समिति के इन कार्यों से परिवर्तन परिलक्षित ना हो तो तब अवज्ञा के लिए पिकेटिंग की आवश्यकता होगी।

5. यह समिति सामाजिक अछुतोध्दार का भी पक्षपाती है जब कोई अछूत भाई स्वदेशी वस्त्र सर्वांग धारण करे और अपने तथा अपने परिवार के लोगों में मादव पदार्थों का प्रयोग बिल्कुल ही बंद कर दे तब यह समिति उन्हें समिति में उचित स्थान देकर अपने स्तर पर सम्मान प्रदान करें ।[5]

शराब बंदी

महात्मा गाँधी के सिद्धांतों का पालन करते हुए इस रियासत में सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौर में और उसके बाद भी शराब बंदी प्रयास लगातार जारी रहा, शराब बंदी स्वयं सेवक हस्ताक्षर युक्त प्रतिज्ञा पत्र भरता था और उसमें दिये गये शर्तों का पुरी तरह पालन करने के लिए एक हस्ताक्षर युक्त प्रतिज्ञा पत्र भरकर कांग्रेस कमेटी के पास भेजता था। इस पत्र में निम्न चार शर्तों का उल्लेख रहता था –

1. मैं शराब बंदी के लिए स्वयं सेवक का कार्य करूंगा और इस काम में जो कुछ भी तकलीफ होगी शांतिपूर्ण सहन कर लुंगा ।

2.यदि इस काम को करने में मुझे जेल भी जाना पड़े तो जाउंगा और अपने परिवार के लिए कांग्रेस कोश से किसी भी प्रकार की आर्थिक सहायता की आशा नहीं रखूंगा।

3. मैं अहिंसा व्रत का पूरी तरह पालन करूंगा।

4. मैं इस आंदोलन के उन नेताओं का आज्ञा जिन पर संचालन की जिम्मेदारी होगी बिना किसी प्रश्न या बहस के तत्काल मानूंगा।[6]

इन खादी प्रचार, शराब बंदी और विदेशी कपड़ो की होली जलाने तथा आंदोलनकारियों को आर्थिक मदद पहुंचाने के आरोप में राजद्रोह की दफा 124 (अ) के तहत बुधराम पोद्दार को साथियों सहित गिरफ्तार किया गया। सभी गिरफ्तार आंदोलनकारियों को छुईखदान जेल में बंदी बनाकर रखा गया, जहाँ उन्हें अनेक यातनाएं दी गयी, कुछ को जमानत दी गई पर गोवर्धन राम वर्मा, नंदलाल पोद्दार, सियाराम वर्मा एवं झुमुक राम महोबिया को जमानत पर भी

रिहा नहीं किया गया। अंततः ठाकुर प्यारेलाल के प्रयास के बाद इन्हे जमानत प्राप्त हो पाई। आंदोलनकारियों की गिरफ्तारी ने आग में घी डालने का काम किया और छुईखदान रियासती क्षेत्र में जन जागरण का नया दौर प्रारंभ हुआ। सन् 1933 में छुईखदान में एक सार्वजनिक पुस्तकालय की स्थापना की गई जहां नवयुवक व समाज के जागरूक लोग प्रतिदिन इकट्ठा होते थे और आगामी आंदोलन के लिए रणनीति तय करते थे। स्वदेशी वस्त्रों के प्रचार प्रसार के इसी दौर में आंदोलनकारियों ने चरखा चलाकर सूत कातने का कार्य भी शुरू कर दिया। जेल से छुटने के बाद गोवर्धन राम वर्मा एवं उनके साथियों ने छुईखदान रियासत में रिश्वतखोरी और अन्याय के विरुद्ध जन मानस तैयार करने का प्रयास प्रारंभ कर दिये। यहां के जागरूक जनता रियासती शासको के गलत कार्यों का शिकायत अंग्रेज पालिटिकल एजेंट को भेजते थे। ये पालिटिकल एजेंट ही रियासती मामलो का सबसे बड़ा अधिकारी होता था। गोवर्धन राम वर्मा के ने छुईखदान में 'हिन्दुस्तानी लाल सेना' नामक संगठन की स्थापना की। इसके प्रमुख सदस्य के रूप में जागरूक लोग तत्परता से जुड़ गये इनमें प्रमुख थे झाडूराम, भुलउ राम, रामगुलाल, एवं सियाराम पोद्दार।

सन् 1931 में नृत्य गान करने वाली लड़कियों को राजमहल ना जाने की ना केवल समझाइश दिए बल्कि उनके अस्मिता की रक्षा के उद्देश्य से श्री सियाराम वर्मा, श्री नंदलाल पोतदार, श्री वल्लभदास एवं श्री गोवर्धन राम वर्मा ने उन्हें रियासत से बाहर सुरक्षा के साथ भिजवा दिया। इस कार्य के लिए इनको गिरफ्तार कर लिया गया। इन पर धारा 124 के तहत राजद्रोह का मुकदमा चला। इन पर जारी पेशियों के समय अदालत में कड़ा पहरा लगा दिया जाता था। रियासती जनता ने तंग आकर पं. जवाहर लाल नेहरू को पत्र लिखा, नेहरू जी ने मुकदमें के पैरवी के लिए नागपुर के बैरिस्टर अभ्यंकर, बैरिस्टर छेदीलाल और सेठ बाबू गोविंद दास को पत्र लिखा। सात माह बाद श्री सियाराम वर्मा, श्री वल्लभदास वर्मा, श्री नंदलाल पोतदार और श्री गोवर्धन राम वर्मा को जमानत देकर रिहा कर दिया गया। सियाराम वर्मा और गोवर्धन वर्मा को 100–100 रूपये का जूर्माना एवं तीन माह की सजा दी गई। नृत्य गान को समर्पित नव युवतियों की अस्मिता की रक्षा के लिए इन्होने रियासती प्रशासन का जुल्म सहकर अद्वितीय जन जागरण और समर्पण की भावना का परिचय दिया। छुईखदान में रियासती प्रशासन द्वारा किसानों, काश्तकारों से बेगार लिया करती थी, इसके संबंध में जनता का एक प्रतिनिधि मंडल पालिटिकल एजेंट से 24 अक्टूबर 1934 को मिला, परंतु इस समस्या का कोई उचित हल निकल सका और रियासती जनता पर अत्याचार व शोषण जारी रहा। रियासत में दिनों दिन खुशामदी और सरकार परस्त कर्मचारियों की संख्या बढ़ती जा रही थे, वे एशो आराम के सामान जुटाने लगे और अलग–अलग उपाय अपनाकर प्रजा से पैसा वसुलने का काम करने लगे। कोंडका गाव में मेला लगाने म्यूनिसपालिटी के सदस्यों से चंदा मांगा गया, परंतु जब उन्होंने चंदा देने से इंकार किया तो सदस्यगणों के कार्यो में लापरवाही बरतने का कारण बताकर म्यूनिसपालिटी कमेटी भंग कर दी गई और एक नयी कमेटी बनायी गई, जिसमें आधे जनता की ओर से तथा प्रेसीडेंट सरकारी सदस्यों में से नियुक्त किये गए। रियासत में निवास करने वाले जनता, दुकानदारों से जबरन मेला टैक्स वसूल किया गया। इसका विरोध सविनय अवज्ञा सत्याग्रह के माध्यम से किया गया, इसमें अंततः रियासत के सत्याग्रहियों को सफलता प्राप्त हुई।[7]

सन् 1937 में कांग्रेस का अधिवेशन हरिपुरा में हुआ। इस अधिवेशन में भाग लेने के लिए श्री गोवर्धन राम वर्मा गये थे, वहां पर उन्होंने रियासती जनता पर हो रहे अत्याचार को प्रस्तुत किया। ठाकुर प्यारेलाल सिंह, रामनारायण मिश्र 'हर्षुल' पं. रामदयाल तिवारी, हनुमान प्रसाद आदि ने उन्हें यह सलाह दी कि संगठन बना कर रियासती अत्याचार के विरूद्ध आंदोलन का बिगुल बजायें। हरिपुरा कांग्रेस से वापस आने के बाद श्री गोवर्धन राम वर्मा व रियासत के अन्य कार्यकताओं ने राजा के विरूद्ध गतिविधियां शुरू की। इस रियासत में जनता में राजनीतिक चेतना को बढ़ाने, अत्यधिक करों व शोषण का विरोध करने के लिये राजनीतिक संगठन की आवश्यकता महसूस की गई। इस संबंध में रियासत के जागरूक कार्यकर्ताओं ने प्रयत्न प्रारंभ किया। हरिपुरा अधिवेशन में ठाकुर प्यारे लाल सिंह एवं श्री राम नारायण मिश्र 'हर्षुल' से प्रोत्साहन के बाद रियासत में 20 नवंबर 1938 को स्टेट कांग्रेस की स्थापना की गई। इस राजनीतिक संगठन का प्रथम अधिवेशन 26 नवंबर 1938 को नर्मदा खैरा में किया गया। इसमें बड़ी संख्या में ग्रामीण जनता व कार्यकर्ता सम्मिलित हुए। इस अधिवेशन की अध्यक्षता श्री रामनारायण मिश्र 'हर्षुल' ने किया। इनके नेतृत्व में रियासती जनता राष्ट्रीय आंदोलन के कार्यक्रमों से पूर्णरूपेण जुड़ गया। छुईखदान स्टेट कांग्रेस ने राजा व उसके अधिकारीयों के सामने निम्न मांगे प्रस्तुत किए –

1. छुईखदान रियासत की जनता को राज्य सिंहासन के अंतर्गत इंग्लैंड की भांति उत्तरदायित्वपूर्ण शासन प्रदान करना चाहिए।
2. किसानों की दशा सुधारने के लिए लगान आधा किया जाए।
3. रियासत में नगरपालिका एवं जिला काउंसिल जैसी संस्था होनी चाहिए।
4. रसद, बेगार व भेंट बंद किया जाए।
5. रियासत की ओर से चरी और निस्तारी की सुविधाएं निःशुल्क प्रदान की जाएं।
6. जनता को संगठन निर्माण, भाषण, लेखन तथा संस्थाओं की स्थापना की स्वतंत्रता दी जायें।
7. किसानों और मालगुजारों को अपनी जमीन व माल पर मालिकाना हक दिया जायें।
8. भ्रष्ट व्यक्तियों को कर्मचारी के रूप में नियुक्ति न दी जाये, इनके नियुक्ति और निकालने के लिए प्रजा की स्वीकृति आवश्यक हो।
9. प्रजा में विद्या मंदिर और वर्धा योजना द्वारा शिक्षा का प्रसार करना चाहिए।
10. प्रजा के प्रतिनिधियों को स्टेट म्युनिसिपल्टियों में वे सब अधिकार रहे जो खालसा में है।[8]

यद्यपि छुईखदान में राष्ट्रीय जनमत की लहर प्रवाहित हो रही थी, कांग्रेस का संगठन हो चुका था। किसान और जनता राजा के शोषण के खिलाफ कांग्रेस के झंडे तले एकत्रित हो चुके थे किंतु स्टेट कांग्रेस के नेतृत्व में रियासती जनता के इन मांगों को राजा व दरबार ने नजरअंदाज किया, ऐसी स्थिति में जनता अपनी मांगो की पूर्ति के लिए आंदोलित हो उठी। इस प्रकार इस छोटी सी रियासत में स्वतंत्रता आंदोलन ने व्यापक और उग्र रूप धारण कर लिया। पूरे रियासत में आजादी का बिगुल बज उठा, हड़ताले होने लगी। इस रियासती आंदोलन का

मुख्य मांग उत्तरदायी शासन की मांग थी, उग्र होते इस आंदोलन की व्यापकता को देखते हुए रियासती प्रशासन ने आंदोलन को कुचलने के उद्देश्य से 26 नवंबर 1938 को सभा और जुलुस के आयोजन पर प्रतिबंध लगा दिया गया।

खैरा नर्मदा जंगल सत्याग्रह

रियासती प्रशासन के अत्याचार, शोषण और दमन के विरूध्द स्टेट कांग्रेस ने आंदोलन चलाने का निश्चय किया इसके अलावा जंगलो पर ब्रिटिश हुकुमत का हस्तक्षेप ग्रामीणों को स्वीकार नहीं था जंगल कानून के विरोध में जागरूक लोगो ने खैरा नर्मदा में एकत्रित होकर एक व्यापक आंदोलन प्रारंभ किया। शासन ने वनों के उपयोग पर प्रतिबंध लगा दिया था एक ओर जहाँ आरक्षित जंगलो में ग्रामीणों को कम मजदूरी पर काम करना पड़ता था, वही दूसरी तरफ उन्हें निस्तारी के लिए जलाऊ लकड़ी का एक टुकड़ा भी लाने की अनुमति नहीं थी, कांग्रेस ने जंगल सत्याग्रह आंदोलन को स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़ने का फैसला लिया। इस रियासती आंदोलन का नेतृत्व श्री रामनारायण मिश्र 'हर्षुल' ने किया, जिसमें श्री गोवर्धन राम वर्मा, समारूराम महोबिया, रामगुलाम पोतदार, झाडूराम महोबिया, पूनम चंद साखला, दामोदरलाल दादरिया, राजाराम यादव, हरदेव लोधी, अमृत लाल महोबिया आदि ने सक्रिय रूप से भाग लिया। सत्याग्रही प्रतिदिन रियासती प्रशासन द्वारा लगायी गयी धारा 144 का उल्लंघन करते हुए नदी पार जाकर रक्षित वन से लकड़ी व घास काट कर अपनी गिरफ्तारी देते थे। 14 जनवरी 1939 को रियासत के पुलिस दल ने झिलमिली जंगल पहुंच कर 13 जंगल सत्याग्रहियों को गिरफ्तार किया। यह क्रम लगातार 15 दिनों तक चलता रहा, शीघ्र ही इस आंदोलन ने उग्र रूप धारण कर लिया। एक माह के भीतर 300 लोगो को जेल में बंद कर दिया गया। इन बंदी सत्याग्रहियों से जेल ठसाठस भर गयी। समारू बरई इस सत्याग्रह का प्रमुख नेता था। कांग्रेस के इस आंदोलन को समाप्त करने के लिये पॉलिटिकल एजेंट ने राजा साहब से फौज मंगा कर आंदोलन को कुचलने की पहल की। जब राजा साहब ने आंदोलन को दबाने से इन्कार किया तो उसे अयोग्य करार देकर राजकाज से अपदस्थ कर रियासत का प्रशासन ब्रिटिश दीवान श्री एस. के. श्रीवास्तव को सौंप दिया गया। ब्रिटिश प्रशासन द्वारा नियुक्त नये दीवान ने आंदोलन को समाप्त करने के लिये 200 सिक्ख रेजिमेंट का दस्ता बुला लिया। फौजी सिपाहियों ने लोगो को आतंकित कर आंदोलन का दमन किये। अनेक सत्याग्रहियों की गिरफ्तारीयां हुई और सजा दी गई। श्री झाडूराम महोबिया को एक माह का कारावास, श्री भोलाराम को सात माह का कारावास, श्री समारू राम महोबिया व श्री गोवर्धन राम वर्मा को लगभग 7 माह का कठोर कारावास दिया गया।नये दीवान साहब ने आंदोलन को विफल करने के लिये स्टेट कांग्रेस में फूट डालने की नाकाम कोशिश की। उसने ब्रिटिश मधुर नीति का प्रयोग कर सेठ पूनमचंद सहित स्टेट कांग्रेस के 14 प्रमुख कार्यकर्ताओं को रिहा कर दिया। कुछ समय बाद श्री रामनारायण मिश्र 'हर्षुल' जी के निर्देश पर उन्होंने पुनः अपनी गिरफ्तारी दे दी।

लगान बंदी आंदोलन

13 फरवरी 1939 को नर्मदा खैरा में श्री रामनारायण मिश्र 'हर्षुल' के नेतृत्व में किसानों की आमसभा हुई, जिसमें नये सभापति महोदय ने दीवान की दुरंगी नीति की कटु आलोचना

की। इस सभा में दीवान साहब के नीतियों के खिलाफ लगान बंदी आंदोलन शुरू करने की सर्वसम्मति से प्रस्ताव पारित कर घोषणा की गई। लगान बंदी घोषणा करने वाला यह आंदोलन 'बारदोली' के बाद दूसरा स्थान रखता है।[9] सर्वप्रथम समारूराम ने जय जयकार के साथ झंडा गीत गायन करते हुए 10 स्वयंसेवकों के साथ छुईखदान की सीमा में घुसने का प्रयास किया। समारू राम व अन्य 10 स्वयंसेवकों को रियासत की सीमा में गिरफ्तार कर लिया गया।[10] कुछ समय बाद समारू राम को छोड़कर गिरफ्तार शेष स्वयंसेवकों को रिहा कर दिया गया। रियासती लगान बंदी आंदोलन से रियासत प्रशासन तंग आ गया, जो सत्याग्रही गिरफ्तार किये जाते थे, उन्हें रियासत में प्रवेश करने के पहले ही रिहा कर दिया जाता था। इस बीच कुछ देशद्रोहियों ने आंदोलन को समाप्त करने की कोशिशें की, पर वे अपने मकसद में सफल नहीं हो सके। लगातार आंदोलन के बाद भी जब कोई निर्णय नही हो पा रहा, तब रियासती जनता ने आंदोलन में कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के हस्तक्षेप की आवश्यकता महसूस की। इसी सिलसिले में छुईखदान रियासत के स्टेट कांग्रेस के अध्यक्ष श्री रामनारायण मिश्र 'हर्षुल' महात्मा गांधी जी से मिलने दिल्ली गये। 5 अप्रैल 1939 को उन्होंने महात्मा गांधी से मुलाकात की। उन्हे रियासती आंदोलन की स्थिति से गांधी जी से मुलाकात की, उन्हें रियासती आंदोलन की स्थिति से अवगत कराया। इस समय गांधी जी अस्वस्थ थे, फिर भी उन्होंने दिलचस्पी से सारी व्यथा सुनी। दोनों के बीच इस विषय पर 25 मिनट तक बातचीत हुई। हर्षुल जी ने गांधी जी से कहा कि छुईखदान की जनता आंदोलन चलाने के पक्ष में है, क्योंकि वहां के राजा को आंदोलन के कारण ही अपदस्थ किया गया है। इस समय आंदोलन रोकना जन आंदोलन की कमजोरी मानी जाएगी। इस पर गांधी जी ने कहा ''इस समय आंदोलन स्थगित कर देना उचित है।'' इस प्रकार गांधी जी के सलाह के अनुसार छुईखदान रियासत का सत्याग्रह आंदोलन स्थगित कर दिया गया। आंदोलनकारी राजबंदी जेल से मुक्त कर दिए गए। छत्तीसगढ़ की एक छोटी सी रियासत का यह आंदोलन एक अहिंसात्मक सत्याग्रह था। इसकी तुलना सरदार वल्लभ भाई पटेल के बारदोली सत्याग्रह से की जा सकती है। इस समय मध्यप्रांत में कांग्रेस मंत्रीमंडल सत्तारूढ़ था, इसके अनेक नेतागण यहां सत्याग्रह के पक्षधर थे, परंतु गांधी जी के सलाह को ही अंतिम रूप से माना गया।[11]

जनवरी सन् 1940 में राजधानी मुख्यालय में स्टेट कांग्रेस का द्वितीय अधिवेशन आयोजित करने का निर्णय लिया गया परंतु रियासती प्रशासन ने अधिवेशन पर प्रतिबंध लगा दिया साथ ही संपूर्ण रियासत में धारा 144 लगा दी गई। इस प्रतिबंध को तोड़ने के लिए श्री गोवर्धन राम वर्मा, श्री रतनचंद जैन ने पूरा प्रयास किया पर सफल ना हो सके। बाहर से आने वाले नेताओं के रियासत प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया गया। बाद में ठाकुर प्यारेलाल सिंह जी के प्रयासों से 26 एवं 27 जून 1940 को यह आयोजन किया गया। इस अधिवेशन में ठाकुर प्यारे लाल सिंह, राम नारायण मिश्र 'हर्षुल' एवं क्रांतिकुमार भारतीय ने भाग लिया। रियासती प्रशासन के दमन, बार बार व्यवधान व सभा स्थगित किये जाने के बावजूद रियासती जनता ने बड़ी संख्या में भाग लेकर राजनीतिक जागरुकता का परिचय दिया। इसी समयावधि में छुईखदान म्यूनिसिपल चुनाव हुआ, स्टेट कांग्रेस ने प्रायः सभी वार्डों में अपने उम्मीदवार खड़े किये थे। इस चुनाव में एक वार्ड को छोड़कर अन्य सभी वार्डो में स्टेट कांग्रेस के उम्मीदवार जीते, यह रियासती जनता की राजनीतिक जागरुकता का परिणाम था।

सन् 1940 में छुईखदान रियासत के श्री सियाराम वर्मा को व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लेने की अनुमति मिल गई थी, वे यहां से रायपुर गये थे, लेकिन सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया। इस प्रदर्शन या सभा से राष्ट्रीय आंदोलन को बल मिलता था। सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन का प्रभाव छुईखदान रियासत की जनता पर भी पड़ा। आंदोलन प्रारंभ होने के पूर्व बैठक में भाग लेने इस रियासत से श्री गोवर्धन राम वर्मा बंबई गये थे, वे 11 अगस्त को गांधीजी का संदेश लेकर छुईखदान पहुंचे। इस आंदोलन के दौरान गोवर्धन वर्मा तथा उनके भाई सियाराम वर्मा को 30 अगस्त 1942 को गिरफ्तार कर लिया गया।इस आंदोलन के समय यहां अपूर्व उत्साह व जोश था, निरंकुश शासन के विरोध आंदोलन व्यापक रूप से किया गया। मुख्यालय में एक जुलूस निकाला गया, स्थान स्थान पर सभाओ का प्रदर्शन किया गया, अनेक आंदोलनकारी कांग्रेसी नेताओं की गिरफ्तारियाँ हुई, उन पर मुकदमा चलाया गया। सन् 1942 में समारूराम महोबिया, दामोदर दादरिया, बाबूलाल चौबे, अमृतलाल महोबिया और पूनमचंद जैन आदि स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को गिरफ्तार कर लिया गया।

छुईखदान रियासत में होने वाली आंदोलनों से स्कूली छात्रों में भी स्वतंत्रता आन्दोलन के प्रति जागृति पैदा हो गई थी। 1942 में संपूर्ण देश में झंडा आंदोलन चल रहा था, इसका प्रभाव इस रियासत में भी पड़ा और स्कूल के छात्रों ने यूनियन जैक को उतारकर तिरंगा झंडा फहरा दिया था। इसके लिए छात्रों को बेतो से पीटा गया तथा कुछ छात्रों को स्कूल से निकाल दिया गया, अन्य छात्रों से अर्थदण्ड वसूला गया। जिसमें मेंगनाथ कन्नौजे तथा रतन जैन प्रमुख थे, अन्य विद्यार्थियों में मानिक राम सोनी, लखन लाल सोनी, तथा बाबूलाल दादरिया शामिल थे। अन्य विद्यार्थियों की कोई संस्था नहीं थी किन्तु ये सब वाचनालय, पुस्तकालय के सदस्य होते थे, इन्हीं के द्वारा इनका संगठन होता था, विद्यार्थी भीखूराम बरई इन कार्यों में विशेष उत्साह के साथ कार्य किया। इस समय जो प्रदर्शन या सभा द्वारा बराबर राष्ट्रीय आंदोलन को बल मिलता था, इसके लिए विद्यार्थियों द्वारा हड़ताल अवधि में हड़ताल के लिए स्वयं सेवक कार्य करते थे।

यहां स्टेट कांग्रेस के अलावा एक स्वयं सेवक विभाग रखा गया था जिसके द्वारा संगठन मजबुत होता था। यहां महिलाओ हेतु कोई दल या संस्था नहीं थी फिर भी महिलाएँ स्टेट कांग्रेस कमेटी के सदस्य बनाये जाते थे और कोई भी सेवा कार्य सामने आता तो वे करती थी। एक तरफ जहां छुईखदान में सैकड़ों स्वतंत्रता सेनानी भारत माता को आजादी दिलाने के लिए अपनी जन्मभूमि में संघर्ष कर रहे थे, वहीं दुसरे तरफ छुईखदान के दो सपूत दामोदर प्रसाद त्रिपाठी और पद्माकर प्रसाद त्रिपाठी अपने मातृभूमि से दूर रायपुर में अंग्रेजो के खिलाफ बगावत का नारा बुलंद कर रहे थे। ये दोनो रायपुर के रामचंद्र संस्कृत पाठशाला में विद्यार्थी थे, यही से वे भारत छोड़ो आंदोलन में कूद पड़े थे ओर गिरफ्तार कर लिए गए। छुईखदान की जनता ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद और रियासती शासन के खिलाफ दो स्तरों पर संघर्ष किये।[12]

9 अगस्त 1946 को छुईखदान स्टेट कांग्रेस ने एक सभा आयोजित की, इस सभा में ग्रामीण क्षेत्रों से अधिकाधिक लोगो ने भाग लिया, सभा की अध्यक्षता गोवर्धन राम वर्मा ने किया था। इस सभा में पूर्ण उत्तरदायी शासन की स्थापना और संविधान निर्मात्री सभा में चुने हुए

प्रतिनिधि भेजे जाने की मांग की गई। सन् 1946 मे रियासत में मिलिट्री एक्ट लागू किया गया जिसके अंतर्गत दो मंत्री रियासत एवं एक मंत्री जनता की ओर से रखने का प्रावधान था। आजादी के तुरंत बाद छुईखदान रियासत के तत्कालीन शासक ऋतुपर्ण किशोरदास जी ने समय की गति को पहचानते हुए अपनी रियासती जनता को संतुष्ट करने के लिये उत्तरदायी सरकार की स्थापना की तथा छुईखदान रियासत को भारत संघ में सम्मिलित किए जाने की सहमति दी।

छत्तीसगढ़ का यह अंचल भारतीय इतिहास के मुख्य धारा के दृष्टिकोण से उपेक्षित रहा है, शिक्षा, संस्कृति और अर्थ विभाजन के दृष्टिकोण से स्थान कमतर आंकी जाती है लेकिन इस क्षेत्र की जनता सामाजिक जागरूकता के साथ साथ राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य धारा से जुड़ी रही। निःसंदेह व्यापक स्तर पर राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास क्षेत्रीय स्तर की घटनाओं का सूक्ष्म विवरण नहीं दे सकता, लेकिन यहां आजादी के लिए उठी संघर्ष का तूफान ने ब्रिटिश औपनिवेशिक हुकुमत की नींव हिलाकर रख दी थी और ब्रिटिश नींव ढीली होने से सामंती रियासतों की भी नींव ढीली पड़ गई। विद्रोह सहसा फट नहीं पड़ते ना ही क्रांति त्वरित उत्पन्न होकर बिजली की तरह टुट नही पड़ती वास्तव में आदोलन, क्रांति और विद्रोह रोड़ी हुई जनता की दबी आकांक्षाओं का ही उद्‌गार है। यह क्षेत्रीय इतिहास पर अध्ययन व शोध देश के इतिहास को जोड़ने वाली एक महत्वपूर्ण कड़ी है। इन सब योगदान के आलोक में निष्कर्ष हमारे सम्मुख प्रस्तुत है कि भारतीय इतिहास मे छत्तीसगढ़ की छुईखदान रियासत की राष्ट्रीय व सामाजिक जागरूकता का अद्वितीय योगदान था।

❐

सन्दर्भ –

1. *शर्मा, सी. एल.(2008), छत्तीसगढ़ की रियासतें, छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर , पृ. 212*
2. *गुप्त, प्यारे लाल,(1973) प्राचीन छत्तीसगढ़, छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर,पृ.244*
3. *सेंसस रिपोर्ट 1901 भाग 18,पृ. 374*
4. *खोसला, के. आर., (1942), द स्टेट, स्टेटस एंड हु इज हु इन इंडिया एंड बर्मा, इंपीरियल पब्लि., लाहौर, पृ. 86*
5. *सिंह, शैलेन्द्र,(2020), छुईखदान रियासत का इतिहास प्रारंभ से 1953, अध्ययन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, पृ.112,113*
6. *सिंह, शैलेन्द्र,(2020), छुईखदान रियासत का इतिहास प्रारंभ से 1953, अध्ययन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, पृ. 114*
7. *शुक्ला, सुरेशचंद्र,(2020), छत्तीसगढ़ की रियासतों का विलीनीकरण मातुश्री पब्लिकेशन, रायपुर , पृ.136*
8. *दुर्ग डिस्ट्रिक्ट मिसलेनिया सेमी आफीसियल करेसपांडेंस फाईल, 1939*
9. *कांग्रेस पत्रिका रायपुर, 23 फरवरी 1939*
10. *फाइल संख्या 53, हिस्ट्री आफ फ्रीडम मूवमेंट इन छुईखदान स्टेट पृ. 341*
11. *विश्वमित्र दैनिक समाचार पत्र, दिल्ली 08 अप्रैल 1939*
12. *सिंह, वीरेन्द्र बहादुर (2020),छुईखदान परत दर परत, जय जगन्नाथ सेवा समिति, छुईखदान (छ.ग.), पृ.48,49*
13. *बेहार, रामकुमार, (2008), छत्तीसगढ़ का इतिहास,छत्तीसगढ़ हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर*
14. *एन्युएल रिपोर्ट फार दी एडमिनिस्ट्रेशन आफ छुईखदान स्टेट*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 28–36

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

उत्तराखण्ड में रिवर्स माइग्रेशन एवं उसके सामाजिक-आर्थिक प्रभाव (चम्पावत जिले के संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण)

डॉ. देवकी नंदन भट्ट
पोस्ट डॉक्टोरल फेलो, डॉ.अम्बेडकर इंटरनेशलन सेन्टर,
मिनिस्ट्री ऑफ सोशल जस्टिस एण्ड एम्पावरमेंट, नईदिल्ली
Email : dnb.mgkvp@gmail.com Mob. 9455565880

सारांश

उत्तराखंड ने स्थापना के बाद से कई उतार–चढ़ाव देखे हैं। किसी भी राज्य के लिए अपने मानव संसाधन के सतत विकास के बिना विकास करना मुश्किल है। किसी भी राज्य का वास्तविक विकास लोगों की आर्थिक वृद्धि से संबंधित है। प्राकृतिक संसाधन और मानव संसाधन का प्रवास उत्तराखंड की हाशिए की आबादी के विकास के लिए बड़ी समस्या है। मानव संसाधन जीवित, गतिशील और एकमात्र संसाधन है जिसे समय के साथ सराहा जाता है एवं उसकी उपादेयता को बरकरार रखने हेतु सतत विकास की आवश्यकता है। किसी भी राज्य या देश के आर्थिक विकास में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मानव संसाधन का प्रवासन रोजगार की तलाश के लिए एक व्यक्ति के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाने की प्रक्रिया है। इसका परिणाम वहां के सामाजिक दृ आर्थिक स्तर पर देखा जा सकता है। प्रस्तुत शोध पत्र के अंतर्गत उत्तराखंड में 'रिवर्स माइग्रेशन' की नीतिगत चिंताएं एवं लोगों को मूलभूत सुविधाओं को उपलब्ध करने के अवसरों की तलाश करना है ।

मुख्य शब्दः पलायन, रोजगार, मानव संसाधन, सामाजिक–आर्थिक दशाए।

प्रस्तावना

कोरोना वायरस महामारी दुनिया के लिए एक विकट समस्या है, लेकिन कुछ हद तक इसका हिमालयी राज्य उत्तराखंड में रिवर्स माइग्रेशन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। कोविड –19 के कारण वर्ष 2020 में देशव्यापी तालाबंदी के परिणामस्वरूप निजी और अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने वाले लोग अपने पैतृक गाँव लौट आए। मानव संसाधनों के इस विपरीत प्रवास ने कई वर्षों से उपेक्षित पहाड़ी ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन ला दिया है। उदाहरण के लिए रोजगार सृजन का अवसर। चाय बागान, डेयरी, मधुमक्खी, मत्स्य पालन, फूल, खेती, पर्यटन आदि हाशिए पर रहने वाली आबादी के जीवन को बनाए रखेंगे।

कोविड–19 महामारी ने भारत और पूरी दुनिया पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। इसके प्रभाव से सम्पूर्ण ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्र प्रभावित हुआ इस सन्दर्भ में उत्तराखंड के चम्पावत ब्लाक में कुल प्रवासी की संख्या 8300 (31 मई 2021) दर्ज की गयी। महामारी ने दुनिया भर में लाखों लोगों के जीवन को तबाह कर दिया है। महामारी ने भारत में नीति निर्माताओं के लिए एक और चुनौती पेश की है। तालाबंदी और शहरों में आजीविका के साधन उपलब्ध न होने के कारण लाखों लोग अपने गाँव और मूल राज्यों में लौटने को मजबूर थे। इस स्थिति में लोगों को उनके कौशल एवं दक्षता के अनुसार रोजगार तथा आजीविका के अवसरों को उपलब्ध कराना एक बहुत बड़ी चुनौती थी । दहशत की स्थिति ने देश के बड़े हिस्से में ''शहरी'' से ''ग्रामीण'' क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर रिवर्स माइग्रेशन शुरू कर दिया। महामारी ने नीति निर्माताओं को उन क्षेत्रों में आजीविका के अवसर पैदा करने की चुनौती दी, जिन्होंने बड़े पैमाने पर प्रवासन का अनुभव किया है। पिछले दशक में, लोगों ने बड़े पैमाने पर मैदानी इलाकों में पलायन देखा गया है क्योंकि पहाडी क्षेत्रों में अवसरों का आभाव है। हिमालयी राज्य लंबे समय से पलायन की समस्या से जूझ रहा है– लोग शिक्षा और रोजगार की तलाश में अपने पैतृक गांवों को छोड़ रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप राज्य के ग्रामीण, पहाड़ी क्षेत्रों में कम आबादी वाले 'भूत गांव' बन गए। ये गाँव बंद घरों से घिरे हुए थे और इनमें अच्छी बुनियादी सुविधाओं का अभाव था। वर्ष 2017 में गठित उत्तराखंड पलायन आयोग ने पाया कि 2011 के बाद से 3.5 लाख से अधिक लोग बेहतर आजीविका के अवसरों, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की तलाश में अपने घरों से पलायन कर गए। राज्य में कम से कम 1,768 बस्तियों को ''भूत गांवों'' के रूप में वर्गीकृत किया गया था। बड़े पैमाने पर रिवर्स माइग्रेशन हालांकि, कोविड–19 महामारी ने एक अनूठी घटना पैदा की। लॉकडाउन के कारण हजारों लोगों का रोजगार छिन गया और वे अपने गृह नगरों की ओर पलायन करने को मजबूर हो गए। उत्तराखंड के पहाड़ी राज्य में भी तालाबंदी की अवधि के दौरान जबरदस्त रिवर्स माइग्रेशन देखा गया।

उत्तराखंड सरकार के सामने चुनौती यह है कि हाल ही में लौटी आबादी के लिए बुनियादी जरूरतों का प्रावधान सुनिश्चित करने के लिए आजीविका के अवसर पैदा किए जाएं। यदि सरकार इस मोर्चे पर सफल होती है तो वर्तमान संकट राज्य और उसकी जनता के लिए वरदान साबित हो सकता है। इसके अलावा, प्रत्येक राज्य के भीतर संसाधन और अवसर पैदा करने की प्रक्रिया भी भारत के प्रधान मंत्री द्वारा हाल ही में घोषित आत्मानिर्भर भारत के आदर्श वाक्य के अनुरूप है। प्रधान मंत्री ने तालाबंदी अवधि के दौरान राष्ट्र के नाम अपने संबोधन में 'ग्राम स्वराज' को आत्मनिर्भर बनने पर जोर दिया और सुझाव दिया कि प्रत्येक भारतीय को ''हमारे स्थानीय के लिए मुखर'' बनना चाहिए। विपरीत स्थिति ने राज्य के लिए एक चुनौती के साथ–साथ एक अवसर भी प्रस्तुत किया है। चुनौती पहाड़ी राज्य में बुनियादी ढांचे, रोजगार, स्वास्थ्य और शैक्षिक सुविधाओं का अभाव है, जिसने स्थानीय लोगों को शहरी शहरों में पलायन करने के लिए मजबूर किया। हालाँकि, एक अवसर भी प्रतीत होता है यदि सरकार प्रवासित लोगों को आजीविका के अवसर और बुनियादी सुविधाएं प्रदान करने में सफल हो जाती है। व्यवहार्य रणनीतियों का पता लगाने और सुझाव देने के लिए व्यापक नीति अनुसंधान और अध्ययन की आवश्यकता है ताकि महामारी कोविड द्वारा बनाई गई 'रिवर्स माइग्रेशन' की स्थिति को उत्तराखंड के समग्र विकास के अवसर में परिवर्तित किया जा सके।

समस्या का कथन

बड़ी संख्या में प्रवासियों के साथ, जो बेहतर अवसरों के लिए उत्तराखंड छोड़ गए थे, कोविड–19 के कारण लॉकडाउन के बीच में लौट आए, राज्य सरकार ने उन्हें वापस रहने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए कई सामाजिक कल्याणकारी योजनाएं शुरू कीं। लेकिन ऐसी योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन उत्तराखंड के ग्रामीण और पहाड़ी क्षेत्र के आर्थिक विकास में सरकार के लिए बड़ी चुनौती है।

प्रवासन वर्तमान समय में एक सामाजिक, आर्थिक और सार्वभौमिक घटना है, जिसके माध्यम से मनुष्य कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्यों की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता है जैसे कि बुनियादी दैनिक आवश्यकताएं, रोजगार के अवसर, बेहतर आर्थिक स्थिति, बेहतर कमाई, बेहतर काम और पर्यावरण जीवन की बेहतर गुणवत्ता, जीवन स्तर और स्थायी आजीविका। इस सन्दर्भ में उन नीतिगत पहलुओं का विशलेषण करना है जो रिवर्स माइग्रेशन की नीतिगत चिंताओ के समाधान के उपाय प्रस्तुत करे।

अवधारणात्मक शब्द–

प्रवास–प्रवास तीन कारकों – जन्म, मृत्यु और प्रवास के बीच किसी भी क्षेत्र के खंड को चिह्नित करने के लिए भरोसेमंद चरों में से एक है। किसी भी क्षेत्र की जनसंख्या जन्म और अप्रवास की वृद्धि से बढ़ती है जबकि मृत्यु और विस्थापन की वृद्धि से घटती है। इसके बाद, किसी विशिष्ट क्षेत्र में जनसंख्या के प्रवास और विस्थापन को प्रवासन कहा जाता है और यह किसी भी क्षेत्र के जनसंख्या परिवर्तन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार प्रवास को जनसांख्यिकी की सौतेली संतान के रूप में देखा गया है (भौमिक, 1984)[1]।

आजीविका– आजीविका को जीने के लिए आवश्यक क्षमताओं, संसाधनों और गतिविधियों (बोगेली बेन, 2001)[2] को शामिल करने की विशेषता है।

पूर्ववर्ती साहित्य समीक्षा

बर्टाम (2018)[3] ने अपनी पुस्तक **''डू स्टेट्स हैव द राइट्स टू एक्सक्लूड इमिग्रेंट्स''** में राज्य की भूमिका को परिभाषित किया है। राज्य यह चुनने के विकल्प की गारंटी देते हैं कि उनके देश में कौन जा सकता है। वैश्विक राज्य की ढांचागत संरचना परिस्थितियों के अनुकूल है जो शायद ही किसी अमीर राष्ट्रों में कल्पना की जाती है तथा गरीब एवं वंचित लोगों में सुरक्षा, विकास, प्रगति एवं गतिशीलता के अवसर को सुनिशचित करती है।

मार्क होनिग्सबाम (2019)[4] ने अपने अध्ययन **''द पैन्डेमिक सेंचुरी, वन हंड्रेड इयर्स ऑफ पैनिक, हिस्टीरिया, और हब्रिस''** में विगत शताब्दी में विनाशकारी संकट के खिलाफ तार्किक लड़ाई और प्रगति का चित्रण किया है। 1918 के स्पैनिश फ्लू से लेकर अत्याधुनिक फ्लू–अप तक, वह इस बात पर नजर रखते है कि स्वास्थ्य अधिकारियों, शोधकर्ताओं और अन्य लोगों द्वारा बीमारी के प्रसार को कैसे प्रभावितधनियंत्रित किया जाता है। कई अन्य अध्ययन सक्सेना (1977)[5], दासगुप्ता (1981)[6], ब्रेमन (1985)[7], बसु एट अल (1987)[8], विद्युत जोशी (1987)[9], मानुषी मित्रा (1987)[10], लीला गुलाटी (1987)[11], कृष्णन (1988)[12], सुलभ ब्रह्मे (1990)[13], लीला कस्तूरी (1990)[14], बेन बोगली (2001)[15], गुरदीप सिंह (2002)[16], के गोपाल अय्यर (2003)[17], सुभाष सी.

शर्मा (2003)[18], एन. अजित कुमार (2011)[19] प्रवास के कारणों, उनके परिणामों, प्रवासियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति, प्रवासियों द्वारा सामना की जाने वाली समस्या, महिलाओं को पलायन के लिए प्रेरित करने वाले कारक, प्रवास के पैटर्न, उनके परिणाम, शहरी क्षेत्रों में आजीविकाध्रोजगार के अवसर, प्रवासियों को आकर्षित करने के लिए जिम्मेदार कारक और प्रवासियों के बीच जागरूकता का स्तर से संबंधित अध्ययन प्रस्तुत शोध लेखन के लिए सहायक हैं।

अनुसंधान अंतराल

यद्यपि प्रवास पर उपलब्ध अध्ययन और पुस्तकें प्रवास के प्रकार, कारण, परिणाम, पैटर्न, प्रभाव पर ध्यान केंद्रित करती हैं। उत्तराखंड की हाशिए पर रहने वाली आबादी के लिए स्थायी आजीविका के अवसरों पर अध्ययन का अभाव है। यह शोध महामारी के बाद रिवर्स प्रवासियों और स्थायी रूप से ग्रामीण आजीविका रणनीतियों में एक आवश्यक तत्व के संबंध में स्थायी आजीविका के अवसरों की जांच से सम्बंधित है। यह अध्ययन हाशिए पर रहने वाली आबादी के मूल में आजीविका की स्थिरता को समझने का एक समाजशस्त्रीय प्रयास है।

अध्ययन का उद्देश्य

- लोगों को उत्तराखंड से पलायन करने के लिए प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों की पहचान करना।
- रोजगार की संरचना और उसके निर्धारकों का विश्लेषण करना।
- महामारी से पहले प्रवासियों की सामाजिक–आर्थिक स्थितियों का विश्लेषण करना।
- महामारी के बाद प्रवासियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का विश्लेषण करना।

परिकल्पना

- उत्तराखंड से लोगों के पलायन के लिए रोजगार के अवसरों की कमी जिम्मेदार है।
- स्थानीय स्तर पर उचित मूलभूत आवश्यकताएं उपलब्ध नहीं हैं।
- उत्तराखंड में लोगों के अपर्याप्त विकास के लिए शिक्षा और जागरूकता की कमी जिम्मेदार है।
- सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों को जमीनी स्तर पर ठीक से लागू नहीं किया जा रहा है।

शोध की प्रविधि

प्रस्तुत शोध अपनी प्रकृति में खोजपूर्ण अन्वेषणात्मक सह वर्णनात्मक है। इस प्रकार डेटा संग्रह और विश्लेषण के लिए सामाजिक अनुसंधान की वर्णनात्मक पद्धति का सर्वेक्षण अध्ययन अपनाया गया है। वर्तमान अध्ययन के लिए डेटा एक साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग करके एकत्र किया गया है।

डेटा को चंपावत जिले के 2 ब्लॉकों के माध्यम से एकत्र किया गया है– चंपावत और लोहाघाट (गैर–संभाव्यता पद्धति द्वारा उद्देश्यपूर्ण सैंपलिंग) प्रत्येक ब्लॉक से 10 प्रतिशत ग्राम पंचायत का चयन किया गया है, उसके बाद प्रत्येक चयनित ग्राम पंचायत से कुल रिवर्स मिग्रंट्स का 15 प्रतिशत लिया गया है। (संभाव्यता तकनीक द्वारा स्तरीकृत यादृच्छिक सैंपलिंग) इस प्रकार कुल 220 उत्तरदाताओ का चयन किया गया है ।

सारणी संख्या–1
परिवार की मासिक आय

पारिवारिक मासिक आय	आवृत्ति	प्रतिशत
10,000 से नीचे	54	24.5
10,001 से 15,000	68	30.9
15,001 से 20,000	62	28.2
20,000 से ऊपर	36	16.4
योग	**220**	**100**

उपरोक्त सारणी संख्या–1 से स्पष्ट होता है कि 55 प्रतिशत उत्तरदाताओ की मासिक आय 15000 रुपये जबकि मात्र 16.4 प्रतिशत उत्तरदाताओ की मासिक आय 20000 से अधिक है। इससे स्पष्ट होता है कि प्रवासिओ का जीवन स्तर निम्न श्रेणी का है तथा उन्हें अपनी मूलभूत आजीविका हेतु संघर्ष का सामना करना पड़ता है।

सारणी संख्या– 2
कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता

कृषि योग्य भूमि (एकड में)	आवृत्ति	प्रतिशत
1	114	51.8
1 – 2.5	56	25.5
2.5 – 5	34	15.5
5 से अधिक	16	7.2
योग	**220**	**100**

उपरोक्त सारणी संख्या–2 से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 51.8 प्रतिशत उत्तरदाताओ के पास मात्र 1 एकड़ कृषि योग्य भूमि है जबकि 25.5 प्रतिशत उत्तरदाताओ के पास 1–2.5 एकड़ तथा मात्र 7.2 प्रतिशत उत्तरदाताओ के पास 5 एकड़ से अधिक भूमि है इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण संरचनात्मक व्यवस्था के अंतर्गत संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता नहीं है ।

सारणी संख्या– 3
रोजगार एवं मूलभूत सुविधाओं की पूर्तिः

पूर्ति का स्तर	कोरोना से पूर्व	कोरोना के पश्चात
पर्याप्त	166 (75.5 प्रतिशत)	86 (39.1 प्रतिशत)
अपर्याप्त	54 (24.5 प्रतिशत)	134 (60.9 प्रतिशत)
योग	**220** (100 प्रतिशत)	**220** (100 प्रतिशत)

उपरोक्त सारणी संख्या–3 से स्पष्ट होता है कि कोरोना के पश्चात् रोजगार एवं मूलभूत सुविधाओं की आपूर्ति में 36.5 प्रतिशत की कमी आई है । इससे स्पष्ट होता है कि सरकार द्वारा किये गए प्रयासों का जमीनी स्तर पर लोगों को लाभ नहीं मिल पा रहा है। सतत विकास एवं आजीविका हेतु कारगर एवं समावेशी नीति के अनुपालन की आवश्यकता है ।

सारणी संख्या– 4

कोविड महामारी के बाद पारिवारिक जीवन पर आजीविका/रोजगार लाभ और सरकारी प्रयासों के सकारात्मक प्रभाव

पारिवारिक जीवन पर आजीविका/रोजगार लाभ और सरकारी प्रयासों का सकारात्मक प्रभाव	आवृत्ति	प्रतिशत
सहमत	40	18.2
पूर्णतः सहमत	32	14.5
असहमत	46	20.9
पूर्णतः असहमत	48	21.8
कह नहीं सकते	54	24.6
योग	**220**	**100**

उपरोक्त सारणी संख्या–4 से स्पष्ट होता है कि मात्र 32.7 प्रतिशत उत्तरदाता पारिवारिक जीवन पर आजीविका/रोजगार लाभ और सरकारी प्रयासों के सकारात्मक प्रभाव को मानते है जबकि शेष इससे असहमत है।

सारणी संख्या– 5

सरकार द्वारा संचालित योजनाओं से संतुष्टि का स्तरः

सरकार द्वारा संचालित योजनाओं से संतुष्टि	आवृत्ति	प्रतिशत
सहमत	44	20
पूर्णतः सहमत	42	19.1
असहमत	38	17.3
पूर्णतः असहमत	56	25.5
कह नहीं सकते	40	18.1
योग	**220**	**100**

उपरोक्त सारणी संख्या–5 से स्पष्ट होता है कि मात्र 39.1 प्रतिशत उत्तरदाता सरकार द्वारा संचालित योजनाओं से संतुष्ट है जबकि 42.8 प्रतिशत इससे असहमत थे तथा 18.1 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने कोई विचार व्यक्त नहीं किया।

अध्ययन का परिणाम

ऐसे हाशिए के परिवारों के लिए रोजगार के अवसरों के विकास के साथ–साथ उनके बच्चों के लिए बेहतर शिक्षा सुविधाएं और स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करने की आवश्यकता है।

सतत आजीविकाध्रोजगार के अवसर के सृजन हेतु स्थानीय सरकारी एजेंसियों और लोगों के मध्य बेहतर समन्वय को विकसित करने की आवश्यकता है। पहाड़ी क्षेत्र की संरचनात्मक पृष्ठभूमि आजीविका/रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य के सन्दर्भ में कठिन है, लेकिन विकासात्मक पहलुओं के द्वारा इसका निराकरण किया जा सकता है।

रोजगार के अवसर

(1) चाय उगाना (2)डेरी (3)मधु मक्खी (4)मत्स्य पालन (5)फूल/औषधीय जड़ी बूटियों का वृक्षारोपण (6)पर्यटन को बढ़ावा (7)मशरूम की खेती (8)सूखी खेती का निर्यातः ज्वार, बाजरा, रागी, तिलहन, स्थानीय दलहन (9)लघु उद्योगों की स्थापना (10)चकबंदी के माध्यम से कृषि भूमि का एक स्थान पर निर्धारण।

प्रमुख निष्कर्ष

- भारतीय ग्रामीण पैटर्न तेजी से बदल रहा है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था अपनी स्थिरता खो चुकी है। प्राचीन काल में गांवों को 'आत्मनिर्भरता' और 'छोटा गणराज्य' माना जाता था, लेकिन आज वे अपनी छवि खो चुके हैं। 'छोटा गणराज्य' आजीविका के स्थान पर 'माइग्रेटिंग विलेज' शब्द बेहतर उपयुक्त है और बुनियादी सुविधाओं की कमी ग्रामीण से शहरी प्रवास के पीछे प्रमुख कारण हैं।

- गांवों में आजीविका के अवसरों में वृद्धि से प्रवासन की दर को कम किया जा सकता है। यह एक एकीकृत और सहयोगात्मक प्रयास और आजीविका के अवसरों में वृद्धि से ही संभव है।

- गांवों में कृषि उत्पादन कृषि उत्पादों के उत्पादन के साथ समाप्त होता है। लेकिन प्राथमिक कृषि उत्पादों की तुलना में कृषि उप–उत्पादों (Agri By-product) की बाजार में अधिक मांग है। फील्ड अध्ययन से पता चलता कि ग्रामीण उप–उत्पादों (By- product) का उत्पादन करने के लिए तैयार हैं यदि उन्हें तकनीकी, विपणन और वित्तीय सहायता मिल सकती है।

- शून्य निवेश आधारित कृषि ढांचा वर्त्तमान में निवेश आधारित कृषि ढांचे में तब्दील हो गया है।

- आधुनिक कृषि प्रणाली की शुरूआत के साथ स्वतंत्र किसान को आश्रित किसान में परिवर्तित किया जाता है। कृषि में लागत लागत जैसे बीज, रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक, मशीनरी लागत बढ़ती रहती है और ज्यादातर मामलों में इनपुट लागत उत्पादन लागत से अधिक होती है।

सिफारिश/सुझाव

- ग्रामीण परिदृश्य तेजी से बदल रहा है, इसलिए नीति निर्माताओं को नीतियों को बनाने और अधिनियमित करने से पहले परिवर्तनों को ध्यान से देखना होगा। उत्पादन उन्मुख कार्यक्रम गांवों की स्थिरता को बरकरार रख सकते हैं।

- गाँवों में लघु उद्योगों की स्थापना जिससे ग्रामीणों की आजीविका में वृद्धि हो सके।

- बचौलिया किसानों और शहरी उपभोक्ताओं के बीच काम कर रहा है। आवश्यकता एक ग्रामीण केंद्रित बाजार प्रणाली स्थापित करने की है जहां शहरी लोग अपनी आवश्यकताओं के अनुसार सीधे किसानों से उत्पाद खरीद सकते हैं, उपभोक्ता और विक्रेता दोनों उत्पादों की कीमत पर संतुष्ट हो सकते हैं।

- शिक्षा गांवों में परिवार की गरिमा को बढ़ा रही है। लेकिन गांवों में शिक्षित बेरोजगारी की दर बढ़ रही है। डिग्री प्राप्त करने वाले अधिकांश ग्रामीण युवाओं का रोजगार से कोई संबंध नहीं है। ग्रामीण युवा तकनीकी शिक्षा के साथ–साथ तकनीकी उन्मुख नौकरियों के लिए शहरी क्षेत्र की ओर पलायन कर रहे हैं। हालांकि गांवों के कुछ युवा जो शहरी क्षेत्र में रह रहे हैं वे वापस आना चाहते हैं लेकिन ग्रामीण क्षेत्र में ऐसा कोई अवसर नहीं है।

- कृषि से जुड़े उद्योगों के साथ कृषि उत्पादन को जोड़ना वर्तमान समय की आवश्यकता है। देश में ऐसा कोई समन्वय एवं स्थापित व्यवस्था नहीं है। इसके परिणामस्वरूप पश्चिमी कृषि उत्पादों का विकास और विस्तार होता है।

- भारत का हर गांव एक पर्यटन स्थल है। शहरी लोग ग्रामीण पर्यटन की ओर बढ़ रहे हैं, गाँव के भोजन का स्वाद लेने की प्राथमिकता, तनाव मुक्त जीवन और गाँव के मनोरंजन तंत्र पर रुचि बढ़ रही है। शहरी लोगों में मानसिक विश्राम, तनाव मुक्त जीवन शैली तकनीक जैसे तैराकी, खेत की जमीन पर सुखद सैर, पेड़ के नीचे सोना, रात में आसमान की प्राकृतिक छठा को निहारना का महत्व बढ़ रहा है। इस प्रकार जिले में पर्यटन स्थलों को विकसित करके हम रोजगार के अवसरों को बढ़ावा दे सकते हैं।

__नोटः__ यह शोध पत्र डॉ. आंबेडकर इंटरनेशनल सेण्टर, मिनिस्ट्री ऑफ सोशल जस्टिस एंड एम्पोवेर्मेंट, नई दिल्ली द्वारा प्रायोजित लेखक द्वारा चल रहे पोस्ट डॉक्टोरल शोध के प्रारंभिक निष्कर्षों पर आधारित है।

❐

__सन्दर्भ__ –

1. *Indraeel Bhoumik 1984 Outmigration from Northeast India: Causes and Consequence, Ph.D Thesis, Deptt. Of Economics, Tripura University*
2. *Bogely, Ben. Seasonal Migration, Social Change, and Migrant Rights, EPW, 2001, pp. 4541-4548, 2001.*
3. *Bertram. Do States Have the Rights to Exclude Immigrants. Polity Press, 2018.*
4. *Mark, Honigsbaum. The Pandemic Century, One Hundred Years of Panic,Hysteria, and Hubris. W. W. Norton & Company, 2019.*
5. *Saxena, D.P. Rural Urban Migration in India, Popular Prakashan, Bombay, 1977.*
6. *Dashgupta, B. Rural-Urban Migration and Rural Development, in J. Balan ed. 1981.*
7. *Breman, J. Of Peasants, Migrants and Paupers: Rural Labour Circulation and Capitalist Production in Western India, Oxford University Press, Delhi, 1985.*
8. *Basu, A.K. and R. Ray. Migrants and the native bond: analysis of micro-level data from Delhi, Economic and Political Weekly, Annual Number, Vol. XXII, Nos. 19-21, 1987.*

9. *Joshi, Vidut (Ed.) Migrant labour and related issues, Oxford and IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, 1987.*
10. *Mitra, M. Women's work and household survival strategies: a case study of Santhal women's lives and work, Unpublished Report, CWDS, New Delhi, 1987.*
11. *Gulati, L. Coping with Male Migration, Economic and Political Weekly, Review of Women's Studies, Vol. 26, No. 49, 1987.*
12. *Krishnan M. 39 Bonded Labourers Rescued, Indian Express, 3 March, New Delhi, 1988.*
13. *Brahme, Sulabha. Ecoomic plight of hamal women in Mazumdar, Veena (ed.), Women Workers in India: Studie in Employment and Status, Chanakya Publications, New Delhi, 1990.*
14. *Kasturi, Leela. Poverty, Migration and Women's Status, in Majumdar ed. 1990.*
15. *Bogely, Ben. Seasonal Migration, Social Change, and Migrant Rights, EPW, 2001, pp. 4541-4548, 2001.*
16. *Singh, Gurdeep. Migrant Workmen And The Law, Deep & Deep Publications Pvt. Ltd., New Delhi, 2002.*
17. *Iyer, K. Gopal. Migrant Labour and Human Rights Violation, in K. Gopal Iyer (Ed.), 2003.*
18. *Sharma, Subhash C. Migrant Workers and ISMW Act in Punjab, in K. Gopal Iyer (Ed.), Migrant Labour and Human Rights in India, 2003.*
19. *Kumar, N. Ajith. Vulnerability of Migrants and Responsiveness of the State : The Case of Unskilled Migrant Workers in Kerala, India; Kochi, November, Working Paper No. 26, 2011.*

सहायक सन्दर्भ ग्रंथ :

· *Aristide, R. Zolberg and Peter, M. Benda. Global Migrants, Global Refugees: Problems and Solutions. Berghahn Books, 2001.*
· *Basu, A.K. and R. Ray. Migrants and the native bond: analysis of micro-level data from Delhi, Economic and Political Weekly, Annual Number, Vol. XXII, Nos. 19-21, 1987.*
· *Bertram. Do States Have the Rights to Exclude Immigrants? Polity Press, 2018.*
· *Breman, J. Of Peasants, Migrants and Paupers: Rural Labour Circulation and Capitalist Production in Western India, Oxford University Press, Delhi, 1985.*
· *Covid-19 Outbreak. AIP Publishing LLC, 2020.*
· *Dashgupta, B. Rural-Urban Migration and Rural Development, in J. Balan ed. 1981.*
· *Frank, M. Snowden. Epidemics and Society, From the Black Death to the Present. Yale University Press, 2019.*
· *Gulati, L. Coping with Male Migration, Economic and Political Weekly, Review of Women's Studies, Vol. 26, No. 49, 1987.*
· *Joshi, Vidut (Ed.) Migrant labour and related issues, Oxford and IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, 1987.*
· *Krishnan M. 39 Bonded Labourers Rescued, Indian Express, 3 March, New Delhi, 1988*
· *Kumar, N. Ajith. Vulnerability of Migrants and Responsiveness of the State : The Case of Unskilled Migrant Workers in Kerala, India; Kochi, November, Working Paper No. 26, 2011.*
· *Mark, Honigsbaum. The Pandemic Century, One Hundred Years of Panic, Hysteria, and Hubris. W. W. Norton & Company, 2019.*
· *Mcadam, J. Forced Migration, Human Rights & Security. Hart Publishing, 2008.*
· *Mitra, M. Women's work and household survival strategies: a case study of Santhal women's lives and work, Unpublished Report, CWDS, New Delhi, 1987.*
· *Stephen, Cast. The Age of Migration: International Population Movements in the Modern World. Palgrave Macmillan, 2013.*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 37–44

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

सलाहकार के रूप में स्त्रियों की भूमिका प्राचीन भारत के विशेष सन्दर्भ में

डॉ.सुमिति सैनी
प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग,
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
E-mail: sumitisaini337@gmail.com

सारांश

मंत्रिमण्डल प्राचीन भारतीय राजनैतिक व्यवस्था की एक अनिवार्य विशेषता थी। मंत्रिमण्डल में पुरोहित, अमात्य, मंत्री, सेनानी, सलाहकार आदि होते थे तथा इसकी संख्या स्थिर ना रहकर समय समय पर बदलती रहती थी। इस मंत्रिमण्डल का प्रमुख कार्य राज्य हित में राजा को सलाह देने का होता था, परंतु ऐसा नहीं है कि राजा को राज्य के निर्णयों में सलाह देने का कार्य केवल मंत्रिमण्डल करता था, यह कार्य अन्य सदस्य भी कर सकते थे। सामान्य तौर पर सलाहकारों में राजा के परिवार के सदस्य ही होते थे परंतु उनमे स्त्रियों का एक विशेष स्थान होता था। स्त्रियाँ वैदिक युग से ही न केवल राजाओं के व्यक्तिगत जीवन में अपनी सहमति या असहमति व्यक्त करती थी अपितु प्रशासन के महत्वपूर्ण फ़ैसलों में भी निर्णायक की भूमिका निभाती थीं। उस समय स्त्रियों द्वारा दिये गए परामर्श को राज्यों के सभी अधिकारियों व प्रजाजनों द्वारा स्वीकार किया जाता था। इस अध्याय में उन स्त्रियों का मूल्यांकन सलाहकार के रूप में किया गया है जिन्होनें अपने ज्ञान और बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह से राजा के हित और राजकीय प्रशासन की गतिविधियों मे अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया था। प्रस्तुत शोध पत्र में प्राचीन भारत की स्त्रियों द्वारा प्रशासन में सलाहकार के रूप में क्या भूमिका रही है उसका विवेचन किया गया है।

मुख्य शब्द– परामर्शदात्री, सहगामिनी, राजकीय प्रशासन, भागीदारी, कूटनीतिक सलाहकार

प्रस्तावना

वैदिक काल में स्त्रियों के परामर्शदात्री समितियों में भाग लेने तथा राजा को सलाह देने के उल्लेख मिलते है। तत्कालीन समाज में महत्वपूर्ण वाद–विवाद के अवसरों पर गणपूर्ति हेतु स्त्रियों के सभास्थल में जाने का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद में वर्णन मिलता हैं कि अदिति अपने पुत्र देव की मुख्य सलाहकार थीं[1] और उसने उसे वृत्रासुर का विरोध करने के लिए तैयार किया

था।[2] स्त्रियों द्वारा दिये गए परामर्श से शासन की सुस्थिरता का प्रतिपादन किया जाता था। प्रशांत वेदांलकर ने भी ऋग्वैदिक काल में विधवाओं के सभा में भाग लेने को उल्लेखित किया है।[3] यजुर्वेद के दशम अध्याय में उल्लेख मिलता है कि उस समय राजाओं की पत्नी दूसरों को न्याय एवं राजनीति की शिक्षा देती थी और चक्रवर्ती राजा की तरह ही समाज की समस्याओं पर अपना निर्णय प्रदान करती थी।[4] अथर्ववेद से ज्ञात होता है कि स्त्रियाँ सभा व समिति में उपस्थित ही नहीं होती थी अपितु राज्य सभाओं में भाग लेने के साथ साथ अपने मंतव्यों को व्यक्त भी करती थी।[5]

महाकाव्यों से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समय में स्त्रियाँ सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में सहगामिनी होती थी। वे शिक्षा, ज्ञान और यज्ञ आदि क्षेत्र में निर्बाध रूप से स्वछन्दतापूर्वक अपनी भागीदारी का निर्वहन करती थी। महाकाव्यों में ऐसे उदाहरण मिलते है जब सार्वजनिक जीवन में स्त्रियों ने अपनी सलाह देकर कई बार राज्य की नीति को प्रभावित किया। रामायण में सीता के लिए पति की सहचारिणी[6] एवं सहधर्मचारिणी[7] शब्दों का प्रयोग हुआ है। इन शब्दों के प्रयोग से ज्ञात होता है कि सीता केवल श्रीराम की अनुचरी एवं सेविका ही नहीं, समान अधिकार रखने वाली तथा अपने अधिकारों के प्रति सचेत रहने वाली एक तेजस्विनी पत्नी भी थी। सीता ने प्रशासन में प्रत्यक्ष रूप से तो कभी हस्तक्षेप नहीं किया था लेकिन एक पत्नी के रूप में वह अपने पति को एक सच्चे सलाहकार की तरह सलाह देने या आलोचना करने का मौका नहीं चूकती थीं। रामायण में उल्लेख मिलता है कि एक बार सीता ने श्रीराम को प्राणियों का वध न करने के विषय में विस्तारपूर्वक उपदेश दिया था।[8] कौशल्या के चरित्र में भी एक आदर्श पत्नी और माता के साथ साथ एक सलाहकार के गुणों को भी देखा जा सकता है। रामायण में कौशल्या को 'प्रमदोत्तमा' कहा गया है। स्वयं राजा दशरथ उनके आचरण से अत्यंत प्रभावित थे। कौशल्या समय समय पर धार्मिक व सामाजिक कार्यों में अपने पति को परामर्श और सहयोग देती थी। राजा दशरथ के अश्वमेघ यज्ञ में कौशल्या ने भी यज्ञ दीक्षा ली[9] तथा यज्ञीय पशु का विधिवत प्रेक्षण किया।[10] इसी प्रकार रामायण में रानी सुमित्रा को धर्म में स्थित रहने वाली,[11] तपस्विनी,[12] वार्तालाप में कुशल[13] एवं रमणीय रूप वाली[14] कहा गया है। कैकेयी के व्यवहार से पीड़ित हुए राजा दशरथ को कौसल्या सहित सुमित्रा ने भी परामर्श दिया था।[15] रामायण में मंथरा नामक दासी का वर्णन मिलता है जो रानी कैकेयी को कूटनीतिक सलाहकार देती थी।[16] कैकेयी ने कूटनीति का ज्ञान मंथरा से ही प्राप्त किया था।[17] श्रीराम के राज्याभिषेक की सूचना पाते ही उसने, उसके राजनैतिक परिणामों की दुरारूढ़ तथा पूर्वाग्रहपूर्ण कल्पनाएँ कर डाली थी।[18] स्वयं कैकेयी ने उसे क्षत्रविद्या में प्रवीण कहा है।[19] मंथरा की सलाह से कैकेयी ने जो षड्यंत्र रचा था, उससे उस समय की सम्पूर्ण राजनीति प्रभावित हुई थी। कैकेयी ने मंथरा की प्रशंसा करते हुए कहा था कि तेरा यह बड़ा सा कूबड़ ही मायाओं का समुदाय है इसी में तेरी मति, स्मृति, बुद्धि, क्षत्रविद्या एवं नाना प्रकार की मायाएँ निवास करती है।[20] कैकेयी को दी गयी मंथरा की प्रत्येक सलाह एवं तर्क गूढ–राजनीति से प्रेरित होता था। यदि मंथरा के आचरण की समीक्षा की जाए तो भेदनीति के सभी तत्व उसके व्यवहार में कहीं न कहीं अवश्य मिल जाएगे। उसने अनेक प्रकार से कैकेयी को आश्वस्त किया कि राजा दशरथ उसके साथ छल करते रहे है। मंथरा ने कैकेयी को अपने वाग्जाल में बाँधते हुए कहा

था – 'तुम्हारे स्वामी धर्म की बातें तो बहुत करते है, पर है बड़े शठ अर्थात मुख से मधुर वार्तालाप करते है किन्तु अत्यंत क्रूर हैं। तुम तो यही समझती हो कि वे सारी बातें शुद्ध भाव से कहते है इसलिए आज उनके द्वारा इस सीमा तक ठगी गयी हो।[21] भेदनीति की सफलता के लिए जिस वाकपटुता की आवश्यकता होती है, वह भी मंथरा में कूट कूट कर भरी हुई थी। मंथरा ने अपनी कूटनीति से कैकेयी को यह विश्वास दिलाया था कि केवल वही उसकी हितेषी है।[22] अपने परामर्श से मंथरा ने कैकेयी के प्रति भी राम के राज्याभिषेक के दूरगामी परिणामों का संकेत दिया था।[23] इसी प्रकार राजा जनक ने भी अपनी पत्नी सुनैना के परामर्श से प्रभावित होकर सन्यास का विचार छोड़ दिया था।[24] ऐसे कई संदर्भ उनके आदर्श चरित्र पर मिलते हैं जब गैर आर्य स्त्रियों ने भी सलाहकार के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी और तत्कालीन घटनाओं को बदल दिया था।

राजा बाली की पत्नी तारा ने महत्वपूर्ण मामलों में एक बुद्धिमान सलाहकार के रूप में बालि और सुग्रीव की सहायता की थी।[25] राजकार्य में वह राजा बाली का सहयोग करती थी। रामायण मे उल्लेखित किया गया है कि अंगद ने गुप्तचरों से प्राप्त सूचना राजा बाली को न देकर, तारा को दी थी।[26] सूक्ष्म विषयों का निर्णय करने तथा संकटकालीन स्थिति में कर्तव्यो को निश्चित करने में तारा की बुद्धि अत्यधिक तीव्र थी। राजा बालि ने प्राण त्याग करने से पूर्व सुग्रीव को कहा था कि सुषेण की पुत्री तारा सूक्ष्म विषयों का निर्णय करने मे चतुर है और उसके किसी भी परामर्श का परिणाम विपरीत नहीं होता है।[27] किष्किंधा के भावी सम्राट सुग्रीव को कही गई राजा बाली की उपर्युक्त उक्ति तारा की राजनीति कुशलता का स्पष्ट प्रमाण है। तारा के आचरण से भी हमें कुछ ऐसे ही संकेत मिलते है। गर्जना करते हुए सुग्रीव की ध्वनि सुनकर जब बालि बिना परिणाम का विचार किए ही उससे युद्ध करने के लिए अंतपुर से निकल पड़ा था,[28] तो तारा ने अपने पति को इस प्रकार सुग्रीव के समक्ष जाने की दृष्टि को उचित नहीं ठहराया और उसे सलाह दी कि राजनीति का सिद्धांत है कि राजा को अपने दुर्बल शत्रुओं से भी सदा सजग रहना चाहिए और शत्रु के सभी क्रियाकलापो की सूचना रखने के लिए गुप्तचरों की सहायता लेकर तदनुरूप उनका आचरण करना चाहिए।[29]

इसी प्रकार रावण की माँ रानी केकसी ने भी अपने पुत्रों को हमेशा हिंसा के लिए दोषी ठहराया और सीता को छोड़ने की सलाह दी, लेकिन उस समय विभीषण के अलावा कोई भी उसकी पवित्र और उदार प्रवृत्ति को नहीं समझ सका था। रावण की पत्नी रानी मंदोदरी ने भी राक्षस सेनाओं की बार बार होने वाली हार की घटनाओं को सुनने के बाद रावण से विभीषण को दोनों सम्राटों के बीच मध्यस्थ के रूप में भेजने की सलाह दी,[30] लेकिन यह रावण द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था। पतिव्रता एवं पति के हित में संलग्न रहने वाली मंदोदरी अपने अत्याचारी पति को कर्तव्य का बोध कराती रहती थी।[31] जहां तक उसकी सामर्थ्य होती थी, वह उसे अनुचित एवं नियम विरुद्ध कार्य ना करने की सलाह भी देती थी। रावण, सीता के व्यवहार से असंतुष्ट होकर उन्हें मार डालना चाहता था। इस समय मंदोदरी ने ही उसे सलाह दी थी कि वह कोई कुकृत्य ना करें। अपने पति के प्राणों को सुरक्षित रखने की कामना से मंदोदरी ने अनेक बार रावण को सलाह दी थी कि वह सीता, श्रीराम को समर्पित कर दें और श्रीराम से मैत्री स्थापित कर ले, किन्तु रावण ने अपनी दूरदर्शी पत्नी के आग्रह पर कोई ध्यान न दिया।[32]

महाभारत में स्त्रियों की सामाजिक एवं राजनैतिक भूमिका की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। महाभारत में परामर्श राजत्व का अपरिहार्य अंग होता था। इस क्रम में विशेष रूप से उल्लेखनीय तथ्य यह है कि उस समय स्त्री परामर्श को गरिमापूर्ण स्थिति प्राप्त थी। सत्यवती, गांधारी, द्रौपदी की सलाह को दैनंदिन जीवन में महत्वपूर्ण माना जाता था। राजा, राज प्रशासन की तेजस्वी स्त्रियों के परामर्शकारी अधिकार का अत्यधिक सम्मान करते और राजनीतिक व सामाजिक क्षेत्र में उनका हस्तक्षेप महत्वपूर्ण मानते थे। महाभारत में प्रत्यक्ष रूप से मंत्रिमण्डल के सदस्यों में किसी भी रानी के नाम का उल्लेख नहीं मिलता है लेकिन सलाहकार के रूप में रानियों की भूमिका को अनदेखा नहीं किया जा सकता है। महाभारत में वर्णन मिलता हैं कि स्त्रियाँ बहुत ही कुशलता से सलाहकार की भूमिका निभाती तथा राज्य के प्रबंधन को भी अपनी शक्ति और सूझबूझ से प्रभावित करती थी। रानी कुंती सम्राट पांडु की पत्नी और पांडवों की माँ थीं। वह कृष्ण के पिता वासुदेव के पिता राजा शुरसेन की पुत्री थीं। उसके पिता ने उसे अपने बहनोई राजा कुंतीभोज को गोद में दे दिया और इसलिए उसे कुंती कहा गया। जन्म के समय उसका नाम पृथा था, इसलिए उसके पुत्र अर्जुन का एक नाम पार्थ है।[33] एक बार जब राजा पांडु ने जंगल जाने का फैसला किया तो रानी कुंती और माद्री ने राज्य पर शासन करने की सलाह दी थी जिससे पांडु ने अपना फैसला बदल लिया था।[34] महाभारत में रानी द्रौपदी का सबसे मर्मभेदी व्यक्तित्व रहा है। उसकी बुद्धि, कर्तव्य परायणता और उच्च इच्छा शक्ति के कारण वह महाकाव्य की नायिकाओं के बीच अद्वितीय रही है। महाभारत में भारतीय स्त्रियों का उच्च आदर्श द्रौपदी की मोहक छवि में निहित था। अपनी उच्च बुद्धिमानी से उसने अपने पतियों को कई बार अपमान से बचाया जिससे उसके अद्वितीय मस्तिष्क का प्रभाव पाण्डवों तथा उनकी नीति पर स्वाभाविक रूप से पड़ा था। महाभारत मे वर्णन मिलता है कि द्रौपदी अपने गहन राजनीतिक ज्ञान का परिचय देते हुए युधिष्ठिर को दृष्टतापूर्वक राजकार्य करने की प्रेरणा देती है। वन पर्व में युधिष्ठिर के शक्ति विषयक क्रोध को प्रज्जव्लित करने के लिए द्रौपदी द्वारा जिन संतापपूर्ण परामर्श का प्रयोग किया गया है वह उसके असीम ज्ञान को प्रदर्शित करता है। समयानुसार या दूसरे शब्दो में वह पांडवों को युग सापेक्ष क्रोध व क्षमा की नीति का अनुसरण करने की सलाह देती थी।[35] द्रौपदी ने एक वृहद शास्त्रार्थ के माध्यम से प्रारब्ध जैसे कठिन विषयों पर भी अपनी मीमांसा प्रस्तुत की थी। वह पुरुषार्थ को प्रधान मानकर देश काल के अनुसार साम, दाम, दंड, भेद नीति की सलाह युधिष्ठिर को देती थी। महाभारत में एक स्थान पर कुंती अपने पुत्रों को आदेश देती है कि वे द्रौपदी की सलाह को माने। इससे यह स्पष्ट होता है कि उसके संबंधियों को भी द्रौपदी की सलाह पर पूर्ण विश्वास था।[36]

इसी प्रकार महाभारत में एक और प्रभावी व्यक्तित्व रानी गांधारी का था, जो अपने पति राजा धृतराष्ट्र को आजीवन कई मूल्यवान सलाह प्रदान करती रही। व्यास, संजय और राजा धृतराष्ट्र द्वारा भाग ली गयी एक महत्वपूर्ण बैठक में गांधारी को सभा भवन में परामर्श हेतु बुलाया गया[37] तथा उस समय उसके द्वारा दिए गए सुझाव की प्रशंसा भी की गयी थी। उसने राजा धृतराष्ट्र और अपने पुत्रों को उनके कुल विनाश के लिए चेतावनी भी दी थी। कृष्ण और दुर्योधन के बीच शांति वार्ता की विफलता के बाद वह पुनः सभा में आकर दुर्योधन को गंभीर राजनीतिक चर्चा के लिए सलाह देती है कि यह सिंहासन युधिष्ठिर का है। पति परायण गांधारी परिस्थितियों

को सूक्ष्मता से समझने में कुशल थी और वह अपनी बुद्धि द्वारा यह परिज्ञात कर चुकी थी कि दुर्योधन के द्वारा कुल का विनाश अवश्य होगा। इसलिए उसने राजा धृतराष्ट्र को चेताया था कि वह अपने पुत्रों के निर्णयों को प्रश्रय न दे तथा इस वंश के विनाश का कारण ना बने।[38] गांधारी की सम्मति, प्रतिभा और बुद्धि पर सभी पक्षों को विश्वास रहता था इसका प्रमाण यह है कि जब राजा धृतराष्ट्र संजय से एकांत में दोनों पक्षों का बल जानने की अभिलाषा प्रकट करते है तो उस समय संजय कहते है कि मैं रानी गांधारी की उपस्थिति में आपको सारा विवरण बताऊंगा क्योंकि वह धर्म व विचार मर्मज्ञ तथा सिद्धांतकारी है।[39] महाभारत के अनुसार दुर्योधन को जब युद्ध के विचार से विरत करने में श्री कृष्ण एवं कुरु वंश के लोग सफल न हुए तो दुर्योधन को सुमार्ग के अंतिम उपाय के रूप में गांधारी को स्मरण किया जाता है उस समय गांधारी दुर्योधन की निंदा व साथ ही साथ धृतराष्ट्र की आलोचना भी करती है। अल्तेकर ने अपना विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि महाभारत में रानी गांधारी ने सलाहकार के रूप में शासन में अपनी भूमिका का निर्वहन किया था।[40] दुर्योधन को सन्मार्ग पर लाने के लिए गांधारी ने उसको जो सलाह दी थी वह उसके राजनीति विषयक ज्ञान और दूरदर्शिता का परिचायक है। कुरु वृद्ध वर्ग जब किसी राजकीय समस्या या समारोह आदि पर विचार विमर्श करते थे तब गांधारी को आदरपूर्वक सभा में बुलाया जाता था।[41] गांधारी की धर्मशीलता, बुद्धिमत्ता का उल्लेख अनुकर्मणिपर्व में भी मिलता है। व्यास ने गांधारी को महाप्रज्ञा, धरमार्थदर्शिनी, धर्मज्ञा, निपुणा, निश्चयज्ञा, अर्थशास्त्र विशारदा के रूप मे आदरणीय शब्दो से संबोधित किया है।[42]

महाभारत के अनुसार राज्य में रानी के बाद जिस स्त्री को सर्वाधिक राजनीतिक व सामाजिक सम्मान प्राप्त था, वह 'राजमाता' के नाम से जानी जाती थी। एक रानी के समान ही राजमाताएँ भी प्रशासन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती और अनेक विपरीत परिस्थितियों में अपने परामर्श द्वारा समस्याओं के समाधान में सहयोग करती थी। जब विचित्रवीर्य की निसंतान मृत्यु हो जाती है तो राजमाता सत्यवती राजा शांतनु की कुल परंपरा विलुप्त हो जाने के भय से व्याकुल हो उठती है। उस समय राजमाता सत्यवती ने महर्षि पराशर से उत्पन्न अपने पुत्र वेदव्यास को नियोग के लिए बुलाया और नष्ट हुई कुल की परंपरा को सुरक्षित रखा था। राजा शांतनु के स्वर्गवास हो जाने पर भी राजमाता सत्यवती के परामर्श से ही शासन चलाते थे।[43] महाभारत में रानी विदुला का प्रबोधन सिद्ध करता है कि उसने युद्ध से भागे हुए अपने पुत्र को क्षात्र धर्म की शिक्षा दी थी कि उठो अपने कर्म में लगो तुम्हें अवश्य सफलता मिलेगी। रानी विदुला की सलाह से संजय ने युद्ध किया और सिन्धुराज को हराया था। द्रुपद ने भी शत्रु के आक्रमण के समय अपनी रानी से परामर्श किया था। इसी प्रकार अरुंधति के विषय में उल्लेख किया गया है कि वह इतनी विदुषी थी कि उसके पास ऋषि एवं देवतागण धर्म का रहस्य जानने और परामर्श करने आते थे। महाभारत के शांतिपर्व में एक सम्पूर्ण अध्याय ही सुलभा की दार्शनिक विषय में विद्वता का परिचायक है[44] जिसमे सुलभा द्वारा योग, समाधि, मोक्ष जैसे गूढ विषयों पर राजा जनक के साथ शास्त्रार्थ हुआ और वाणी की विशेषता बताते हुए मोक्ष की दीक्षा प्राप्त की।

मनुस्मृति में वर्णन मिलता है कि एक उत्तम और न्यायनुकूल शासन करने वाले राजा के शासन में रानी का भी परामर्श होता था ताकि विपरीत परिस्थिति पड़ने पर रानी राज्य कार्यों

का संचालन कर सके।[45] गुप्तकाल में स्त्रियों ने अपने पारिवारिक दायित्वों को पूरा करते हुए सार्वजनिक जीवन में भी अपने कर्तव्यों को निभाने का प्रयास किया। चूंकि इस समय पर्दा प्रथा का प्रचलन नहीं था इसलिए हम अनुमान लगा सकते है कि स्त्रियों के सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्र में कोई बाधा नही होती थी। गुप्त सम्राटों के सिक्कों पर सम्राट के साथ साम्राज्ञी की उपस्थिति[46] तथा राजा चन्द्रगुप्त की पुत्री प्रभावती गुप्ता का शासिका के रूप में राज्य कार्य संचालन भी यही सिद्ध करते है कि गुप्तकाल में स्त्रियों ने प्रशासन के विविध रूपों में अपनी भूमिका का निर्वहन किया था।

वैशाली में खोजी गयी एक मुहर रानी माता ध्रुवस्वामिनी या ध्रुवदेवी को महाराजाधिराज चंद्रगुप्त द्वितीय की पत्नी ध्रुवस्वामिनी रानी और राजा गोविंदगुप्त की माँ के रूप में वर्णित करती है।[47] उस समय मुहर पर रानी ध्रुवदेवी का यह वर्णन उसके विशेष महत्व को दर्शाता है। त्रिपत शर्मा ने कहा है कि रानी ध्रुवदेवी निश्चित रूप से रानी माता के रूप में सलाह देकर प्रशासनिक भूमिका निभाती थी।[48] इसी प्रकार उड़ीसा के गंग शासक कामगारग द्वितीय की रानी विनयावती ने भी प्रभावी रूप से राजमाता के रूप में कार्य किया था जो अपने पति के बाद अपने पुत्र वज्रहस्त तृतीय को सलाह देकर राज्य के प्रशासन में अपनी भागीदारी का निर्वहन करती थी।[49] अपने पति की मृत्यु के बाद रानी विनयावती ने अपने पुत्र को सलाह देकर उसे सिंहासन पर आरूढ़ करने में सफलता प्राप्त की थी ।

कश्मीर के इतिहास में स्त्रियों ने शासिका रानी बनकर महत्वपूर्ण भूमिका निभायी इसी प्रकार सलाहकार के रूप मे कार्य करने वाली स्त्रियों का सन्दर्भ भी कश्मीर के इतिहास से प्राप्त होता है। रानी सूर्यमती को इस संदर्भ मे देख सकते है, जिसने बहुत प्रभावी ढंग से राजा को सलाह देकर राज्य में अपनी भूमिका को तय किया था। रानी सूर्यमती का विवाह राजा अनंत के साथ हुआ,[50] जिसने 1028 एवं 1063 ई. के बीच कश्मीर पर शासन किया था। ग्यारहवीं शताब्दी का कश्मीर पड़ोसी राज्यों के क्रूर हमलों के कारण ध्वस्त हो रहा था। उस समय तात्कालिक परिस्थितियों को देखते हुए रानी सूर्यमती ने राज्य के मामलों में हस्तक्षेप करके राजा अनंत को यह सलाह दी कि वह राज्य की सुरक्षा हेतु कश्मीर की प्रवेश सीमाओं में परिवर्तन करने के आदेश दें। कल्हण ने भी कश्मीर राज्य की सीमाओं में परिवर्तन और विस्तार करने के लिए रानी सूर्यमती के प्रयासों का वर्णन किया है।[51] कल्हण के अनुसार, रानी सूर्यमती की प्रशासन में सक्रिय भागीदारी देखी जा सकती है, एक बार उसने अपनी व्यक्तिगत बचत में से राज्य के कर्ज को भी चुकाया था।[52] उसकी सलाह केवल राजनैतिक और प्रशासनिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं थी बल्कि उसने मंदिरों, मठों और अग्रहारों के निर्माण में उदार अनुदान देने और बड़ी संख्या में ब्राह्मणों की सहायता के लिए भी सलाह महत्वपूर्ण मानी जाती थी। उपर्युक्त विवरण के आधार पर हम कह सकते है राजा अनंत राज्य के महत्वपूर्ण निर्णय रानी सूर्यमती के सलाह पर ही करते थे।

इसी प्रकार गुज़रात के राजा कुमारपाल के शिलालेखों के माध्यम से भी सलाहकार के रूप में भूमिका निभाने वाली एक स्त्री का उदाहरण मिलता है। राजा कुमारपाल की रानी गिरिजादेवी को 'पुण्यक्षसहदेव की हरणजननी' के रूप में वर्णित किया गया है। प्रशासन में सलाहकार के रूप में उसकी सक्रिय भागीदारी एक शिलालेख के माध्यम से प्रकट होती है।

रतनपुर शिलालेख गिरिजादेवी द्वारा दिए गए आदेश को उल्लेखित करता है कि यह आदेश कुछ निश्चित दिनों में जानवरों को मारने पर प्रतिबंध करने का है तथा इसमे आदेश का उल्लंघन करने वालों के लिए एक सख्त सजा भी निर्धारित की गयी थी।[53] हालाँकि अब तक प्रकाश में लाए गए प्रशासनिक आदेश का एक ही संदर्भ है, लेकिन यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि रानी गिरिजादेवी प्रशासनिक मामलों में सक्रिय रूप से सलाह देती थीं।

दक्षिण भारत में 597–98 ई. के महाकुट स्तंभलेख से ज्ञात होता है कि बादामी के चालुक्य राजा मंगलेश ने अपनी विधवा माता के परामर्श से मुकुटेश्वर नाथ मंदिर को दान दिया था।[54] इसी राजवंश की विधवा गंगमहादेवी के परामर्श पर विक्रमादित्य प्रथम (654–78ई०) द्वारा गहड़वाल ताम्रपत्र जारी किया गया था।[55] दसवीं शताब्दी में एक स्त्री का उल्लेख मिलता है जो अपने पुत्र का सलाहकर बनकर मंदिरों का निर्माण करती है। जिसका नाम सेम्बियान मेदवियार है जो राजा उत्तम चोल की माता थी। एक तिरुकोदिक्वल शिलालेख से पता चलता है कि राजा उत्तम चोल ने तिरुक्कोडिका में मंदिर का निर्माण अपनी माँ की सलाह पर ही किया था। सेम्बियान मेदवियार ने राज्य के प्राचीन प्रमाणो को संरक्षित करने की सलाह देकर भारत की सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखने का कार्य भी किया था। उसने सत्ता और पतिव्रता धर्म का पालन करते हुए अपने पुत्र को सलाह देकर प्रशासन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी।

एक सलाहकार के रूप में प्रशासन में भाग लेने वाली स्त्रियों की प्रथा कलचुरी राजवंश के दौरान भी जारी रही थी। कलचुरी साम्राज्य की एक रानी माता गोसाजा ने अपने पुत्रों को अनुदान जारी करने की सलाह दी थी। अजय सिंह देवा और विजय सिंह ने अपनी मां गोसाजा की सलाह पर एक ब्राह्मण को अनुदान दिया था।[56] इसी प्रकार एक रानी अलहन देवी का वर्णन मिलता है जो कलचूरी शासक गया कर्ण की पत्नी थी। भेरघाट के शिलालेख में अलहन देवी की पूरी वंशावली वर्णित है। रानी अलहन देवी की सलाह पर राजा गया कर्ण ने शिव मंदिर की नींव रखी, जिसमें एक मठ और अध्ययन के लिए एक बड़ा कक्ष बनाया था और उसने मंदिर और मठ के रखरखाव के लिए दो गाँव नमुंडी और मारारपटक को सौंप दिया था। अलहन देवी के राजनीतिक प्रभाव की एक दिलचस्प घटना का वर्णन जाजल देवी प्रथम के शिलालेख रतनपुर में किया गया है। इसमें कहा गया है कि राजा ने अपनी रानी अलहन देवी के अनुरोध पर कुछ युद्ध बंदियों को भी रिहा कर दिया था।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम यह कह सकते है कि प्राचीन भारत में स्त्रियों ने प्रशासन में सलाहकार के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। राज्य की राजनैतिक व्यवस्था में स्त्रियों ने एक सलाहकार बनकर अपने अनुभव, बुद्धिमत्ता तथा ज्ञान से राजा के निर्णयों को प्रभावित किया। उन्होने राजा को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उचित व अनुचित कार्यों में अंतर को समझाया।

❐

सन्दर्भ –

1. *ऋग्वेद, 10/60/1*
2. *वही, 10/4/18*
3. *प्रशांत वेदालंकार, वैदिक साहित्य में नारी, प ० 122*
4. *यजुर्वेद, 14/3/10*

5. अथर्ववेद, 12/3/52
6. रामायण, 6/32/20
7. वही, 2/117/29
8. वही, 3/9/9
9. वही, 1/13/41
10. वही, 1/14/33
11. वही, 2/44/1
12. वही, 2/64/76
13. वही, 2/44/30
14. वही, 2/44/32
15. ाकंभरी जयाल, दि स्टेटस ऑफ वुमेन इन एपिक्स, पृ. 283
16. रामायण, 2/7/19
17. वही, 2/9/19
18. वही, 2/8/8
19. वही, 2/9/47
20. वही, 2/9/46
21. वही, 2/7/24
22. वही, 2/7/19
23. वही, 2/8/8
24. वही, 4/15/17
25. वही, 4/15/16
26. वही, 4/22/13
27. वही, 4/15/5
28. वही, 4/15/9
29. वही, 6/111/18
30. वही, 6/111/20
31. वही, 6/111/19
32. वही, 6/10/22
33. वही, 6/111/19
34. महाभारत, 1/110/26
35. वही, 2/67/40
36. वही, 14/23/2
37. वही, 15/65/6
38. वही, 5/146/29
39. वही, 5/46/32
40. ए०एस०अल्तेकर, दि पोजीशन ऑफ वुमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, प . 142
41. महाभारत, 5/65/6
42. वही, 1/1/51
43. वही, 9/23/35
44. वही, 12/12/320
45. मनुस्म ति, 8/125
46. आर०के०मुखर्जी, दि गुप्ता एंपायर, प . 45
47. वही, प . 58
48. त्रिपत ार्मा, वुमेन इन एंशियेण्ट इण्डिया, पृ. 52
49. वही, प . 154
50. राजतरंगिणी, 3/150
51. वही, 7/197
52. वही, 7/218
53. ए.के.मजूमदार, दि चालुक्य ऑफ गुजरात, प . 315
54. जी०याजदानी, अर्ली हिस्ट्री ऑफ दक्कन, प . 197
55. वही, प . 209
56. जनरल ऑफ दि एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, 1938, 8/481

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 45–51

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

वज्रयानी बौद्ध देवमंडल में प्रमुख ब्राह्मण देवियों का आत्मसातीकरण

डॉ.सत्यप्रकाश
पोस्ट डॉक्टोरल फैलो (ICSSR), प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग,
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
E-mail : sp55066@gmail.com Mob. 7880417862

बौद्ध तंत्र में तांत्रिक देवताओं का महत्व तो रहा ही हैं लेकिन इनके साथ–साथ बौद्ध तांत्रिक देवियों का महत्व देवताओं से कम नहीं रहा हैं। जब सृष्टि की उत्पत्ति हुई तो उसी समय ब्रह्मा और माया उत्पन्न हुए, कहा गया है कि किसी भी पुरुष के अन्दर स्त्री का भाव छिपा रहता है और उसी प्रकार स्त्री के अन्दर पुरुष का भाव छिपा रहता है। जैसे कोई पुरुष हो अगर वह स्त्री के जैसा व्यवहार करने लगता है तो उस समय उसके अन्दर स्त्रीत्व का भाव जागृत हो जाता है, उसी प्रकार कोई भी स्त्री अगर वह पुरुष जैसा व्यवहार करने लगती है, तो उस समय उसके अन्दर का पुरुषत्व जागृत हो जाता हैं। यहीं से देवताओं के साथ देवियों की कल्पना की गयी। देवियों को देवताओं के साथ सहचरी के रुप में दिखाया जाता है। वज्रयानी बौद्ध देवमंडल में ब्राह्मण देवियों का आत्मसातीकरण किस प्रकार हुआ, इसे शोधार्थी ने अपने शोध–पत्र के माध्यम से प्रकाश डालने का प्रयास किया हैं। जिसमें मुख्य रुप से हारीति, सरस्वती, महासरस्वती, वज्रवीणा सरस्वती, वज्रशारदा, आर्यसरस्वती, वज्रसरस्वती, श्रीदेवी, काली, वज्रयोगिनी, वज्रवराही, कुरकुल्ला तारा, अपराजिता, अजीमा, उषा (मारीचि) एवं तारा जैसी देवियाँ एक धर्म से दूसरे धर्म में किस रुप में परिवर्तित हुई है, उसका उल्लेख किया है।

हारीति

वज्रयानी देवमंडल में जिन देवियों का उल्लेख किया गया है, उन सभी से भिन्न हारीति को स्थान दिया गया हैं। इस देवी की बड़ी मूर्ति गांधार शैली में बनायी गयी थी, जब देवकुल का नाम भी ज्ञात न था। कौशाम्बी, साँची, मथुरा तथा अमरावती आदि स्थानों से हारीति की सुंदर मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। गांधार से प्राप्त हारीति की मूर्ति पर यूनानी कला का प्रभाव दिखाई पड़ता है। इस कला में हारीति को दो विभिन्न रुपों में दिखलाया गया हैं। एकाकी मूर्ति जो भारतीय नारी के सदृश्य है, जिसमें तीन बच्चों को साथ में दिखलाया गया है जिसमें एक हारीति के स्तन का दूध पी रहा है। कभी गोद तथा कन्धों पर बच्चों के चित्र अंकित है। दूसरी स्थिति में युगल प्रतिमा कुबेर तथा हारीति की मिलती है। गांधार से दोनों प्रकार की मूर्तियाँ उपलब्ध हैं।

बौद्ध देवी प्रतिमाओं में हारीति का नाम सर्वप्रसिद्ध हैं, इनके संबंध में बताया गया है कि यह देवी बच्चों का विनाश करती थी। इनके लगभग पाँच सौ बच्चों का उल्लेख मिलता है जिसमें से एक बच्चा अचानक खो गया। हारीति अपने बच्चे को ढूंढती एवं रोती हुई बुद्ध के पास पहुँच गई। भगवान बुद्ध ने हारीति से उसका कारण पूछा, उसके बाद बुद्ध ने कहा कि आप वास्तव में बच्चे से प्रेम करती हैं! हारीति ने उत्तर हाँ में दिया। उस परिस्थिति में बुद्ध ने अहिंसा की शिक्षा दी, तथा उसी दिन वचन दिलवाया कि अब वे किसी बच्चे को मारने के स्थान पर प्रेम करने की प्रतिज्ञा लें।[1] ब्राह्मण ग्रंथों में वर्णित शष्ठी देवी हारीति का परिवर्तित रुप है। इस नयी देवी शष्ठी की पूजा वर्तमान हिन्दू धर्म में होती है। नवजात शिशु के छठें दिन की पूजा ''शष्ठी–पूजा'' ही कही जाती है। प्रत्येक मास में लोग इस देवी की पूजा करते हैं परन्तु कार्तिक शुक्ल छः को जिस शष्ठी की लोकप्रियता है उसे ''गोशष्ठी'' का नाम दिया गया है।

सरस्वती

पौराणिक युग में उन्हें ज्ञान की देवी के रुप में वर्णित किया गया है। बौद्धों ने इस ब्राह्मण देवी को उधार लिया और उन्हें अपने तांत्रिक देवमंडल में शामिल कर लिया। वह ब्राह्मण और बौद्ध दोनों धर्मों में समान रुप से लोकप्रिय थीं। बौद्ध सरस्वती दो भुजाओं वाली एकमुखी या छः भुजाओं वाली तीनमुखी है। बौद्धों द्वारा यह माना जाता है कि मंजुश्री और प्रज्ञापारमिता (तिब्बती–शेरचिन) की तरह वह ज्ञान, विद्या, बुद्धि एवं स्मृति आदि प्रदान करती है। *साधनमाला* में उन्हें बड़ी संख्या में साधनाएँ सौपी गयी हैं और विविध स्वरुपों की कल्पना की गई है जिनका उल्लेख नीचे संक्षेप में दिया गया है।

महासरस्वती (चित्र सं. 01)

इस देवी का विशिष्ट स्वरुप यह है कि उनका दहिना हाथ वरदमुद्रा में है जबकि बाएं हाथ में नाल के साथ एक सफेद कमल है। उनका रंग भवेत है। उनके चारों ओर चार देवता हैं। उनके सामने प्रज्ञा, दायीं ओर मेधा, बाई ओर स्मृति और पश्चिम में मति हैं। देवी को आसन और स्थानक दोनों स्वरुपों में दर्शाया गया है।[2] उनके चेहरे पर मुस्कान है। वे अत्यंत दयालु हैं, तथा सफेद चंदन एवं पुष्पों से सुसज्जित वस्त्र पहनती हैं। उनके वक्षस्थल को मोतियों के हार से सजाया गया है। वह अपने शरीर से निकलने वाले अतुलनीय प्रकाश से तीनों लोकों प्रकाशित करती है।

महासरस्वती

वज्रवीणा सरस्वती

महासरस्वती की तरह उनका रंग भी भवेत और दिखने में सौम्य है। वह भी दो भुजी हैं, लेकिन विशेषता यह है कि वह अपने दो हाथों से वीणा वादन कर रही है। पूर्व की तरह उसके साथ भी चार देवता हैं।

वज्रशारदा

जैसाकि साधनमाला में वर्णित है, वह एक पवित्र श्वेत कमल पर आसीन है, और एक अर्धचंद्र उसके सिरस्त्राण को सजाता है। वह तीन आंखों और दो भुजाओं वाली हैं, और उनके बांये हाथ में पुस्तक और दाहिने हाथ में कमलपुष्प है। उसके साथ चार परिचारक होते हैं और वह किसी भी मुद्रा में हो सकती है। विनयतोष भट्टाचार्य ने अपनी पुस्तक *इण्डियन बुद्धिस्ट आइकोनोग्राफी* में लिखा है कि नालंदा से प्राप्त मूर्ति जिसे ''कोटिश्री'' के रुप में पहचाना गया है, संभवतः इसी देवी की प्रस्तर प्रतिमा है। यहां देवी भद्रासन में विराजमान हैं और उनके सहयोगी भी इसी मुद्रा में हैं। सभी आकृतियों को सामूहिक रुप से विकृत किया गया है, लेकिन उनमें से कम से कम एक ने उत्पल और पुस्तक को क्रमशः दाएं और बाएं हाथों में धारण किया हुआ है।

आर्यसरस्वती

सरस्वती का एक और स्वरुप, उन्हें वज्रसरस्वती के रुप में भी जाना जाता है। वह श्वेत रंग की एक नवयुवती के रुप में दिखाई देती है।[3] देवी के बाएं हाथ में कमलनाल है जिस पर *प्रज्ञापारमितासूत्र* रखा है। **साधनमाला** देवी के दाहिने हाथ के प्रतीक और आसन के बारे में मौन है। चित्र में वह दाहिने हाथ में कमलनाल पकड़े दिखती है।

वज्रसरस्वती

लगभग सभी मामलों में वह महासरस्वती के समान है। यहाँ अंतर यह है कि उसके बाल भूरे हैं और ऊपर की ओर उठे हैं। वह लाल कमल पर प्रत्यालिधा मुद्रा में खड़ी है। उसके तीन मुख और छः भुजाएँ हैं। बीच का चेहरा लाल रंग का है जबकि दांया और बांया नीले और सफदे रंग का है। वह अपने तीन दाहिने हाथों में कमल धारण करती है जिस पर प्रज्ञापारमितासूत्र, तलवार और करत्री है और तीन बाएं हाथ में कपाल, रत्न और चक्र हैं। कभी–कभी कमल और कपाल पर पुस्तक के बजाय, वह कमल और कपाल रखती है[4] जो चित्रण में दिखाया गया है।

श्रीदेवी

यह एक भयावह गौरवशाली देवी है। वे यम की शक्ति हैं और उन्हें हिन्दू देवी काली के रुप में माना जाता है। नेपाल में उन्हें ''चस्कामनी'' कहा जाता है। देवी विभिन्न देवताओं से घिरी हैं। हेवज्र ने उन्हें मनुष्य के जीवन की गणना करने के लिए दो पासे दिए थे। ब्रह्मा ने उन्हें मोर का पंख दिया। विष्णु ने उसे एक सिंह दिया जिसे वह अपने दाहिने कान में धारण करती है। नंद ने उसे एक नाग दिया जो उनके बाएं कान से लटका रहता है। वज्रपाणि ने उसे हथौड़े से लैस किया। अन्य देवताओं ने उसे एक सफेद मुह वाला खच्चर दिया जो एक राक्षस की त्वचा से ढका हुआ है, जिसकी लगाम जहरीले सांपों की है। देवी खच्चर पर बगल में बैठती है।[5] वह कटे हुए सिरों की एक लंबी माला पहनती है और मानव त्वचा में लिपटी हुई है। उनके

पास तीसरी आँख भी है। उसका दहिना हाथ त्रिशूल के साथ उठा हुआ है। अपने बाएं हाथ में वह कपाल का प्याला वक्ष के समीप धारण करती है। वह आग की लपटों से घिरी है और उसे युद्ध के शस्त्रों की रानी भी कहा जाता है। उनके पास विभिन्न पशुओं की सवारी करती हुई कुछ परिचायक रानियाँ हैं। तिब्बत के कई मठों में उन्हें हमेशा पर्दे के पीछे एक कोने में रखा जाता है।

काली

बौद्धों द्वारा इस देवी की पूजा गुह्येश्वरी के रुप में की जाती है। उसे ''अन्टी'' नामक एक लंबी गर्दन वाले तांबे की सुराही द्वारा दर्शाया जाता है जो ''जांड़'' या देशी शराब से भरा हुआ रहता है। देवी का एक अन्य स्वरुप नेपाल की काठमांडू घाटी में ''तलेजु भवानी'' के रुप में बहुत प्रसिद्ध है। विभिन्न योगिनियों यथा–वज्रयोगिनी (तिब्बती–दोर्जे नालजोर्मा), वज्रवराही (तिब्बती–दोर्जे पग्मो), भैरवी और अजीमा को संरक्षक देवियाँ माना जाता है।[6] यहाँ मैं वज्रयोगिनी, वज्रवराही और अजीमा का संक्षिप्त परिचय देना चाहता हूँ।

वज्र योगिनी

वह ज्ञान, ऊर्जा या शून्यता का प्रतिनिधित्व करती है। देवी को नग्न रुप में दर्शाया गया है। उसके शरीर का रंग लाल है। वह भैरव और उनकी शक्ति को रौंदते हुए सूर्यचक्र पर खड़ी है। वह अस्थियों के गहनें, एक मुकुट, एक घाघरा और इक्यावन मानव खोपड़ियों की माला पहनती है। अपने दाहिने हाथ में एक घुमावदार चाकू रखती है और बाएं हाथ में रक्त पान हेतु खोपड़ी का प्याला रखती है। उसे एक भाव पर नाचते हुए धनुष–बाण धारण किए हुए दिखाया गया है।

वज्रवराही (चित्र सं. 02)

तिब्बत के यमद्रोक झील मठ में उनका उल्लेख एक स्त्री अवतारिणी के रुप में किया गया है और उन्हें वज्रवराही भी कहा जाता है। उनके दाहिने कान के ऊपर एक छोटी शुकरी का सिर है। अपने सामान्य रुप में उनके तीन मुख हैं, जिनमें से बायां मुख शुकरी का है। उनकी आठ भुजाऐं हैं जिनमें विभिन्न शस्त्र धारण किए है। वह बाएं पैर को मोड़कर बैठती है, जबकि दाहिना पैर नीचे लटक रहा होता है। देवी सात सूअरों द्वारा खींचे गए कमल के सिंहासन पर विराजमान है।[7]

वज्रवराही नृत्य मुद्रा में

कुरकुल्ला तारा (चित्र सं. 03)

साधनमाला में इन्हें लाल तारा भी कहा गया है। सिर पर अमिताभ की प्रतिमूर्ति से वह उनसे उत्पन्न मालूम पड़ती है। इनकी पूजा से वशीकरण मंत्र में सफलता मिलती है। भारत में इनकी मूर्ति अलभ्य है। नेपाली चित्रकला से पता चलता है कि शड़भुजी कुरकुल्ला की मौली पर ''पाँचों ध्यानी बुद्ध'' खुदे हैं।[8]

कुरकुल्ला तारा

अपराजिता (चित्र सं. 04)

अपराजिता वज्रयान संप्रदाय की एक लोकप्रिय देवी हैं। अष्टकुरकुल्ला के साथ ध्यान मंत्रों में इनका नाम आता है तथा वहां इनकी मौली पर रत्नसंभव की प्रतिमूर्ति खुदी है, अन्यथा ये देवी स्वतंत्र मानी जाती। कला में अपराजिता को विचित्र रीति से उपस्थित किया गया है। उस देवी की हिन्दू देवता को पद्दलित करती हुई मूर्ति का निर्माण किया गया है। *साधनमाला* में उल्लेख है कि इनका रंग पीला है, दो हाथ हैं। दाहिने हाथ से किसी पर प्रहार कर रही है। उस समय इनका चेहरा भयंकर रुप में दिखाई देता है। वे अपने पैर के नीचे हिन्दू देवता गणेश को कुचल रही है।[9] इस प्रकार की मूर्ति पटना तथा नालंदा संग्रहालय में पाषाण तथा धातु मूर्तियों के रुप में संग्रहीत हैं। सम्भवतः यह प्रतिमा आठवीं सदी की है।

अपराजिता, हिन्दू देवता गणेश को पद्दलित करती हुई

अजीमा

यह बौद्ध देवी बच्चों की चेचक और अन्य महामारियों से रक्षा करती है। वह प्रजनन शक्ति का भी प्रतिनिधित्व करती है। वह हिन्दू देवी शीतला या हारीति के समान है। अजीमा और हारीति के मंदिर स्वयंभू, बौद्धनाथ और काठेसिम्बु (नेपाल) में हैं।

उषा (मारीचि) (चित्र सं. 05)

वैरोचन नामक ध्यानी बुद्ध से केवल देवियों की उत्पत्ति हुई। उनमें मारीचि सर्वप्रधान देवी मानी जाती है। इनकी लोकप्रियता के कारण मारीचि वैरोचन की शक्ति बताई गयी हैं। उत्तर भारत के संग्रहालयों में मारीचि की मूर्तियाँ संग्रहीत है। हिन्दू देवी उषा को वज्रयान सम्प्रदाय में मारीचि के रुप में जाना जाता है। वह स्वर्ग की रानी या उषा काल की देवी है। उसे तिब्बती बौद्धों द्वारा ''ओड्–ज़ेर–चन–मा'' नाम दिया गया है और सूर्योदय के समय सूर्य के साथ उसका संबंध दिखाते हुए आह्वान किया जाता है। सूर्य के समान उसका भी एक रथ है, परन्तु सात घोड़ों के स्थान पर वह सात सुअरों द्वारा खीचा जाता है।[10] सूर्य का सारथी बिना पैरों वाला अरुण है जबकि मारीचि का सारथी या तो बिना पैरों वाली देवी है या बिना शरीर वाला राहु का सिर। राहु सारथी के रुप में सभी मूर्तियों में दिखलाई देते हैं। अन्य देवियाँ साथ में खड़ी हैं। मारीचि के अनेक रुप हैं। एक मुख और दो भुजा वाली मूर्ति अशोककान्ता मारीचि कही जाती हैं।

उशा (मारीचि)

तारा (चित्र सं. 06)

तारा का उल्लेख मध्ययुग में प्रचलित हुआ। बौद्ध कला में तारा को दो रुपो में दिखाया गया है। पहला जो रौद्र या भयंकर रुप में है और दूसरा रुप जो शांत एवं गम्भीर है। साधनमाला में इनका वर्णन किया गया है कि तारा के मंत्र के पाठ से मानव सभी कठोर असहाय दुखों से मुक्त हो जाता हैं। उस व्यक्ति की धारणाएँ परिवर्तित हो जाती है तथा कठोरता से मृदुलता आती है। धर्म की ओर झुकाव के साथ वह भाग्यशाली एवं ऐश्वर्ययुक्त हो जाता है। मूर्तिकला में तारा को अत्यंत सुदंर ढंग से बनाया गया है। ब्राह्मण धर्म में दस महाविद्या शक्तियों की कल्पना में तारा को दूसरा स्थान मिला है। तारा की प्रतिमा अर्द्धपर्यंक आसन में दोहरे कमल पर बैठी हुई दिखाई गयी है। सिर के पीछे केश लम्बें दृष्टिगोचर होते हैं जिस पर ध्यानी बुद्ध की प्रतिमूर्ति खुदी है। तारा देवी का दहिना हाथ सदा वरदमुद्रा में तथा बायां नागपुष्पयुक्त

दिखाई देता है।[11] केशग्रन्थि (मौली) पर स्थित ध्यानी बुद्ध से ही तारा के विभिन्न रुपों का नामकरण किया गया है। ज्यादातर तारा अक्षोभ्य तथा अमोघसिद्धि से उत्पन्न हुई है। पंचध्यानी बुद्ध से भी कुछ की उत्पत्ति मानी जाती है। नालंदा से तारा की खड़ी प्रतिमाएँ भी प्राप्त हुई हैं।

तारा, शांत एवं गम्भीर मुद्रा में

इन देवियों के अतिरिक्त गंगा और वसुधरा की भी पूजा की जाती है तथा जिन्हें वज्रयान संप्रदाय में सम्मिलित किया गया है।

उपरोक्त विवरण ने हमें यह विश्वास करने के लिए विवश किया कि बौद्ध धर्म और ब्राह्मणवाद का आपस में समन्वयकारी संबंध था। सम्भवतः 600 ईस्वी से 900 ईस्वी तक वज्रयानियों ने ब्राह्मण देवियों को सम्मिलित किया। इनका अध्ययन करने पर यह पता चलता है कि भारत और नेपाल दोनों देशों के मध्य प्राचीन काल से अच्छे संबंध रहे है। ब्राह्मण तथा बौद्ध धर्म में इन देवियों के नाम में केवल अन्तर है। मूर्तियों के आकार–प्रकार एवं कार्य एक जैसा दिखाई पड़ता है। ब्राह्मण तथा बौद्ध धर्म वर्तमान में भी नेपाल एवं भारत में विद्यमान है।

❒

सन्दर्भ –

1. भट्टाचार्य, डी.सी., 1973, तांत्रिक बुद्धिष्ट आइकोनोग्राफिक सोर्सेज, दिल्ली, पृ. 88

2. कुमारस्वामी, ए.के., 1979, एलिमेन्ट् ऑफ बुद्धिष्ट आइकोनोग्राफी, दिल्ली, पृ. 18

3. गुप्ते, आर.एस. 1972. आइकोनोग्राफी ऑफ हिन्दू, बुद्धिष्ट एण्ड जैन्स, बॉम्बे : डी.बी. तारापोरवाला सन्स एंड कंपनी, पृ. 56

4. मजुपुरिया, टी.सी. और इंद्र, 1993, होली प्लेसज ऑफ बुद्धिज्म इन नेपाल एण्ड इण्डिया, बैंकॉक : टीईसी प्रेस सेवा, पृ. 87

5. चंद्रा, लोकेश, 1999, बुद्धिष्ट आइकोनोग्राफी, नई दिल्ली : इण्डियन कल्चर अकादमी और आदित्य प्रकाशन, पृ. 43

6. तेनजिन, सांगे खेम्पो और ओलेशी गोमचेन, 1988, डेटिज एण्ड डिवाइनिटिज ऑफ तिब्बत, काठमांडू : रत्न पुस्तक भंडार, पृ. 42

7. वाडेल, एल.ए. 1895, द बुद्धिज्म ऑफ तिब्बत और लामाइज्म, लंदन, पृ. 43

8. सिंह, विनय कुमार, 2007, बौद्ध तान्त्रिक देव प्रतिमाओं का अध्ययन, वाराणसी : कला प्रकाशन, पृ. 121

9. वही, पृ. 233

10.भट्टाचार्य, बिनयतोष(सं0), 1925–28, साधनमाला, भाग–1 और 2, बड़ौदा, पृ. 285–86

11.उपाध्याय, वासुदेव, 1970,प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान, (प्रथम संस्करण)ण वाराणसी : चौखम्बा संस्कृत सीरीज, पृ. 203–04

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 52–60

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

उत्तर प्रदेश में क्षेत्रीय राजनीतिक दल के रूप में अपना दल (सोनेलाल)-एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

रानी गुप्ता
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, गुरू घसीदास केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिलासपुर
Email- anukritirani1571996@gmail.com Mb. 8707331250

डॉ. सांत्वना पाण्डे
सहा.प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, गुरू घसीदास केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिलासपुर

सारांश

उत्तर प्रदेश क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का पाँचवां बड़ा राज्य एवं जनसंख्या की दृष्टि से पहला राज्य है। उत्तर प्रदेश में विभिन्न जाति, धर्म, भाषा, समुदाय, नस्ल, एवं क्षेत्र के लोग रहते हैं, तथा ये उत्तर प्रदेश में बहुल समाज की तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। सांस्कृतिक बहुलवाद, क्षेत्रीय और आर्थिक असंतुलन के साथ इन कारकों की राजनीतिक विविधता ना केवल राष्ट्रीय राजनीतिक विविधता को जन्म देती है, बल्कि यह केन्द्र से राज्य तक प्रवेश करते हुए क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का भी गठन करती है। स्वंतत्रता उपरांत उत्तर प्रदेश में कई महत्वपूर्ण क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का उदय हुआ। जिन्होंने राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर की राजनीति को निरन्तर प्रभावित किया है। आधिकारिक आँकड़ों के अनुसार उत्तर प्रदेश को चार क्षेत्रों में विभाजित किया गया है– पश्चिमी क्षेत्र, मध्य क्षेत्र, पूर्वी क्षेत्र (पूर्वांचल) एवं बुन्देलखण्ड क्षेत्र। अंतिम दो क्षेत्रों को आधिकारिक तौर पर पिछड़ा क्षेत्र घोषित किया गया है। यह क्षेत्रीय विभाजन वर्तमान राजनीति में भी प्रयोग की जा रही है। प्रस्तुत शोध पत्र 'उत्तर प्रदेश की राजनीति' में पूर्वांचल क्षेत्र में जाति की राजनीति तथा सामाजिक न्याय पर आधारित एक क्षेत्रीय राजनीतिक दल का अध्ययन है। जो 'उत्तर प्रदेश की राजनीति' में एक नया राजनीतिक प्रतिमान स्थापित कर रहा है। अन्य राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय राजनीतिक दलों के प्रभाव को भी कम कर रहा है, साथ ही एक नये राज्यस्तरीय (क्षेत्रीय) राजनीतिक दल के रूप में अपनी अलग पहचान स्थापित कर रहा है।

मुख्य शब्द – अपना दल (सोनेलाल), राजनीतिक दल, क्षेत्रीय दल, लोकतंत्र, सामाजिक–न्याय, जाति की राजनीति।

प्रस्तावना

भारत एक लोकतांत्रिक देश है। राजनीतिक दल लोकतंत्र की आवश्यक संस्था हैं। बिना राजनीतिक दलों के लोकतंत्र का अस्तित्व नहीं हो सकता, न तो सिद्धांतों की संगठित अभिव्यक्ति एवं न ही नीतियों का व्यवस्थित विकास हो सकता है। (सईद, 2016). राजनीतिक दलों का मूल उद्देश्य राजनीतिक सत्ता को प्राप्त करना होता है। पिछले कुछ दशकों से उत्तर प्रदेश की राजनीति में पहचान की राजनीति, विकास की राजनीति, जाति की राजनीति एवं सामाजिक न्याय पर आधारित क्षेत्रीय राजनीतिक दल अपना प्रभुत्व स्थापित कर रहे हैं। जो वर्तमान समय में राष्ट्रीय दल एवं अन्य वृहद क्षेत्रीय राजनीतिक दलों के विफलता का संकेत है। ये एकल जाति क्षेत्रीय राजनीतिक दल कुछ सामाजिक हित समूह के साथ कार्य कर रही है एवं अब राष्ट्रीय दलों के लिए वोट बैंक बनने को तैयार नहीं है। योगेन्द्र यादव ने अपने लेख ''डेमोक्रेटिक अपसर्ज (Democratic Upsurge)'' के अंतर्गत भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद दो लोकतान्त्रिक उत्थानों का वर्णन किया है। जिसमें पहला लोकतान्त्रिक उत्थान 1960 के दशक के अंत में हुआ जबकि दूसरा लोकतांत्रिक उत्थान 1996–1998 के दौरान हुआ। पहले ने ओ.बी.सी. की अधिक चुनावी लामबंदी के कारण कांग्रेस प्रणाली के अंत की शुरुआत का संकेत दिया, जहाँ दूसरे लोकतांत्रिक उतार–चढ़ाव ने अधिक राजनीतिक विकल्पों की उपलब्धता का संकेत दिया। ए.के. वर्मा द्वारा अपने लेख ''थर्ड डेमोक्रेटिक अपसर्ज इन उत्तर प्रदेश'' में तीसरे लोकतांत्रिक उत्थान का वर्णन किया गया है, जिसकी शुरुआत 2009 से ही देखी गई। इस लेख में लघु राजनीतिक दलों का भी उल्लेख किया गया है। इन राजनीतिक दलों का राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर सकारात्मक प्रभाव रहता है। (वर्मा, 2016)

उत्तर प्रदेश की राजनीति में क्षेत्रीय राजनीतिक दलों की स्थिति राष्ट्रीय दलों की अपेक्षा बहुत ही सही है। उत्तर प्रदेश की राजनीति में क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का उदय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी में विभाजन, क्षेत्रीय अस्मिता की समस्या, राष्ट्रीय दलों द्वारा क्षेत्रीय मुद्दो को नजरंदाज कर दिए जाने एवं क्षेत्रीय हितों की पूर्ति के कारण शुरू हुआ। उत्तर प्रदेश में 1967 में सर्वप्रथम गैर–कांग्रेसी सरकार बनी, जो चौधरी चरण सिंह की पार्टी भारतीय क्रांति दल थी। उत्तर प्रदेश की राजनीति में राष्ट्रीय लोकदल, बहुजन समाज पार्टी, समाजवादी पार्टी, अपना दल (सोनेलाल), अपना दल (कमेरावाद), सुहेलदेव भारतीय समाज पार्टी, निषाद पार्टी आदि क्षेत्रीय राजनीतिक दल सक्रिय है। जो राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर की राजनीति को प्रभावित करने में अपनी सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में उत्तर प्रदेश में क्षेत्रीय राजनीतिक दल के रूप में अपना दल (सोनेलाल) के उदय, स्थिति एवं प्रभाव का अध्ययन किया गया है। अपना दल (सोनेलाल) सामाजिक न्याय एवं शोषितों के हित पर आधारित एक क्षेत्रीय राजनीतिक दल है। जो केन्द्रीय मंत्री अनुप्रिया पटेल जी द्वारा संचालित है।

साहित्यिक समीक्षा

ए.के. वर्मा द्वारा लिखित लेख, ''थर्ड डेमोक्रेटिक अपसर्ज इन उत्तर प्रदेश (2016)'' में उत्तर प्रदेश के तीसरे लोकतांत्रिक उत्थान का वर्णन है। इस लेख में छोटे एवं मार्जन्लाइज्ड क्षेत्रीय दलों के उदय का वर्णन किया गया है। इन दलों का उत्तर प्रदेश के तीसरी लोकतांत्रिक उत्थान (Third Democratic Upsurge) में सकारात्मक प्रभाव रहा है।

एस. जी द्वारा लिखित लेख, ''उत्तर प्रदेश : राइज ऑफ स्मॉलर पार्टीज (1999)'' के अन्तर्गत छोटे एवं एकल जाति पर आधारित क्षेत्रीय राजनीतिक दलों के उदय का वर्णन है। जिसमे डॉ. सोनेलाल पटेल द्वारा स्थापित पार्टी अपना दल एवं डॉ. प्रेमचन्द्र बिन्द द्वारा गठित पार्टी प्रगतिशील मानव समाज पार्टी का वर्णन किया गया है। सुहास पाल्शीकर द्वारा लिखित लेख, ''बियांड उत्तर प्रदेश न्यू इंप्लीकेशंस फॉर पार्टी पॉलिटिक्स (2007)'' में उत्तर प्रदेश की दलीय राजनीति का वर्णन है। उत्तर प्रदेश के क्षेत्रीय राजनीतिक दल बहुजन समाज पार्टी (बसपा) के 'दलित राजनीति' का उल्लेख किया गया है। संजय कुमार द्विवेदी द्वारा लिखित लेख, ''इमर्जिंग ट्रेंड्स ऑफ पॉलिटिक्स इन उत्तर प्रदेश (2011)'' के अन्तर्गत बताया गया है कि उत्तर प्रदेश की राजनीतिक में नब्बे के दशक में क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का उदय हुआ तथा उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव (2007) में कई राजनीतिक परिवर्तन देखने को मिला।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध–पत्र के निम्नलिखित उद्देश्य हैं –

1. अपना दल (सोनेलाल) के उद्भव का अध्ययन करना।
2. उत्तर प्रदेश के क्षेत्रीय राजनीतिक दल के रूप में अपना दल (सोनेलाल) की स्थिति एवं प्रभाव का अध्ययन करना।

अपना दल (सोनेलाल) का उदय

उत्तर प्रदेश में यादवों के बाद पिछड़े वर्ग में सबसे बड़ी जनसंख्या कुर्मी समाज की है। इनकी संख्या लगभग 6 फिसदी है। उत्तर प्रदेश का पूर्वी क्षेत्र या जिसे पूर्वांचल के नाम से जाना जाता है, कुर्मी बाहुल्य है। अपना दल (सोनेलाल), उत्तर प्रदेश के पूर्वी क्षेत्र में सक्रिय एक क्षेत्रीय राजनीतिक दल है। अपना दल (सोनेलाल) का काफी लम्बा इतिहास रहा है। 2016 में अपना दल (सोनेलाल), अपना दल से विघटित हुई पार्टी है। सन् 1995 में डॉक्टर सोनेलाल पटेल एवं बलिहारी पटेल ने साथ मिलकर अपना दल का गठन किया। अपना दल की स्थापना से पूर्व डॉ. सोनेलाल पटेल बहुजन समाज पार्टी में थे। परन्तु बसपा संस्थापक कांशीराम से कुछ बातों पर मत–भेद के कारण डॉ. सोनेलाल बसपा से सम्बन्ध समाप्त कर, सामाजिक न्याय पर आधारित, समाज के दबे–कुचले कमजोरों तथा पिछड़ों को लेकर अपना दल नामक एक राजनीतिक दल की नींव रखी। अपना दल के गठन के पूर्व डॉ. सोनेलाल द्वारा लखनऊ के बेगम हजरत महल पार्क में एक कुर्मी क्षेत्रीय महारैली का आयोजन किया गया। जिसमें बहुत बड़ी संख्या में जनता इकट्ठा हुई। बाद में इस रैली को बी.बी.सी. न्यूज द्वारा सबसे बड़ी जातीय रैली कहा गया। यही जातीय रैली अपना दल के स्थापना का आधार बनी। लोकतंत्र में 'सामाजिक न्याय' एक ऐसी संकल्पना है जिसमें बिना जाति, रूप–रंग, वर्ग, लिंग, संप्रदाय, धर्म, वंश व वेश–भूषा स्थान आदि विभेद के सर्वांगीण विकास करना है। सामाजिक न्याय में सभी क्षेत्रों जैसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं तकनीकि का समागम होता है। जिससे व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के विकास हेतु कोई बाँधा उत्पन्न ना हो सके।

डॉ. सोनेलाल पटेल उत्तर प्रदेश के विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र एवं लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र से लगातार चुनाव लड़ते रहे। परन्तु जीत प्राप्त नही कर सके। सन् 2009 में डॉक्टर सोनेलाल पटेल फूलपुर (लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र) से लोकसभा चुनाव लड़े, वहाँ भी सोनेलाल को हार ही

मिली। सन् 2009 में ही डॉ. सोनेलाल पटेल की कार दुर्घटना में मृत्यु हो गई। तदोपरांत अपना दल की राष्ट्रीय अध्यक्ष सोनेलाल की पत्नी कृष्णा पटेल बनी। डॉ. सोनेलाल पटेल की पुत्री अनुप्रिया पटेल 16वीं विधानसभा निर्वाचन (2012) में वाराणसी के रोहनिया विधानसभा क्षेत्र से निर्वाचित हुई। सन् 2014 में अपना दल का भारतीय जनता पार्टी के साथ गठबंधन हुआ। अनुप्रिया पटेल वाराणसी के रोहनिया क्षेत्र में विधायक रहते हुए, 16वीं लोकसभा चुनाव (2014) में मिर्जापुर (लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र) से निर्वाचित हुई एवं लोकसभा की सदस्य बनीं। अनुप्रिया पटेल के लोकसभा सदस्य बनने के बाद रोहनिया विधानसभा क्षेत्र के लिए अपना दल में उम्मीदवार को लेकर कृष्णा पटेल और अनुप्रिया पटेल के मध्य विवाद उत्पन्न हुआ। बाद में अपना दल की पार्टी दो दलों में विभाजित हो गयी– पहला, कृष्णा पटेल के नेतृत्व में अपना दल (कमेरावादी) एवं दूसरा, अनुप्रिया पटेल के नेतृत्व में अपना दल (सोनेलाल)। अपना दल (सोनेलाल) की स्थापना जवाहर लाल पटेल द्वारा 2016 में की गई, तथा अपना दल (सोनेलाल) की राष्ट्रीय अध्यक्ष अनुप्रिया पटेल बनी। अपना दल (सोनेलाल) का विचार सामाजिक न्याय की विचारधारा पर आधारित है। अनुप्रिया पटेल सन् 2016 से 2019 तक भारत सरकार के स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय में राज्य मंत्री थीं। अनुप्रिया पटेल अपना दल (सोनेलाल) की पार्टी से सत्रहवीं लोकसभा (2019) में मिर्जापुर (लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र) से पुनः निर्वाचित हुई। अपना दल (सोनेलाल) को मुख्य रूप से वाराणसी–मिर्जापुर क्षेत्र के ओ.बी.सी. समुदायों का समर्थन मिलता है। अनुप्रिया पटेल वर्तमान में भारत सरकार के वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय की राज्य मंत्री हैं। अपना दल (सोनेलाल) ने 2022 के विधानसभा चुनाव में एक छोटे राजनीतिक दल से राज्य स्तरीय पार्टी का सफर तय किया है।

तालिका क्र0 1

उत्तर प्रदेश के 17वीं विधानसभा में राजनीतिक दलों का प्रदर्शन (2017)

क्रं.	राजनीतिक दलों के नाम	सीटों की संख्या
1.	भारतीय जनता पार्टी	303
2.	समाजवादी पार्टी	47
3.	बहुजन समाज पार्टी	14
4.	अपना दल (सोनेलाल)	9
5.	भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस	6
6.	सुहेलदेव भारतीय समाज पार्टी	4
7.	निर्दलीय	3
8.	असम्बद्ध सदस्य	2
9.	निर्बल इण्डियन शोषित हमारा आम दल	1
	योग	**390**

स्त्रोत– http://uplegisassembly.gov.in/Members/main_members_en- asp´#/ElectedMembers/17

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि अपना दल (सोनेलाल) उत्तर प्रदेश के 17वीं विधानसभा निर्वाचन (2017) में तीसरी बड़ी क्षेत्रीय राजनीतिक दल के रूप में उभर कर प्रकट हुई है। उत्तर प्रदेश के विधानसभा के कुल सीटों में भाजपा 303, समाजवादी पार्टी 47 तथा बहुजन समाज पार्टी 14 सीट प्राप्त कर अपना दल (सोनेलाल) की पार्टी से आगे रहे। बसपा तथा अपना दल (सोनेलाल) के द्वारा प्राप्त सीटों में बहुत अंतर नही है। जहाँ अपना दल (सोनेलाल) को 17 वीं विधानसभा निर्वाचन में 9 सीटें प्राप्त हुई, वहीं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को 6 ही सीटे प्राप्त हो सकी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस एक राष्ट्रीय दल होते हुए भी अपना दल (सोनेलाल) से पीछे रहा।

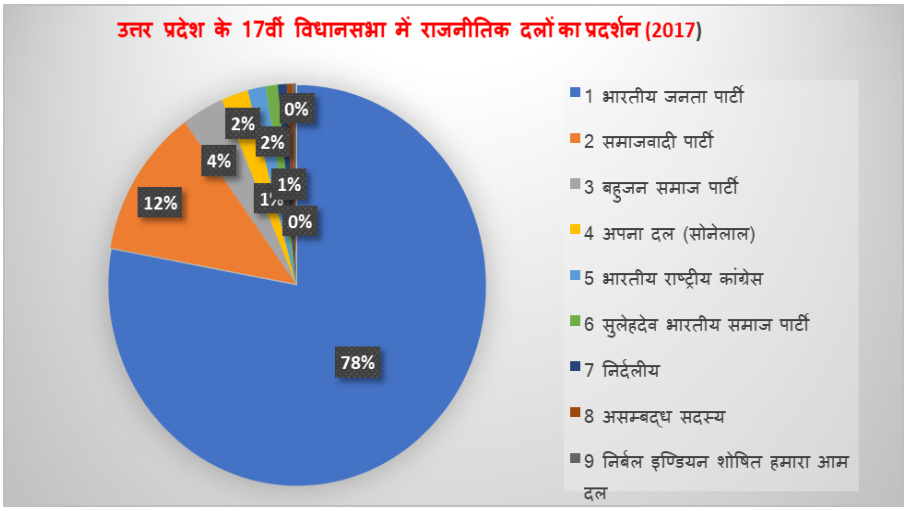

तालिका क्र. 2

उत्तर प्रदेश के सत्रहवीं विधानसभा निर्वाचन (2017) में अपना दल (सोनेलाल) के सदस्य

क्रं.	सदस्य का नाम	विधानसभा क्षेत्र	जिला	मत	मत दर प्रतिशत	अंतर
1.	अमरसिंह चौधरी	शोहरतगढ़	सिद्धार्थ नगर	67,655	36.23	22,124
2.	जमुनाप्रसाद सरोज	सोरांव	इलाहबाद	77,814	36.59	17,735
3.	जयकुमार सिंह	जहानाबाद	फतेहपुर	81,438	44.87	47,606
4.	नीलरतन सिंह पटेल	सेवापुरी	वाराणसी	1,03,427	50.08	49,182
5.	आर.के.वर्मा	विश्वनाथगंज	प्रतापगढ़	81,899	41.65	23,358
6.	राहुल प्रकाश	छानबे	मिर्जापुर	1,07,007	49.59	63,468
7.	लीना तिवारी	मारीयाहूं	जौनपुर	58,804	32.66	11,350
8.	हरीराम	दुद्धी	सोनभद्र	64,399	32.76	1,085
9.	राजकुमार पाल	प्रतापगढ़	प्रतापगढ़	80,828	43.65	34,554

स्त्रोत– http://uplegisassembly.gov.in/Members/main_members_en- asp´#/ElectedMembers/17

तालिका क्रमांक 2 में उत्तर प्रदेश के 17वीं विधानसभा निर्वाचन में अपना दल (सोनेलाल) के निर्वाचित सदस्यों का विवरण है। अपना दल (सोनेलाल) राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन की एक बड़ी सहयोगी दल है। 17वीं विधानसभा निर्वाचन में अपना दल सोनेलाल को 11 सीटें प्राप्त हुई जिसमें से इसने 9 सीट पर जीत हासिल की। सिद्धार्थ नगर, इलाहाबाद, वाराणसी, फतेहपुर, प्रतापगढ़, मिर्जापुर, जौनपुर एवं सोनभद्र जिले के विधानसभा क्षेत्र से विधायक निर्वाचित हुए हैं।

वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में अपना दल (सोनेलाल) की स्थिति

अपना दल सोनेलाल को वर्तमान समय में तीसरी राज्य स्तरीय राजनीतिक पार्टी के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है। वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में अपना दल सोनेलाल की स्थिति एवं प्रभाव अन्य छोटे क्षेत्रीय राजनीतिक दलों की अपेक्षा बहुत ही अच्छी है। अनुप्रिया पटेल के नेतृत्व में पार्टी बहुत कम समय में ही व्यापक रूप से विस्तार की है। उत्तर प्रदेश के विभिन्न राजनीतिक पटल पर पार्टी का प्रभाव है। अपना दल (सोनेलाल) की पार्टी राष्ट्रीय लोकतान्त्रिक गठबंधन के साथ मिलकर राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय मुद्दों पर निरन्तर कार्य कर रही है।

2019 में हुई लोकसभा निर्वाचन में अपना दल सोनेलाल को लोकसभा में दो सीटें प्राप्त हुई जो तालिका क्र. 3 में वर्णित किया गया है –

तालिका क्र. 3

सत्रहवीं लोकसभा (2019) में अपना दल (सोनेलाल) के सदस्य

क्र.	सदस्य के नाम	निर्वाचन क्षेत्र	दल
1.	अनुप्रिया पटेल	मिर्जापुर	अपना दल (सोनेलाल)
2.	पकौड़ी लाल	राबर्टस्गंज	अपना दल (सोनेलाल)

अपना दल सोनेलाल की पार्टी ने सत्रहवीं लोकसभा में दो सीटों पर चुनाव लड़ा और दोनों ही सीटों पर निर्वाचित हुए। अपना दल सोनेलाल की राष्ट्रीय अध्यक्ष अनुप्रिया पटेल मिर्जापुर लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र से सासंद हुई तथा पकौड़ी लाल राबर्ट्सगंज लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र से सासंद हुए। अनुप्रिया पटेल को वर्तमान सरकार के मंत्रिमंडल में 7 जुलाई 2021 से वाणिज्य एवं उद्योग राज्य मंत्री का स्थान भी प्राप्त है।

तालिका क्र0 4

उत्तर प्रदेश के 18वीं विधानसभा में राजनीतिक दलों का प्रदर्शन (2022)

क्र.	राजनीतिक दलों के नाम	सीटों की संख्या
1.	भारतीय जनता पार्टी	255
2.	समाजवादी पार्टी	111
3.	अपना दल (सोनेलाल)	12
4.	राष्ट्रीय लोकदल	8
5.	निर्बल भारतीय शोषित हमारा आम दल	6
6.	सुहेलदेव भारतीय समाज पार्टी	6
7.	भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस	2

क्रं.	राजनीतिक दलों के नाम	सीटों की संख्या
8.	जनता दल लोकतांत्रिक	2
9.	बहुजन समाज पार्टी	1
	योग	**403**

उपर्युक्त तालिका के अंतर्गत उत्तर प्रदेश के अठारहवीं विधानसभा निर्वाचन (2022) में राजनीतिक दलों के द्वारा प्राप्त सीटों का विवरण है। जहाँ अपना दल सोनेलाल एक लघु क्षेत्रीय राजनीतिक दल होते हुए भी राष्ट्रीय राजनीतिक दल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस एवं बहुजन समाज पार्टी से आगे रही। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस एवं बहुजन समाज पार्टी को क्रमशः दो एवं एक सीटें प्राप्त हुई वहीं अपना दल सोनेलाल को 12 सीटें प्राप्त हुई। अपना दल (सोनेलाल) को राज्यस्तरीय राजनीतिक दल की स्थिति प्राप्त हुई। 18वीं विधानसभा निर्वाचन में अपना दल (सोनेलाल) को 18 सीटों पर चुनाव लड़ना था, परन्तु प्रतापगढ़ विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र से अपना दल (कमेरावाद) की राष्ट्रीय अध्यक्ष एवं अनुप्रिया पटेल की माता कृश्णा पटेल उम्मीदवार के रूप में सामने आयी। पारिवारिक मतभेद के कारण अनुप्रिया पटेल प्रतापगढ़ विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र से अपना दल (सोनेलाल) के उम्मीदवार का नाम वापस ले लेती है। जबकि 17वीं विधानसभा निर्वाचन (2017) में अपना दल (सोनेलाल) के सदस्य की ही जीत हुई थी। तालिका क्रमांक 5. में अपना दल (सोनेलाल) के अठारहवीं विधानसभा निर्वाचन में निर्वाचित सदस्यों का विवरण दिया गया है।

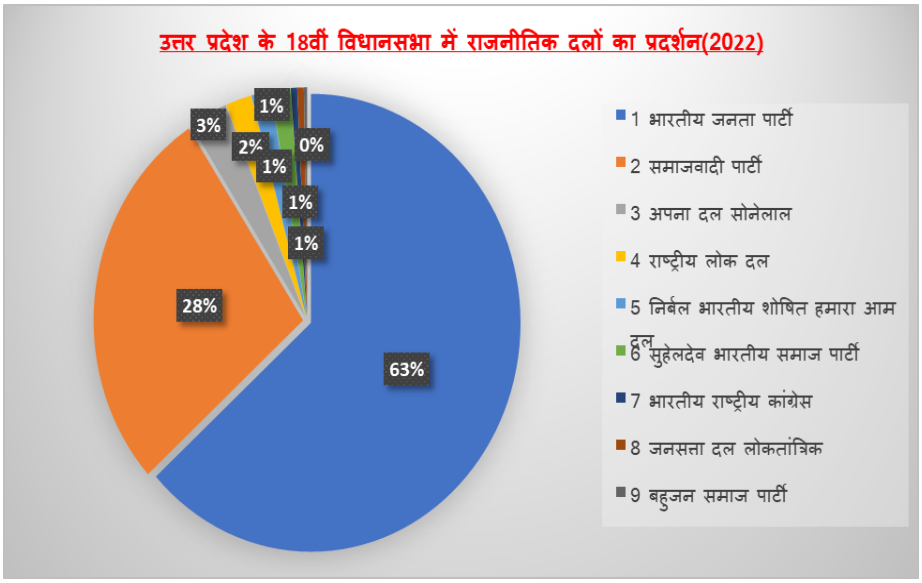

तालिका क्र0 5

उत्तर प्रदेश के अठारहवीं विधानसभा (2022) निर्वाचन में अपना दल (सोनेलाल) के सदस्य

क्रं.	सदस्य का नाम	विधानसभा क्षेत्र	जिला	मत	मत दर प्रतिशत	अंतर
1.	वाचस्पति	बारा	प्रयागराज	89,203	43.49	12,524
2.	जयकुमार सिंह	बिंदकी	फतेहपुर	78,165	40.96	3,797
3.	सरोज कुरील	घाटमपुर	कानपुर	81,727	41.60	14,474
4.	डॉ.सुरभी	कैमगंज	फर्रूखाबाद	1,14,952	47.65	18,543
5.	रश्मि आर्य	माऊरानी	झांसी	1,43,577	51.83	58,595
6.	विनय वर्मा	शोहरतगढ़	सिद्धार्थ नगर	71,062	37.46	24,463
7.	जीतलाल	विश्वनाथगंज	प्रतापगढ़	86,829	43.21	48,052
8.	डॉ.सुनील पटेल	रोहनिया	वाराणसी	1,18,663	48.08	46,472
9.	श्राम निवास वर्मा	नानपारा	बहराइच	87,689	43.91	12,184
10.	राहुल प्रकाश	छानबे	मिर्जापुर	1,02,502	47.29	38,113
11.	डॉ.आर.के.पटेल	मारीयाहू	जौनपुर	76,007	39.25	1,206
12.	अविनाशचन्द्र	मानिकपुर	चित्रकुट	73,132	35.17	1,048

स्त्रोत– http://uplegisassembly.gov.in/Members/main_members_en- asp´#/ElectedMembers/17

उत्तर प्रदेश के 17 वीं एवं 18वीं विधानसभा चुनाव में उत्तर प्रदेश के जौनपुर जिले के मारीयाहूं, सिद्धार्थ नगर जिले के शोहरतगढ़, मिर्जापुर जिले के छानबे एवं प्रतापगढ़ जिले के विश्वनाथ गंज विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र में लगातार दो बार से अपना दल (सोनेलाल) के सदस्य विधायक रहे हैं।

केन्द्रीय मंत्री एवं अपना दल (सोनेलाल) की राष्ट्रीय अध्यक्ष अनुप्रिया पटेल पिछड़ा वर्ग एवं दबे–कुचले, वंचित वर्ग की एक नेता हैं। अनुप्रिया पटेल पिछड़े वर्ग से सम्बन्धित कई विषयों पर मुखर हो अपनी बात रखी हैं। अनुप्रिया पटेल ने पिछड़ा वर्ग मंत्रालय बनाने की माँग की। संसद में जाति जनगणना की भी माँग की। केन्द्रीय मंत्री अनुप्रिया पटेल ने शिक्षक भर्ती प्रक्रिया एवं नीट (NEET) में पिछड़े वर्ग के आरक्षण का मुद्दा उठाया तथा इसे लागू करवाने एवं केंद्रीय विश्वविद्यालयों में 200 प्वाइंट रोस्टर सिस्टम को पुनः लागू करवाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

निष्कर्ष

यह शोध पत्र उत्तर प्रदेश की राजनीति में अपना दल सोनेलाल के उदय, स्थितियाँ एवं प्रभाव के अध्ययन पर प्रकाश डालता है। अपना दल (सोनेलाल) सामाजिक न्याय की विचाध ाारा की राजनीति करता है। उत्तर प्रदेश की राजनीति में क्षेत्रीय राजनीतिक दल के रूप में तीव्र गति से प्रगति कर रहा है। यह दल फरवरी–मार्च 2022 में हुए उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव में राज्य की तीसरी पार्टी के रूप में सामने आया है। अपना दल (सोनेलाल) पूर्वी उत्तर प्रदेश में एक प्रभावशाली राज्य स्तरीय राजनीतिक दल है। केन्द्रीय मंत्री अनुप्रिया पटेल उत्तर प्रदेश

के मिर्जापुर लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र से 2014 एवं 2019 में लगातार दो बार सांसद निर्वाचित हुई है। उत्तर प्रदेश के विधानसभा में अपना दल सोनेलाल के सदस्यों की संख्या बढ़ रही है। विधान परिषद में भी अपना दल (सोनेलाल) के सदस्य हैं। वर्तमान समय में अपना दल (सोनेलाल) का प्रभाव एवं स्वीकार्यता बढ़ा है। धीरे–धीरे अपना दल (सोनेलाल) का स्वरूप उत्तर प्रदेश की राजनीति में एक विस्तृत आकार ले रहा है। भवि य में अपना दल (सोनेलाल) उत्तर प्रदेश की एक वृहद् क्षेत्रीय राजनीतिक दल के रूप में प्रकट होगा एवं अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करेगा।

❒

सन्दर्भ –

1. *ब्रांकटी, डॉन. (2008). द ऑरिजिंस एण्ड स्ट्रैंथ्स ऑफ रिजनल पार्टीज. ब्रिटिश जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस. 38. 135–159. https://www.jstor. org/stable/27568336*
2. *द्विवेदी, संजय कुमार. (2011), इमर्जिंग ट्रेंड्स ऑफ पॉलिटिक्स इन उत्तर प्रदेश. द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस. 72. 773–780. https://www.jstor.org/ stable/41858851*
3. *नारायण, बद्री. (2015). डेमोक्रेसी एण्ड आईडेंटिटी पॉलिटिक्स इन इंडिया इज इट अ स्नेक ऑर अ रोप?. इकॉनोमी एण्ड पॉलिटिकल वीकली. 50. 61–65. https://www.jstor.org/stable/24482067*
4. *पाई, सुधा. (1989). टुवर्ड्स अ थियोरेटिकल फ्रेमवर्क फॉर स्टडी ऑफ द स्टेट पॉलिटिक्स इन इंडिया. इंडियन पॉलिटिकल साइंस असोसिएशन. 50. 94–109. https://www.jstor.org/stable/41855409*
5. *सिंह, अजित कुमार. (2016). द डिमांड फॉर डिवीजन ऑफ उत्तर प्रदेश एण्ड इट्स इंप्लिकेशंस. इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली. 51. 124–129. https://www.jstor. org/stable/44166057*
6. *पाई, सुधा (1990). रीजनल पार्टीज एण्ड द इमर्जिंग पैटर्न ऑफ पॉलिटिक्स इन इंडिया. इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस. 51. 393–415. https://www.jstor. org/stable/41855505*
7. *व्यॉट, एंड्रयू (2019). स्मॉल पार्टीज एण्ड द फेडरल स्ट्रक्चर ऑफ द इंडियन स्टेट. राउटलेज टेलर एण्ड फ्रांसिस ग्रुप. 27. 66–72. https://doi.org/10.1080/09584935. 2019.1574713*
8. *वर्मा, ए0के0 (2017). थर्ड डेमोक्रेसी अपसर्ज इन उत्तर प्रदेश. इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली. 51. 44–49. https:// www.jstor.org/stable /44166050*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 61–67

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

भारत में सतत् औधोगिक विकास एवं पर्यावरण एक समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. के.एल. टाण्डेकर
प्राचार्य, शासकीय दिग्विजय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजनांदगांव (छ.ग.)
डॉ. (श्रीमती) मीना प्रसाद
सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, दिग्विजय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजनांदगांव (छ.ग.)

सारांश

औद्योगिक विकास आर्थिक विकास का मुख्य अंग है। आर्थिक विकास की अवस्था ही स्थानीय अथवा घरेलू बाजार का आकार निर्धारित करती है तथा व्यवसाय को प्रभावित करती है।[1] विश्व के देशों को विकसित व विकासशील देशों के रुप में विभाजन का मुख्य आधार औद्योगिक विकास को ही माना जाता है भारत में सतत् औद्योगिक विकास ने प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक व गैर योजनाबद्ध विदोहन से पर्यावरण असंतुलन व प्रदुशण की समस्या उत्पन्न कर दिया है। औद्योगिकरण से वायु, जल, मृदा सबसे ज्यादा प्रदूषित हुए है, देश के 180 से अधिक शहर गुणवत्ता मानको से 6 गुना अधिक प्रदुषित पाए गए है। 14 शहर विश्व के सबसे ज्यादा प्रदुषित शहरों में आगे है भारत में बढ़ता औद्योगिक विकास भूजल नदियो, नालो के जल को भी प्रदूषित कर रहे है। प्रकृति में जो कुछ भी हमें परिलक्षित होता वायु, जल, मृदा, पादक तथा प्राणी सभी सम्मलित रूप से पर्यावरण की रचना करते है।[2] यही कारण है कि प्रदुषित मृदा से उत्पादकता तथा गुणवत्ता कम हुई है तथा वन क्षेत्रों का लगातार विनाश भी औद्योगिक विकास को माना जा सकता है। किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए पूंजी निर्माण आवश्यक है, जो विशेषकर बचत निवेश पर निर्भर करता है। इसी माध्यम से उद्योगों की स्थापना सुगमता से की जा सकती है औद्योगिक संरचना उस देश के रोजगार एवं आय सृजन में सहायक होती है वर्तमान में भारत देश की आर्थिक स्थिति यह अभिव्यक्त करती है कि भारत की सतत् औद्योगिक विकास दर आर्थिक समृद्धि में, महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। औद्योगिक विकास को पर्यावरण के अनुकूल पर्यावरण मित्र बनाना होगा तथा दोनो को साथ–साथ लेकर चलना होगा।

शब्द कुंजी : औद्योगिक विकास, पर्यावरण संवर्धन सरंक्षण, ओजोन परत, प्राकृतिक संसाधन, भारतीय अर्थव्यवस्था, पंचवर्षीय योजना।

प्रस्तावना

औद्योगिक विकास की भूमिका राश्ट्रीय विकास में महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व है। वर्तमान औद्योगिक युग मे विश्व के प्रत्येक देश अधिकाधिक औद्योगिक विकास हेतु प्रयत्नशील है परन्तु औद्योगिक विकास व पर्यावरण प्रदुषण में सीधा संबध है। विकास से वायु–जल व मृदा सभी प्रदूषित हो रहे हैं। भारत के भू–भाग में अपार प्राकृतिक संसाधनो का भण्डार है। जिसे उद्योगों से संसाधित करके अनेक उपयोगी वस्तुओं में परिवर्तित किया जाता है। वैश्विक स्तर पर सतत् विकास को ही किसी देश की आर्थिक संपन्नता का पैमाना मान लिया जाता है। भारत विगत कई वर्षों से सतत् विकास के पथ पर आगे बढने का प्रयास कर रहा है और इसके सिद्धांतों को अपनी विभिन्न विकासोन्मुखी नितियों में शामिल करते आ रहा है। 15 अगस्त 1947 आजादी के बाद हमें गतिहिन अर्थव्यवस्था विरासित में मिली हुई थी। देश के सर्वागीण विकास हेतु सुदृढ अर्थव्यस्था रोजगार, आय, बचत एवं निवेश में वृद्धि से ही संभव थी। 1951 में पंचवर्षीय योजनाओं के बाद से ही भारत सरकार ने औद्योगिक विकास के प्रति विशेष रुचि दिखाई। भारत अपने प्राकृतिक संसाधनों की समृद्वि और अपने जैविक संसाधनों की प्रचुरता और विविधता में भाग्यशाली है, इनकी समुचित व्यवस्था कर भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकती है। सत्त औद्यौगिक विकास से पर्यावरण के क्षेत्र में अनेक गंभीर समस्या नकारात्मकता के कारण पैदा होती है।[3]

अवधारणा

भारतीय उद्योगों का अतीत अत्यंत गौरवमय रहा है भारत से उत्तम कोटि की अनेक कलात्मक वस्तुओं एवं वस्त्रों का निर्यात विदेशो को होता था इसके इतिहास में अनेक प्रमाण मिलते है एडवर्ड थार्नटन नामक अंग्रेजी इतिहास वेत्ता के अनुसार नील नदी की घाटी में पिरामिडो का अस्तित्व भी नहीं था जब आधुनिक सभ्यता के केन्द्र यूनान व रोम जंगली अवस्था में थे उस समय भी भारत वर्ष वैभव एवं सम्पन्नता का केन्द्र बना हुआ था।

भारत में स्वतंत्रता के पूर्व कुटीर उद्योग का विशेष योगदान था लेकिन जब अंग्रेजो ने भारत में शासन किया तो वे मशीनों के द्वारा कम समय में अधिक वस्तुए सफाई से बनाकर भारत में बेचने लगे जिसके कारण भारत के कुटीर उद्योगों की स्थिति दयनीय हो गई उनका व्यापार रूक गया भारत में गरीबी बढ़ी एवं विकास अवरूध सा हो गया।

प्राकृतिक संसाधनों का समुचित दोहन करके उससे अधिक उपयोगी एवं मूल्यवान वस्तुओ में परिवर्तित करना निर्माण कहलाता है, निर्मित वस्तुए कच्चे पदार्थो से तैयार की जाती है। प्रयुक्त होने वाले कच्चे माल या तो अपने प्राकृतिक रूप में सीधे उपयोग में लाए जाते है जैसे कपास, उन लौह अयस्क आदि अथवा अर्द्व संशोधित रूप में धागा, कच्चा लोहा जिन्हे उपयोग करके मूल्यवान वस्तुओं में बदला जाता है औद्यौगिक दृष्टि से अविकसित देश अपने प्राकृतिक संसाधनों का निर्यात करते है तथा निर्मित वस्तु पर अधिक कीमत देकर आयात करते है इसलिए आर्थिक रूप से ये देश पिछड़े बने रहते है।[4]

उद्देश्य

(1) भारत में सतत औद्योगिक विकास की वृद्वि दर का अध्ययन करना।

(2) भारतीय अर्थव्यवस्था में औद्योगिकरण की भूमिका का अध्ययन करना।

(3) सतत विकास से आर्थिक समानता गरीबी उन्मूलन लैगिक समानता , शिक्षा सामाजिक समानता तथा पर्यावरण संतुलन का अध्ययन करना।

(4) औद्योगिक विकास का मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

(5) औद्योगिक विकास का पर्यावरण पर प्रभाव का पता लगाना एवं पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन हेतु किए जा रहे प्रयास का अध्ययन करना।

(6) सतत औद्योगिक विकास से आय एवं रोजगार के अवसर बढ़े है इसका अध्ययन करना।

परिकल्पना

(1.) भारत में सतत औद्योगिक विकास की दर में वृद्वि हो रही है।

(2.) औद्योगिक विकास का पर्यावरण पर प्रभाव पड़ रहा है।

(3.) पर्यावरण संरक्षण के लिए सरकार द्वारा सकारात्मक प्रयास किए जा रहे है।

(4.) औद्योगिक विकास से रोजगार एवं आय सृजन हुआ।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य भारत में सतत औद्योगिक विकास का पर्यावरण एवं मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना है प्रस्तुत शोध औद्योगिक विकास विभाग के द्वारा प्रकाशित द्वितियक संमको के विश्लेशण पर आधारित है।

भारत में सतत औद्योगिक विकास

भारतीय उद्योगों का अतीत अत्यंत गौरवशाली है भारत से उत्तम कोटि की अनेक कलात्मक वस्तुओं एवं वस्त्रों का निर्यात विदेशों को होता था। उन्नीसवीं शताब्दी में मध्य तक ब्रिटिश शासन की जड़े भारत में जम गई थी और भारतीय उद्योग समाप्ति की कगार पर आ गए थे ब्रिटिश शासन की समाप्ति के बाद भारत में सत्र 1948 के पश्चात औद्योगिक विकास की स्थिति में सुधार होने लगा पूंजी निवेश की प्रोत्साहित करके तथा औद्यौगिक उत्पादन में वृद्वि करने के उद्देश्य का ध्यान में रखते हुए सरकार ने अनेक उपाय किए 1947 में त्रिदलीय उद्योग सम्मेलन 1948 में प्रथम औद्यौगिक नीति की घोशणा करो में रियायत विदेशी पूंजी को बढ़ावा, औद्यौगिक वित्त निगम की स्थापना कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948 औद्यौगिक श्रम अधिनियम उद्योग विकास समिति की स्थापना प्रशुल्क आयोग की नियुक्ति 1950 में की गई परिणाम स्वरूप भारत में सतत औद्यौगिक विकास में तेजी से वृद्वि परिलक्षित होने लगी जिससे औद्यौगिक उत्पादन 1946 की अपेक्षा 1951 में तेजी से बढ़ा आज भारत योजना बद्ध तरीके से औद्यौगिक विकास थे क्षेत्र से उत्तरोत्तर प्रगति कर रहा है।

सन 1854 में मुंबई में सूती कपड़ा मिल की स्थापना कर भारत में औद्यौगिक विकास की शुरूआत की गई।[5] 1855 में कोलकत्ता हुगली में जूट उद्योग तथा 1853 में रेल परिवहन की आधार शिला रखी गई जमशेदपुर मे लौह इस्पात उद्योग की स्थापना 1907 में की गई, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पिछले इलाको मे प्राथमिकता के आधार पर उद्योगों के विकास पर ध्यान दिया गया, औद्योगिक निकास के लिए 1948 तथा 1956 में औद्योगिक नीति निर्धारित कर विकास के स्वरूप को निर्धारित किया गया, पंचवर्षीय योजनाओं में औद्योगिक विकास की गति मिले अनेक इस्पात संयत्र भिलाई (छ.ग.) रावलकेला (उड़ीसा) दुर्गापुर (पं. बंगाल) की स्थापना की गई। भारतीय अर्थव्यवस्था ने औद्योगिक विकास का विशेष योगदान रहा है भारत में सतत् रूप से औद्योगिक विकास अंतर्गत लोह एवं स्पात उद्योग, सीमेंट उद्योग, कोयला उद्योग पेट्रोलियम उद्योग, कपडा उद्योग, चीनी उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग क्षेत्र में विशेष प्रयास हुए हैं जिनका भारतीय अर्थव्यवस्था मे महत्वपूर्ण योगदान रहा है भारतीय अर्थव्यवस्था में उद्योग का योग निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित किया गया है :

तालिका–1

वर्ष	1950–51	1980–81	2008–09	2013–14	2014–15	2015–16	2016–17	2017–18
योगदान अनुमानित प्रतिशत में	15 %	24 %	25.8 %	30.78 %	29.97 %	29.87 %	29.29 %	28.89 %

स्त्रोत – केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय

भारत में सतत् औद्योगिक विकास का भारतीय अर्थव्यवस्था में योगदान देने वाले सकल घरेलू उत्पाद में किस सेक्टर का कितना योगदान है निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

तालिका – 2

क्रं.	क्षेत्र	प्रतिशत
1.	**कृषि क्षेत्र**	17.32 %
	कृषि वानिकी और मछली पालन	17.32 %
2.	**उद्योग क्षेत्र**	29.02 %
	1. खनन और उत्खनन	2.25 %
	2. विनिर्माण	16.57 %
	3. बिजीली, गैस, पानी और अन्य सेवाऐं	2.46 %
	4. निर्माण	7.74 %
3.	**सेवा क्षेत्र**	53.66 %
	1. व्यापार, होटल, परिवहन, सचांर व प्रसारण	18.46 %
	2. विभिन्न रियल स्टेट	21.06 %
	3. लोक प्रशासन, रक्षा और अन्य	14.14 %
	योग	**100 %**

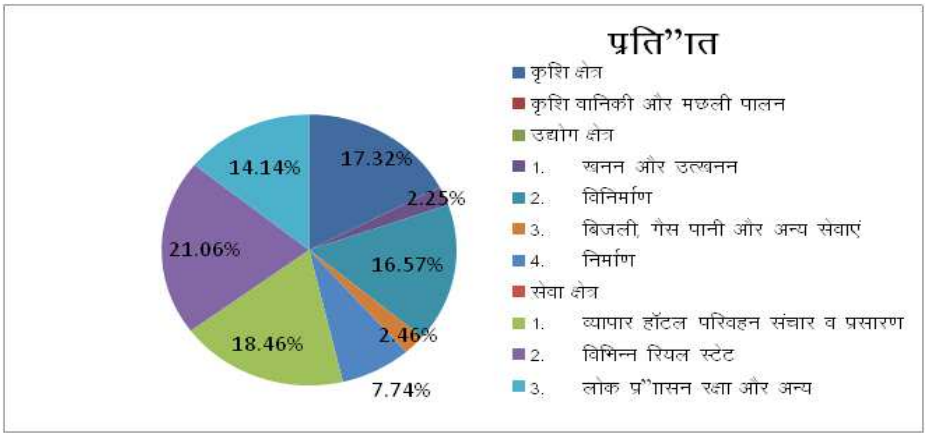

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में औद्योगिक विकास का विशेष योगदान रहा है। 1950–51 में 15 प्रतिशत से यह लगातार बढ़ते हुए 1980–81 से 2008–09 में 25.8 प्रतिशत तथा 2013–14, 2014–15, 2015–16, 2016–17 एवं 2017–18 में क्रमशः 30.78% 29.97% 29.81% 29.29% तथा 28.89% रहा है।

पंचवर्षीय योजनाओं में औद्योगिक विकास

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में व्यवस्थित रूप से विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत औद्योगिक योजनाओं को समाहित करते हुए कार्यान्वित किया गया जिसके परिणाम स्वरूप बड़ी संख्या में भारी और मध्यम प्रकार की औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की गई विभिन्न योजना अवधि में औद्योगिक करण को प्राथमिकता दी गई प्रथम योजना में सार्वजनिक क्षेत्र में आधारभूत उद्योगों का विकास हुआ। द्वितिय योजना में उद्योग एवं खनिज विकास पर व्यय कर समाजवादी समाज की स्थापना को प्रमुखता दी गई, तृतीय योजना अंतर्गत प्रतिरक्षापरक तथा प्रतिरक्षा कार्यक्रम को मुख्य रूप से शामिल किया गया औद्योगिक उत्पादन में आशातीत वृद्वि का लक्ष्य रखा गया, पांचवी योजना का मुख्य उद्देश्य मूल क्षेत्र के उद्योगों का त्वरित विकास उपयोग वस्तु की पर्याप्त पूर्ति ग्रामीण एवं लघु औद्योगिक क्षेत्रों का विकास निर्धारित किया छठी योजना में मुद्रा स्फिति की ऊंची दर स्थापित क्षमताओं का अधिक उपयोग कर था सातवी योजना में औद्योगिक उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित किया गया आठवी योजना का उद्देश्य तीव्र आर्थिक विकास आयात–निर्यात व्यापार का पर्याप्त विकास की संभावना पर केन्द्रित था, नौवी योजना में औद्योगिक उत्पादनों में मंदी का दौर रहा जिसके कारण मांग का अभाव उचे दाम का होना तथा विश्व अर्थव्यवस्था में मंदी प्रमुख थे दसवीं योजना औद्योगिक विकास एवं आर्थिक सुधार पर ध्यान दिया गया ग्यारहवी योजना में औद्योगिक विकास दर को बढाना लक्ष्य था बारहवीं योजनाअंतर्गत विनिर्माण क्षेत्र को बढावा देना जैसी बातो पर ध्यान दिया गया वर्श 1996–97 के दौरान औद्यौगिक उत्पादन में गिरावट आने पर चिंता प्रकट की गई।[6] भारत के औद्योगिक विकास के मूल्यांकन हेतु विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में औद्योगिक उत्पादन की वृद्वि दर का विश्लेषणात्मक अध्ययन निम्नांकित तालिका के द्वारा किया गया।

तलिका–3

योजना	औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि दर % प्रति वर्ग	योजना	औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि दर %
प्रथम पंचवर्षीय योजना	7.4	आठवी पंचवर्षीय योजना	6.8
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	6.6	नौवी पंचवर्षीय योजना	5.0
तृतीय पंचवर्षीय योजना	9.0	दसवी पंचवर्षीय योजना	9.4
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	3.9	ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना	7.2
पांचवी पंचवर्षीय योजना	5.9	बारहवीं पंचवर्षीय योजना	7.6
छठी पंचवर्षीय योजना	5.5	2012–13	2.3
सातवीं पंचवर्षीय योजना	8.5	2013–14	5.0
		2014–15	5.9
		2015–16	7.4

उपरोक्त तालिका संस्थाई है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में उत्पादन वृद्वि दर 7.4 थी जो तृतीय योजना में 9.0 तथा इसी प्रकार ग्यारहवीं एवं 12 वीं योजना में वृद्वि दर का बढ़ना औद्योगिक विकास का शुभ संकेत है।

औद्योगिक विकास का पर्यावरण पर प्रभाव

मानव प्रजाति पूरे ब्राम्हाण्ड का बहुत छोटा हिस्सा है और चारों ओर वनस्पति प्रजातियों की असंख्य प्रजातियां है।[7] भारत में बढ़ती उपभोगवादी संस्कृति ने आर्थिक परिदृश्य को प्रभावित किया है। औद्योगिक विकास से मानवीय उत्पादन की क्षमता बढी है, जिसने प्राकृतिक परिशुद्धता पर अतिक्रमण किया है। नवीन प्रौद्योगिकी यंत्रीकरण से उद्योग, व्यापार, कृषि–संचार, सभी क्षेत्रो मे क्रांतिकारी परिवर्तन तो हो रहे है वहीं मानव जीवन भी प्रभावित हो रहा है निजी लाभ के लिए मनुष्य ही भू–रक्षण एवं अपरदन जैसे गम्भीर संकट उत्पन्न करने के लिए जिम्मेदार है। परिणाम स्वरुप भूमि की गुणवत्ता को भी नुकसान हो रहा है। आज जिस तेजी से औद्यौगिक विकास हेतु कारखाने लगते जा रहे है उतनी ही तेजी से वायु और जल भी प्रदूषित हो रहे है कारखाने से निरंतर बाहर आने वाला कचरा जिससे तरह तरह के घातक रसायन और खनिज आदि के अंश होते है जो जल स्त्रोतों को प्रदुषित करते है आज 80 प्रतिशत रोग जल के कारण होते है दूषित जल से टाईफाइट अतिसार पेचिश, पीलिया आदि गंभीर रोगो का खतरा हमेशा बना रहता है।[8] मानवीय क्रियाओं ने प्रकृति के विभिन्न घटको में हस्तक्षेप कर पर्यावरण को असंतुलित किया है। मानव को समझना होगा कि जीवन की निरंतरता व गुणवत्ता का एकमात्र विकल्प पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन है। वायुमण्डल में कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा बढने से पृथ्वी का तापमान परिवर्तित हो रहा है, इससे जलवायु भी प्रभावित हुई है। ओजोन परत भी क्षतिग्रस्त हो रही है, जिसका परिणाम हम देख रहे हैं प्राकृतिक आपदा, अकाल, बाढ़, सुनामी जो मानव के लिए नहीं बल्कि वन्य जीव जन्तुओं, पशु–पक्षियों के लिए भी घातक हो रही है। औद्योगिकरण मनुष्य की आश्यकता है, किन्तु पर्यावरण का असंतुलन विनास की ओर ले जाएगा आवश्यकता इस बात की है कि औद्योगिकरण के सतत विकास प्रक्रिया को नियंत्रण कर हम मानव जीवन को सुरक्षित कैसे रख सकेंगे।

आशय स्पष्ट है कि देश का औद्योगिक विकास होता है तो देश के उत्पादन में वृद्धि होने के साथ–साथ घरेलू उत्पादन, पूंजी निर्माण एवं आधारभूत संरचना में भी वृद्धि होने लगती है। परिणाम स्वरुप लोगो के जीवन स्तर रहन–सहन, शिक्षा आदि क्षेत्रों में भी विकास को गति मिलती है। पर्यावरण एक वृहद् अवधारणा है जिसका अध्ययन मानव सहित सभी जीव–जन्तुओं एवं वनस्पतियों के अस्तित्व के लिए आवश्यक है। पर्यावरण ही जैविक–अजैविक संघटन का निर्माण करती है। वनस्पतियों, जीवों के जीवन को स्वस्थ्य, अस्तित्व प्रदान करता है यदि इनमें परिवर्तन होता है तो पर्यावरण प्रदूषण बढ़ेगा।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि हमें सतत औद्यौगिक विकास की जरूरत है वही इसके लिए अंधाधुंध कारखाने की बढ़ती संख्या से प्रदुशण भी बढ़ा है। प्रदुषण निवारण के लिए वृक्षारोपण को बढ़ावा देना खनिज संसाधनों का समुचित दोहन कर पर्यावरण जन जीवन को सुरक्षित रखा जा सकता है उतनी ही विकास की बात सोची जाए जिससे पर्यावरण प्रदुषित न हो। विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन उपभोगवादी संस्कृति में जीवन जीने के बावजूद मानव जीवन संकट में है, कारण पर्यावरण से टूटता सामंजस है आज आवश्यकता है। पर्यावरण के विभिन्न घटको के साथ कुशल प्रबंधन की एवं जन जागरूकता तथा सामुहिक कार्यवाही की तथा पर्यावरण संरक्षण की कल्पना को सार्थक किया जा सकता है। विकास और पर्यावरण एक दूसरे के विरोधी नहीं अपितु एक दूसरे के पूरक है सतत औद्यौगिक विकास में आर्थिक समानता लैंगिक समानता एवं सामाजिक समानता के साथ–साथ पर्यावरण संतुलन भी निहित है। इसलिए कहा जाता है कि मानव का वास्तविक कल्याण सतत विकास द्वारा ही संभव है।

❒

सन्दर्भ –

1. *डॉ.व्ही.सी. सिन्हा, SBD पब्लिकेशन, व्यवसायिक पर्यावरण, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ.5*
2. *रचना द्विमासिक अंक 52–53 जनवरी अप्रैल 2005 मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी रवीन्द्र नाथ ठाकुर मार्ग बाणगंगा भोपाल 462003 पृ. 70*
3. *रचना द्विमासिक अंक 52–53 जनवरी अप्रैल 2005 मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी रवीन्द्र नाथ ठाकुर मार्ग बाणगंगा भोपाल 462003 पृ. 70*
4. *भारतीय अर्थव्यवस्था सर्वेक्षण एवं विश्लेषण– एस.एन. लाल, एस.के. लाल शिवम पब्लिश माधवापुर इलाहाबाद पृ. 6:7*
5. *प्रतियोगिता दर्पण– भारतीय अर्थव्यवस्था, 2/11 ए स्वदेशी बीमा नगर, आगरा पृ. 87*
6. *योजना अंक 14 मई 1997 योजना भवन संसद मार्ग नई दिल्ली 110001 पृ. 7*
7. *योजना अक्टूबर 2022 पृ. 5*
8. *रचना द्विमासिक अंक 52–53 जनवरी अप्रैल 2005 मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी रवीन्द्र नाथ ठाकुर मार्ग बाणगंगा भोपाल 462003 पृ. 70*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 68–75

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

भारत की जनजातियाँ और वैश्वीकृत सिनेमा में उनका दृष्टांत

डॉ. देबांजना नाग

असिस्टेंट प्रोफेसर, केन्द्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय आंध्र प्रदेश,
मैरिवलसा, विजयनगरम (आ.प्र.)
E-mail : debanjana@ctuap.ac.in Mob. 9101712851

सारांश

वैश्वीकरण के युग में सूचना प्रौद्योगिकी में कई सारे नए परिवर्तन परिलक्षित हुए। शैक्षिक चैनलों, सिनेमा और वेब डॉक्स आदि के रूप में मीडिया ने सूचनात्मक क्रांति में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाया और इसी के साथ संस्कृतियों के डिजिटल समावेशन की मांग भी तेजी से बढ़ता गया। इस संबंध में सिनेमा को सबसे महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में कहा जा सकता है जो समाज के समस्याओं को उजागर करता हैं और साथ ही लोगों को मनोरंजक तरीके से शिक्षित भी करता है। शायद यह व्यक्तियों, संस्कृतियों और समाज को आत्मसात करने का सबसे पसंदीदा और लचीला तरीका है। इसी तरह, समाज भी विभिन्न जातियों, वर्गों, नस्लों और समूहों में विभाजित है। जबकि उनमें से कुछ वर्ग विलासिता से भरे जीवन का आनंद लेते हैं, वही उनके कुछ समकक्षों को वंचित साधनों का ही लाभ मिलता है। भारत के संदर्भ में इस दूसरे श्रेणी में महिलाएं, निचली जातियां और जनजातियां शामिल हैं। भारतीय सिनेमा ने महिलाओं और समाज के निचले वर्गों के मुद्दों को बड़े पर्दे के माध्यम से कई बार उठाया है, लेकिन विश्लेषणात्मक रूप से देखा जाए तो जनजातियों के संबंध में इस तरह के कोई भी अनुशंसित कार्य नहीं किए गए हैं। इसलिए, इस पेपर में एक सापेक्षिक अध्ययन करने की कोशिश की गई है कि भारतीय सिनेमा ने आदिवासी समाज को किस हद तक परिभाषित किया हैं, उन्होंने किन मुद्दों को चित्रित किया हैं, सिनेमा में जनजातियों के निम्न दृश्यवलोकन के पीछे क्या कारण है और जनजातीयों को मुख्यधारा के सिनेमा में किस प्रकार अंतर्भुक्त कर सकते हैं।

कीवर्ड: जनजाति, डिजिटल समावेश, सिनेमा, वैश्वीकरण

परिचयः

सिनेमा को समाज का दर्पण कहा जाता है। यह विचार, मूल्यों, संस्कृतियों, मानदंडों के साथ–साथ समाज की जीवन शैली को दर्शाता है। सिनेमा न केवल समाज की वर्तमान घटनाओं को चित्रित करता है बल्कि उस समाज के अतीत और भविष्य के बारे में भी व्यक्त करता है। तकनीकी प्रगति के इस युग में, मीडिया ने बड़ी तेजी से विकास किया है। विशेष रूप से न्यू मीडिया या सोशल मीडिया ने मनोरंजन और ज्ञान के नए तरीके उपलब्ध कराये हैं। नई पीढ़ी के नेटिज़न्स का झुकाव वेब डॉक्स, वेब सीरीज़ या इंटरनेट के इर्द–गिर्द घूमने वाली सूचनाओं की ओर है। मीडिया के इन परिवर्तनों ने टेलीविजन या रेडियो जैसे प्रसारण मीडिया के उपयोग को निश्चित रूप से दबा दिया है, लेकिन मनोरंजन और सूचना के स्रोत के रूप में सिनेमा ने खुद के रूप को आधुनिक मीडिया से नए मीडिया में बहुत महत्वपूर्ण तरीके से परिवर्तित किया है। चाहें सिनेमाघरों में हो या मोबाइल फोन पर, फिल्में देखने का प्रचलन जारी हैं। इसलिए, सिनेमा को व्यक्ति और समाज तक पहुंचाने का सबसे मजबूत माध्यम के रूप में चित्रित किया जा सकता है।

भारतीय सिनेमा 100 साल पार कर चुका है। इन वर्षों में, भारत का सिनेमा उद्योग, चाहे वह क्षेत्रीय हो या राष्ट्रीय स्तर पर, बाजार की मांगों और विकल्पों के आधार पर विभिन्न चरणों में सामने आया है। जबकि सिनेमा निर्माण का प्रारंभिक चरण राजा हरिश्चंद्र जैसे अधिक सामाजिक–धार्मिक कहानियों के साथ शुरू हुआ, बाद के चरण में सिनेमा ने देशभक्ति, रोमांस, बड़े बजट और भव्य सेट के साथ साथ विभिन्न सामाजिक समस्याओं जैसे लिंग, जाति, वर्ग आदि की ओर ध्यान केन्द्रित किया।

इस परिदृश्य में सिनेमा के माध्यम से जनजाति के मुद्दों का चित्रण थोड़ा अलग है। असल में इससे जुड़े कंटेंट बहुत ही कम हैं। और यहां तक कि अगर कुछ फिल्में हैं जो विशेष रूप से सिनेमा के माध्यम से जनजातियों के डिजिटल समावेश से संबंधित हैं, तो वे जनजातियों को या तो हिंसक और क्रूर लोगों के समूह के रूप में देखते हैं या वे मूल कहानी को पूरा करने के लिए सिर्फ एक माध्यमिक उपकरण हैं। इसके अधिक प्रतिकूल रूप वो हैं जहाँ उन्हें अक्सर या तो एक ऐसे समुदाय के रूप में चिन्हित किया जाता है जिसमें बर्बर व्यवहार के लक्षण होते हैं या एक ऐसे व्यक्ति के रूप में होते हैं जो अजीब वेशभूषा, हेड–गियर आदि परिधान किए होते हैं जो मुख्यधारा के नागरिक समाज द्वारा इतने स्वीकृत नहीं हैं। वास्तव में जनजातियां, शोधकर्ताओं के लिए आकर्षण के प्रमुख स्रोतों में से एक हैं, और बहुत से शोधकर्ता इस संबंध में काम कर रहे हैं। वास्तविक समाज में कुछ ऐसी जनजातियाँ हैं जैसे की झारखंड के उरांव और मुंडा जैसे आदिवासी समुदाय, जिनके जीवन स्तर को हम बिल्कुल "आदिम" परिभाषित नहीं कर सकते है। कई गुमनाम आदिवासी स्वतंत्रता सेनानियों जैसे बिरसा मुंडा, ताना भगत उरांव आदि ने अपने अधिकारों के लिए अपने जीवन का बलिदान दिया है और जयपाल सिंह मुंडा जैसे नेताओं ने भारतीय संविधान के निर्माण में भी प्रतिनिधित्व किया है। परंतु अभी भी किसी भी मुख्यधारा के भारतीय सिनेमा या वेबडॉक्स में उनका कोई प्रतिनिधित्व नहीं है, जो वर्तमान पीढ़ियों के बीच उनको लोकप्रिय कर सके। इसलिए, जनजाति की परिकल्पना और समाज में उनकी स्थिति का व्यापक रूप में पुनर्विश्लेषण करना आवश्यक हो जाता है।

जनजाति–एक अवलोकन

पूंजीवादी और कुलीन समाज अक्सर उन्हें ऐसे लोगों के बर्बर समूह के रूप में विकेंद्रीकृत करता है, जो निरक्षर हैं या आदिम समूह हैं और जो आधुनिक और वैश्वीकृत दुनिया से अलग हैं। वास्तव में, "जनजाति" शब्द का परिभाषा हम ऐसे दे सकते है कि यह एक शब्द है जिसे व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाता है, जिस पर अत्यधिक शोध किया जाता है, जो असाधारण ज्ञान प्रणाली से समृद्ध हैं लेकिन समाज के सबसे उपेक्षित समूहों में से एक है । भारत की जनगणना 2011 के अनुसार, देश की 8.6 प्रतिश जनसंख्या जनजातियों की है; पूरे देश में लगभग 750 अनुसूचित जनजातियों को शामिल किया गया है।[1] सामाजिक प्रणालियों के अध्ययन के आरंभ से ही "जनजाति" समाजशास्त्रियों, भूगोलवेत्ताओं, राजनेताओं, विकासवादियों और प्रतिष्ठित विद्वानों के अन्य सभी वर्गों के लिए अत्यंत आकर्षण का एक हिस्सा रहा हैं। इसके अलावा, अलग–अलग शब्द और परिभाषाएँ हैं जिनका उपयोग उन्हें निरूपित करने के लिए किया जाता है। जबकि लुसी मैयर उन्हें "अति सामान्य संस्कृति वाले लोगों के समूह" के रूप में परिभाषित करती है,[2] वही एल. एम. लुईस उन्हें "सामाजिक, राजनीतिक और कानूनी संबंधों की एक स्थानिक और अस्थायी सीमा के भीतर प्रतिबंधित लोगों के समूह" के रूप में वर्णित करते है।[3] आम लोगों की भाषा में उन्हें "आदिवासी" या एक क्षेत्र के पुरातन निवासी कहा जाता है।[4] उसी तरह प्राचीन काल में मध्य एशिया के लोग अपने निवास को "क़बीला" या सजातीय भौतिक और सामाजिक लक्षणों और संस्कृति वाले लोगों के समूह के रूप में बुलाते थे, जिसको उनकी मूल पहचान भी माना जा सकता है। इसके विपरीत कुछ अन्य अवधारणाएँ भी हैं जो जनजातियों का वर्णन करता हैं। जबकि ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी उन्हें "विकास के प्राथमिक या बर्बर चरण में लोग" के रूप में संदर्भित करती है, वही डी.एन. मजूमदार उन्हें "एक सामाजिक समूह के रूप में इंगित करते है, जिनमें कार्यों की कोई विशेषज्ञता नहीं है" वह आगे कहते हैं कि ये समूह अन्य कुलों या जातियों के साथ सामाजिक दूरी बनाए रखते हैं और उनके अपने क्षेत्रीय संबद्धता होते हैं । इसी तरह गिलिन और गिलिन उन्हें "पूर्व–साक्षर स्थानीय समूह" के रूप में इंगित करते हैं।

यहाँ अब प्रश्न उठता है:

1. वे विकास की बर्बर अवस्था में क्यों हैं?
2. वे पूर्व–साक्षर समूह क्यों हैं और उनके पास कार्यों की कोई विशेषज्ञता क्यूँ नहीं है?
3. वे सामाजिक रूप से दूर क्यों हैं?
4. मुख्यधारा और उनके सिनेमाघरों में उनका प्रतिनिधित्व बहुत कम क्यों है?

परिचर्चा

इन शोध प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए, इस पेपर में कुछ विशिष्ट मानवशास्त्रीय और समाजशास्त्रीय पुस्तकों, रिपोर्टों और आधिकारिक मीडिया अभिलेखागार प्रसार भारती जैसे कुछ माध्यमिक दस्तावेजों का अध्ययन किया गया है। ऐतिहासिक उदाहरण लेने के अलावा, यह पेपर झारखंड के तीन आदिवासी समुदायों मुंडा, उरांव और बिरहोर को अपने अध्ययन क्षेत्र के रूप में भी ध्यान में रखेगा। पेपर का यह भाग विश्लेषणात्मक प्रकृति का होगा और इनमें से कुछ मुद्दों जिसमे विशेष रूप से, आज के तकनीकी युग में मुख्यधारा में जनजातियों का चित्रण को महत्व दिया जाएगा। अतः यह भाग उपर्युक्त चार प्रश्नों पर अपना ध्यान केन्द्रित करेगा :

1. निचली जातियों के विपरीत आदिवासी या जनजाति हमेशा वंचित श्रेणी में नहीं आते हैं। उनका अपना समूह, अपना कबीला और अपना क्षेत्र था जहाँ वे शासन करते थे। ऐसा ही एक उदाहरण रामायण के पन्नों में मिले श्रृंगीबेरा के निषाद राजा 'गुहा' थे। यद्यपि यह राजनीतिक परिप्रेक्ष में बहुत विवादास्पद है कि निषादों की असली पहचान क्या है? वे जनजातियों, जातियों या अन्य पिछड़ी जातियों में से किससे संबंधित हैं, फिर भी सबसे पुराने भारतीय महाकाव्य रामायण के पन्नों में एक शासक के रूप में निषादराज के उपस्थिति से पता चलता है कि वे गरिमा और गर्व के साथ अपने क्षेत्र, अपने राजनीतिक और शासन प्रणाली का आनंद लेते थे, अतिथि का स्वागत करने और अतिथि का सम्मान करने का उनका गर्मजोशी भरा तरीका वास्तव में "अतिथि देवो भव" अवधारणा को प्रदर्शित करता है। यहां तक कि रामायण में वर्णित केवट नाम के नौका चालक भी इस बात का चित्रण है कि ये लोग कितने विनम्र, कितने नेक और कितने सीधे–सादे थे। उसी तरह यदि हम महाभारत की ओर फिर से चलते हैं तो "निषादों" का उल्लेख मिलता है, जहां एक निषाद महिला अपने पांच पुत्रों के साथ पांडव पुत्रों और उनकी माता कुंती के बजाय "लक्ष्य गृह" में जलने के लिए सहमत हुई। "एकलव्य" का उदाहरण जिसने गुरु दक्षिणा के रूप में अपने शिक्षक "द्रोणाचार्य" को अपनी उंगली काट कर दक्षिणा प्रदान की, फिर से जनजातियों या जंगलों के निवासियों की बहादुरी और बलिदानी प्रकृति का एक उदाहरण है। अतः इतिहास के पन्नों से यह स्पष्ट है कि उनके "विकास के बर्बर चरण" के सवाल को पूरी तरह से खारिज किया जा सकता है।

2. "कार्य की विशेषज्ञता" की अवधारणा कुछ जटिल है। जबकि मुख्यधारा के लिए यह शैक्षिक, औद्योगिक और आईटी क्षेत्र के विकास के साथ एक विशेषज्ञता है, जनजातियां जिन्हें "पूर्व–साक्षर समूह" माना जाता है, वे वास्तव में कला, संस्कृति, चिकित्सा और विभिन्न प्रकार के स्वदेशी ज्ञान प्रणाली में प्रवर्तक हैं, जो मुख्यधारा के समाज के पहुंच से बहुत दूर हैं। इसके उदाहरण ऐतिहासिक और आधुनिक दोनों युगों में देखे जा सकते हैं।

आदिवासी गुरिल्ला स्वतंत्रता सेनानी जैसे बिरसा मुंडा, सिद्धू मुर्मू, कान्हू मुर्मू, अल्लूरी सीताराम राजू, कोमाराम भीम आदि अपार साहस के कुछ उदाहरण हैं जिन्हें युद्ध कौशल की वास्तविक विशेषज्ञ कहा जाना चाहिए। ये स्वदेशी ज्ञान प्रणाली का एक हिस्सा हैं जिन्हें आधुनिक दुनिया में मार्शल आर्ट के रूप में पेश किया जा सकता है। उनकी बहादुरी, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में उनका योगदान भी असाधारण है लेकिन यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि उनका इतिहास पूरी तरह से नहीं लिखा गया है और अगर है भी तो मुख्यधारा के युवाओं के लिए यह पहुंच से बाहर है।

जनजातीय समाज की विशेषज्ञता यहीं समाप्त नहीं होती है। औषधीय प्रणाली का आदिवासी ज्ञान भी अतुलनीय है। पुष्पांगदन (1999)' के अनुसार, "भारतीय संदर्भ में, पारंपरिक चिकित्सा 'दो सामाजिक धाराओं' के माध्यम से कार्य करती है। पहली स्थानीय लोक धारा है, जो ग्रामीण और आदिवासी भारत में प्रचलित है। पारंपरिक चिकित्सा का दूसरा स्तर वैज्ञानिक या शास्त्रीय प्रणाली है, जिसे हजारों पांडुलिपियों में संहिताबद्ध किया गया है।"[5] जनजातीय दवाओं की यह ज्ञान प्रणाली आज के समय में **नृजातीय चिकित्सा पद्धति** जैसे अनुशासनिक शोधों के लिए एक प्रमुख रुचि के रूप में सामने आ रही है।

आदिवासी विशेषज्ञता के उदाहरण उनकी आजीविका के हर क्षेत्र में देखे जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, झारखंड की बिरहोर जनजाति रस्सी बनाने वाली एक विशेष गुण से समृद्ध है और यह विशेषज्ञता कोई नई नहीं है, बल्कि उनके पूर्वजों से चलन में है। पहले वे इन रस्सियों को पेड़ों की छाल या खाल जैसे प्राकृतिक रेशों से बनाते थे, लेकिन अब जटिल वन अधिकारों ने उनके लिए प्राकृतिक रस्सियाँ बनाना मुश्किल बना दिया है और इसलिए वे आधुनिक प्लास्टिक की रस्सियों की ओर अभिमुख कर रहे हैं।[6]

इसलिए यह कहा जा सकता है कि आदिवासी अपने जीवन के हर क्षेत्र में बहुत विशिष्ट हैं। समय की मांग है कि उन्हें उचित पहचान दी जाए और मुख्यधारा में समाज के सामने उनके कार्य की विशेषज्ञता में मध्यस्थता की जाए। न्यू मीडिया इस संबंध में एक महत्वपूर्ण उपकरण बन सकता है और सिनेमा निर्माता इन जनजातियों की सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन शैली पर नई सामग्री भी विकसित कर सकते हैं और उन्हें विभिन्न काल्पनिक और गैर–काल्पनिक कहानियों के साथ बड़े पर्दे पर ला सकते हैं।

3. यद्यपि जनजातिया कला और संस्कृति की उच्च गुणवत्ता से समृद्ध है, फिर भी इन्हें सामाजिक दर्पण में पर्याप्त रूप से चित्रित नहीं किया जाता है। इसके पीछे प्रमुख कारण यह है कि उन्होंने सामाजिक रूप से खुद को मुख्यधारा के समाज से दूर कर लिया है। इस सोशल डिस्टेंसिंग के पीछे की वजह हीनता का भाव बताया जा सकता है. यह एक ऐसा डर है जो जनजातियों को तकनीकी– शहरी समाजों की तुलना में खुद को हीन महसूस कराता है। इस तथ्य को विस्तृत रूप से समझने के लिए, इस शोध पत्रिका में छोटा नागपुर पठार के तीन आदिवासी समूहों की जीवन शैली और शासन प्रणाली का अध्ययन किया गया हैं। वे समूह मुंडा, उरांव और बिरहोर जनजाति के हैं। वे सभी बहुत अच्छी तरह से संगठित समुदाय हैं, जो अपनी स्वायत्तता के साथ रहते हैं, उनके अपने रीति–रिवाज जैसे विवाह प्रणाली, सामूहिक कार्यशैली और सामुदायिक त्यौहार आदि हैं। इनमे वास्तव में कुछ रीति–रिवाज हैं जो अतिशय आधुनिक एवं समान सामाजिक व्यवस्थाओं को दर्शाता हैं, जैसे मुंडा और उरांव जनजाति एक पितृसत्तात्मक समाज है, पर इनमें श्रम का कोई यौन विभाजन नहीं है, वे सहभागी कार्यों में विश्वास करते हैं। जैसे पुरुष जुताई करता है और स्त्री धानी और भूसी आदि में सहायता करती है (मजूमदार, 1937)।[7] उसी तरह वहां दहेज प्रथा भी नहीं है और इसके बदले में दूल्हा, दुल्हन को स्वीकार करने के लिए 10 रुपये या 50 रुपये का टोकन देता है। इसलिए, मुख्यधारा के समाज की तुलना में यहां की व्यवस्था अधिक आधुनिकतावादी है। समुदायों के भीतर एक बड़ी एकता है, उनकी अपनी मनकी–मुंडा प्रणाली (समुदाय के सरदार) हैं जिनका वे बहुत सम्मान करते हैं।[8] वे अक्सर एक समुदाय में मछली पकड़ने और शिकार के लिए जाते हैं, उनका व्यापार और अर्थव्यवस्था सामुदायिक विचारों पर आधारित होती है। उदाहरण के लिए, वे अपने समुदाय में वस्तु विनिमय प्रणाली का उपयोग करते हैं लेकिन गैर–मूल या बाहरी लोगों के लिए, वे मौद्रिक लेनदेन पसंद करते हैं। अन्तरिम और बाहरी का यह विचार जनजातियों द्वारा बनाए गए समाजों के विभाजन का एक उदाहरण है। वन अधिकार अधिनियम (एफआरए) और पर्यावरणविदों और सरकारों द्वारा प्रमुख हस्तक्षेप इस संबंध में विभिन्न समस्याएं पैदा कर रहे हैं।[9] एफआरए के कारण, वे या तो अपने प्राकृतिक निवास से विस्थापित हो जाते हैं या ऐसी जीवन शैली अपनाने के लिए मजबूर

हो जाते हैं जो उनके लिए अलग होती है। नतीजतन, उनमें से कई बेहतर जीवन के अवसरों की तलाश में उपनगरीय परिधि या महानगर की ओर भाग रहे हैं। यह विकास प्रेरित विस्थापन अक्सर उनमें अविश्वास को जन्म देता है। इन सभी कारकों ने उन्हें यह विश्वास करने में मजबूर कर दिया हैं कि विकासात्मक योजनाएं उनके लाभ के लिए नहीं हैं, बल्कि केवल अमीरों को अमीर और गरीब को और गरीब बनाने के लिए हैं। यह मुख्य कारणों में से एक है जिसके कारण वे अक्सर मुख्यधारा के समाज से अलगाव की रेखा खींच लेते हैं। इसलिए यह मुख्यधारा समाजों की जिम्मेदारी है कि वे ऐसी योजनाएं बनाएं जो वास्तव में उनके जीवन को अंधेरे की लकीर की ओर धकेलने के बजाय सुधार दें। इस संबंध में सिनेमा एक प्रमुख भूमिका निभा सकता है। फिल्म निर्माता ऐसे क्षेत्रों की पहचान कर सकते हैं जहां विभिन्न सामाजिक मुद्दे उठ रहे हैं, उन मुद्दों की जांच कर सकते हैं और कुछ नई सामग्री के साथ आ सकते हैं जो जनजातियों को मुख्यधारा में चित्रित कर सकते हैं। 2017 की हिंदी फिल्म न्यूटन में इस संबंध में कुछ कदम उठाए गए थे लेकिन इसे ऊंट के मुंह में जीरा के रूप में कहाँ जा सकता है। ऐसे कई मुद्दे हैं जिन्हें सिनेमा उद्योग उठा सकता है। जनजातियों के बीच जाना, उनके बीच रहना, उनकी कला, संस्कृति, सुख–दुख को महसूस करना और उनके लिए एक स्क्रिप्ट तैयार करना समय की मांग है जो वास्तविक रूप से जनजातीय समाज को संबोधित करता हो।

4. जनजातियां शुरू से ही कला और संस्कृति से जुड़ी हुई हैं। यह भी कहा जा सकता है कि वे मौखिक कला और संस्कृति के वास्तविक निर्माता हैं, जिनका वे मनोरंजन के उद्देश्य से अपने दैनिक जीवन में अभ्यास करते हैं। विभिन्न लिखित और अलिखित कहानियाँ हैं जो जनजातीय कला और संस्कृति के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप से प्रवाहित होती हैं। किलस के अनुसार, "लगभग सभी आदिवासी गांवों में पुरु ा, महिलाएं और बच्चे एक साथ नृत्य करते हैं।"[10] वे दक्षिण एशियाई देशों को भी संदर्भित करते है और वर्णन करते है कि संगीत और नृत्य के साथ उनका ज्ञान और कौशल आम तौर पर सामंती और पूंजीवादी समाजों से अधिक है। लेकिन जब संस्कृति के चित्रण की बात आती है, तो जनजातियों को मुख्यधारा की संस्कृति में मिला दिया जाता है और मुख्यधारा की संस्कृति उन्हें एक कहानी के रूप में देखती है, जहां कहानी का नायक तो आदिवासी परिवार से होगा, लेकिन अंत में, उसे एक सामंतवादी साम्राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में दिखाया जाएगा (धर्मवीर, 1977)' या उनका उपयोग केवल रोमांस या नाटक प्रदर्शित करने जैसे अन्य व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए किया जाएगा। इस तरह की परिभाषा जनजाति की वास्तविक समस्याओं मुख्यधाराओं के सामने मुखर नहीं होने देती है और उन्हे मात्र एक नाटक का अंग बनाकर रख देती हैं। जय भीम, आरआरआर या रावण जैसी कुछ फिल्में हैं जिन्होंने वास्तव में उनकी वीरता, या उनके सामने आने वाले सामाजिक मुद्दों को दिखाया, लेकिन फिर भी उनमें से अधिकांश, आदिवासी संस्कृति का नाटकीय रूप हैं अथवा उनका सच्चा चित्रण नहीं है। इसका कारण, मुख्यधारा की यह धारणा है कि सामाजिक फिल्में व्यावसायिक बाज़ार में काम नहीं करेंगी, क्योंकि इसमें कम ग्लैमर होगा। इसके अलावा, फिल्म उद्योग की इस अवधारणा को "सुंदरी और राक्षस" (ब्युटी एंड द बीस्ट)' के साथ स्टीरियोटाइप किया जा सकता है। यद्यपि समाज धीरे–धीरे बदल रहा है, फिर भी यह अवधारणा है कि एक सुंदर और आकर्षक नायिका की जोड़ी एक सुंदर पुरुष चरित्र के साथ होगी, जिसके विपरीत एक खलनायक होगा जिसका स्केच दुर्गुणों से आच्छादित होगा। शायद

आदिवासी और उनके चरित्र तस्वीर के इस फ्रेम में सही नहीं बैठते। बाहुबली, रावण जैसी बड़े बजट की फिल्में जो जनजातियों के विषय को छूती हैं, वे कभी कभी कहानी के मांग को देखते हुए जनजातियों को अधिक बर्बर और क्रूर दिखाने के साथ समाप्त होती हैं। दरअसल, कबीलों से जुड़े किरदारों की भी फिल्म में स्थिति सीमित ही होती है।

क्षेत्रीय तस्वीरें इन मुद्दों में अधिक कारगर भूमिका निभाती हैं और इसे एक पारदर्शी दृश्य प्रदान करती हैं लेकिन जब मुख्यधारा के सिनेमा की बात आती है, तो सब कुछ धुंधला और अस्पष्ट हो जाता है। इन सिनेमाघरों के अवॉर्ड सेरेमनी में सिर्फ मेनस्ट्रीम सिनेमा ही नहीं बल्कि दुविधा भी नजर आ रही है. जहां प्रमुख मुख्यधारा के फिल्म समारोह मनोरंजन के ग्लैमर और व्यावसायीकरण पर केंद्रित हैं, वहीं अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह क्षेत्रीय फिल्मों पर ज्यादा ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। ऐसे फिल्म समारोहों का फोकस महिलाओं और आदिवासियों जैसे पिछड़े वर्गों के निरंतर संघर्ष के साथ–साथ समाज के वास्तविक मुद्दों को प्रदर्शित करती है। इस तरह के त्योहारों की एक और विशेषता यह है कि वे समावेशी प्रकृति के होते हैं और उनके नामांकन में सभी फिल्में शामिल होती हैं, चाहे उनकी भाषा, वर्ग या क्षेत्र कुछ भी हो। इस संबंध में बहुत से उदाहरण सामने रखे जा सकते हैं। भारतीय फिल्म और टेलीविजन संस्थान जनजातियों पर फिल्में बना रही हैं और पहले ही महाराष्ट्र की जनजातियों पर 70 से अधिक फिल्मों का निर्माण कर चुकी हैं (इंडियन एक्सप्रेस, 2010)।[11] ओडिशा के मयूरभंज की लिपिका सिंह दराई ने सात वर्षों में चार राष्ट्रीय पुरस्कार जीते (डेक्कन क्रॉनिकल, 2017)।[12] कुछ उभरते आदिवासी निर्देशक और फिल्म निर्माता भी हैं जो क्षेत्रीय फिल्म उद्योगों जैसे बीजू टोपो, सेरल मुर्मू आदि बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। सब्यसाची महापात्र जैसे फिल्म निर्माताओं के पास विभिन्न राष्ट्रीय पुरस्कार हैं जैसे कि "पहाड़ी रा", उड़िया में "लुहा", "आदिम विचार" आदि जैसे आदिवासियों से संबंधित फिल्मों में राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार। बंगाली सिनेमा उद्योग में लंबे समय से फिल्म निर्माण की संस्कृति रही है। "दखल", "महेश्वता देवी" आदि फिल्में इसका उदाहरण हैं। अरिंदम सेन का "महानंदा" जनजातियों के बारे में महेश्वता देवी की विचारधारा और सिद्धांतों के बारे में दर्शाता है। उसी तरह, मृणाल सेन की "भुवन शोम" एक आदिवासी महिला की सादगी के बारे में बात करती है जहाँ वह एक मुख्यधारा के नौकरशाह की मदद करती है। ये कुछ फिल्में हैं जो जनजातियों को व्यापक फ्रेम में दर्शाती हैं। लेकिन सवाल यह उठता है कि इन फिल्मों की सीमाएं क्या हैं, इसके दर्शकों का क्षितिज क्या है और मुख्यधारा में उनकी अवधारणाओं को कैसे लोकप्रिय बनाया जाए। कम्युनिकेशन गैप को कम करना इसका जवाब हो सकता है। रीमेक व्यवसाय भी आजकल बहुत प्रमुख है। कुछ उत्कृष्ट क्षेत्रीय आदिवासी फिल्मों का रीमेक बनाना या उन फिल्मों को मुख्यधाराओं के भाषा में रूपांतरित करना भी क्षेत्रीय अच्छी सामग्री वाली फिल्मों को लोकप्रिय बनाने का एक तरीका हो सकता है।

निष्कर्ष

भारत में आदिवासी समाज अपनी कला, संस्कृति और विरासत में बहुत समृद्ध हैं। जरूरत है उनके लोकसंस्कृति को संगठित करने की जो अपनी संस्कृति और अनकही कहानियों को शेष समाज के सामने प्रदर्शित कर सके। जनजातीय युवाओं को मनोरंजन व्यवसाय में प्रोत्साहित करने के लिए सरकार के तत्वावधान में आदिवासी फिल्म निर्माण संस्थानों का प्रस्ताव रखा जाना चाहिए। इन संस्थानों को स्वतंत्र फिल्म निर्माण के लिए प्रायोजित करना चाहिए और आदिवासी फिल्म निर्माण गृहों की स्थापना और मुख्यधारा के समाज के सामने आदिवासी संस्कृति

के बेहतर प्रदर्शन के लिए बढ़ावा दिया जाना चाहिए। इसके अलावा, एक फिल्म के लिए बहुत सारे शोध की आवश्यकता होती है और बहुत कम फिल्म निर्माता हैं जो आदिवासी के बीच रहना पसंद करते हैं या आदिवासी के चुनौतीपूर्ण जीवन का सामना करने में सक्षम होते हैं। यह एक कारण हो सकता है जिसके लिए या तो मुख्यधारा के पास ऐसी कहानियां नहीं हैं जो जनजाति से संबन्धित बाज़ार की मांग एवं उनके नैसर्गिकता को पूरा कर सकें। इस संबंध में जो उपाय किए जा सकते हैं, वह यह है कि सरकार को फिल्म निर्माताओं को आदिवासियों के जीवन शैली और संस्कृति के बारे में जानने के लिए उनके बीच रहके अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

आदिवासी युवको को भी कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से मनोरंजन उद्योग के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि उन्हें फिल्म निर्माण में प्रोत्साहित किया जा सके। आदिवासी क्षेत्रों से फिल्मांकन के लिए कुछ विशेष स्थानों की पहचान की जानी चाहिए, लेकिन वहां भी जांच होनी चाहिए ताकि आदिवासी स्थान मुख्यधारा से प्रतिस्थापित न हो जाएं। सरकारी नीति "विस्थापन के बिना विकास" और जनजाति पर सत्ता न थोपने की होनी चाहिए। समाज को विकसित करने के लिए समाज के एक अभिन्न अंग के रूप में प्रत्येक सांस्कृतिक तत्व को बढ़ावा देना और उजागर करना बहुत महत्वपूर्ण है। भारतीय समाज के मामले में भी, समाज की वास्तविक तस्वीर की कल्पना करने के लिए आदिवासी संस्कृति को आत्मसात करना बहुत महत्वपूर्ण है। इसलिए, आदिवासी समूहों से जुड़ने और उन्हें मुख्यधारा के समाज के हिस्से के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता है। तभी प्रकृति पूजक आदिवासी मुख्यधारा के समाज को अपनी संस्कृति के अंग के रूप में स्वीकार करेंगे। सौहार्दपूर्ण संबंध, आपसी विकास, एक दूसरे के लिए विश्वास और "वसुधैव कुटुम्बकम" की अवधारणा ही भारत और भारतीय सिनेमा को अपनी पहचान के शिखर तक ले जा सकती है।

❐

सन्दर्भ –

1. *जनगणना (2011), प्राथमिक जनगणना सार, भारत के महापंजीयक, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, https://www.censusindia.gov.in/2011census/PCA/pca_highlights/pe_data.*
2- *https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/17180/1/Unit-5.pdf*
3- *https://www.lkouniv.ac.in/site/writereaddata/siteContent/202004131501351340Neeti_SW_Tribal_Community.pdf*
4- *https://www.sociologyguide.com/tribalsociety/indeÛ.phpü#:~%teÛt¾L.Mþ2Lewisþ 20believesþ20thatþ20tribal]andþ20worldviewþ20ofþ20 correspondingþ20dimensions.*
5. *पुष्पांगदन, पी. और जॉर्ज, वरुघी और टी पी, इजिनू और राजशेखरन, एसकृ (2017)। एथनोफार्माकोलॉजी, पारंपरिक ज्ञान और बौद्धिक संपदा अधिकार।10.1007/978–3–319–42162–9–6.*
6. *विद्यार्थी, एल.पी. और राय, बी. के (1976)। भारत की जनजातीय संस्कृति। नई दिल्लीः संकल्पना प्रकाशन कंपनी, 327–330*
7. *मजूमदार, डी.एन. (1937) ए ट्राइब इन ट्रांजिशनः ए स्टडी इन कल्चर पैटर्न, कलकत्ता एंड लंदन, लॉन्गमैन्स ग्रीन एंड कंपनी।*
8. *शर्मा बी.डी. (1995): आदिवासी क्षेत्र, नई दिल्लीः सहयोग पुस्तक कुटीर।*
9. *भूरिया, डी.एस (2004), "अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजाति आयोग की रिपोर्ट", अनुसूचित क्षेत्र और अनुसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली*
10. *भसीन, वी. (2018), भारत में जनजातीय महिलाओं की स्थिति.https://www.researchgate.net/publication/237428797_Status_of_Tribal_Women_in_India*
11. *रिपोर्ट, इंडियन एक्सप्रेस, 30 अप्रैल, 2010 https://indianeepress.com/article/cities/pune/ftii-tribal-institute-team-up-to-make-films-on-tribes/*
12. *रिपोर्ट, डेक्कन क्रॉनिकल, 13 अप्रैल, 2017*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 76–86

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

गढ़वाल की शिल्पकार जातियों के उत्थान में आर्य समाज की भूमिका (20वीं शताब्दी के विशेष संदर्भ में)

वन्दना आर्य

शोधार्थी, इतिहास विभाग, हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
श्रीनगर गढ़वाल (उत्तराखण्ड़)
Email : Vandanapj.728@gmail.com Mobie. 7417760754

सारांश

उत्तराखण्ड़ में 19वीं सदी में ईसाई मिशन के प्रवेश के उपरान्त यहां के गढ़वाल संभाग में आर्य समाज ने सुधारवादी कार्यक्रम प्रारम्भ किए। यद्यपि आरम्भ में इन सुधार कार्यक्रमों का लक्ष्य शिल्पकारों को सामाजिक व आर्थिक न्याय प्रदान कर इस वर्ग में ईसाईकरण की बढ़ती प्रवृत्ति को रोकना था, तथापि आवश्यकतानुसार अपने कार्य क्षेत्र को बढ़ाते हुए आर्य समाज ने शैक्षिक कार्यक्रम तथा अकाल की स्थिति में जनता के लिए अन्न वितरण का कार्यक्रम भी संचालित किया। इन सहायता प्रयत्नों से निम्न वर्ग की अधिकत्तम सहानुभूति आर्य समाज के प्रति हो गई थी। फलस्वरूप ईसाईकरण की प्रवृत्ति व प्रक्रिया लगभग समाप्त होने लगी थी। गढ़वाल में आर्य समाज के कार्यकर्त्ता, जो अधिकांशतः कांग्रेस से सम्बद्ध थे, का सर्वाधिक योगदान इस अंचल की शिल्पकार समस्याओं को कांग्रेस का मंच प्रदान करता था। फलस्वरूप शिल्पकार प्रथम बार राष्ट्रीय जीवन और आन्दोलन की मुख्यधारा के साथ जुड़े। इससे आंग्लसत्ता के प्रतिरोध के लिए राजनैतिक चेतना का वातावरण तैयार करने में महत्वपूर्ण सहायता मिली। प्रस्तुत शोध पत्र गढ़वाल में आर्य समाज द्वारा चलाए गये सुधार कार्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन है।

मुख्य शब्द– शिल्पकार, ईसाईकरण, डोम, बिठ, डोला–पालकी।

प्रस्तावना

19वीं भाताब्दी का युग भारतीय इतिहास में परिवर्तन और सुधारों के युग के रुप में याद किया जाता है। भारत में अंग्रेजों के आगमन के साथ जहाँ निरन्तर अविश्कारों द्वारा भारत को अंग्रेजों के द्वारा तथाकथित आधुनिक युग में धकेलने का प्रयास किया जा रहा था, तो वहीं दूसरी ओर उन सुधारों व आविश्कारों की परिणति का आम जनमानस एवं प्रबुद्ध भारतीयों पर पुनः अपनी संस्कृति एवं परपम्पराओं की समीक्षा करने का मानसिक दबाव प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से

पड़ रहा था। आधुनिक शिक्षा एवं अंग्रेजी शिक्षा का प्रभाव प्रमुख रूप से अंग्रेजी प्राप्त भारतीय विद्वानों पर देखा जा सकता है। जिसकी प्रथम मुखर परिणति राजा राममोहन राय के सामाजिक सुधारों के रूप में दिखाई पड़ती है।यह वह दौर था जब भारत में पुर्नजागरण आन्दोलन चल रहा था जिससे उत्तराखण्ड का गढ़वाल सम्भाग भी प्रभावित हुआ। भारत में चल रहे धार्मिक–सामाजिक सुधार आन्दोलनों के अर्न्तगत ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन तथा थियोसॉफिकल सोसाइटी जैसी संस्थाओं ने हिन्दू धर्म में प्रचलित बुराइयों की ओर लोगों का ध्यान आकर्शित किया। छुआछूत, बाल–विवाह, दहेज प्रथा जैसी समस्याओं के समाधान के लिए जनमत पैदा करने का इन्होंने कार्य किया। इसके साथ ही इन संस्थाओं ने ईसाई मिशनरियों द्वारा चलाये जा रहे धर्मान्तरण की प्रक्रिया को रोकने का प्रयास किया गया इस सन्दर्भ में आर्य समाज का योगदान उल्लेखनीय है।

भारत में ईसाई मिशनरियों द्वारा 17वीं भाताब्दी में ईसाई धर्म का प्रचार प्रसार किया जाने लगा था। उत्तराखण्ड के पर्वतीय सम्भाग में मिशनरियों ने भारत में अपने कार्यक्रमों को विस्तार देने की नीति के अन्तर्गत, यहाँ के पिछड़ेपन को दूर करने के उद्देश्य से शिक्षा, चिकित्सा तथा शिल्पकार वर्ग का सामाजिक स्तर सुधारने की आड़ में ईसाई धर्म का प्रचार प्रारम्भ किया। ईसाई मिशनरियों द्वारा 1850 ई0 में कुमाउँ कमिशनरी में अपने कार्यों को प्रारम्भ किया जा चुका था तथा 19वीं भाताब्दी के अन्तिम दशकों में मिशनरियों ने गढ़वाल के आन्तरिक भागों में पहुँचकर अपने कार्यों से जनता को प्रभावित करना प्रारम्भ कर दिया था।[1] मिशनरियों ने शिक्षा के प्रचार द्वारा सामाजिक रूढ़िवादिता को मिटाने के उद्देश्य से अपनी गतिविधियों को संचालित किया।[2]

ईसाई मिशनरियों ने गढ़वाल में धार्मिक प्रचार की अपेक्षा सामाजिक समस्याओं के हल पर विशेष बल दिया जिसका प्रारम्भ भौक्षणिक गतिविधियों के रूप में किया गया। इस दिशा में पादरी मैसमोर के नेतृत्व में पौड़ी मिशन स्कूल को 1901 में हाईस्कूल बनाया गया। हाईस्कूल बनते ही यहाँ गढ़वाली छात्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हुई जो इस बात का परिचायक थी कि मिशन द्वारा संचालित शैक्षणिक कार्यक्रमों के प्रति जनता में रूचि और आकर्शण बढ़ रहा था। महिलाओं के सहयोग को प्राप्त करने हेतु मिशन द्वारा पहाड़ी महिलाओं के कल्याण हेतु गड़ोली में बोर्डिंग की स्थापना की गई।जिसके माध्यम से निर्बल और निराश्रित महिलाओं को आश्रय देकर उन्हें सिलाई–बुनाई में प्रशिक्षित किया जाने लगा। मिशनरियों ने 1910 ई0 में दुगड्डा में मिशन स्कूल स्थापित किया। शैक्षणिक कार्यक्रमों के साथ–साथ मिशनरियों द्वारा स्वास्थ्य कार्यक्रमों तथा निर्माण कार्यों में प्रशासन का सहयोग भी किया जाता था। 1923 ई. में कोटद्वार–बांघाट पौड़ी के एकमात्र पैदल मार्ग के बीच में नयार में पुल टूट जाने के कारण गढ़वाल में खाद्यान्न संकट उत्पन्न हो गया था। जिसके परिणामस्वरूप आवागमन अवरूद्ध हो गया तथा दैनिक जीवन यापन की सुविधाऐं मिलना दूभर हो गयी। इस समस्या के समाधान के लिए पौड़ी स्थित मिशन के पादरी एस.एस. वीक्स ने जिला प्रशासन से अनुमति लेकर नयार का पुल निर्माण कर जन समस्या का निराकरण किया। इसके अतिरिक्त मिशन ने थान, घमतप्पा, गड़ोली (पौड़ी जनपद) में अस्पताल, चर्च और अनाथालायों की स्थापना की इसके माध्यम से जनता को पहली बार स्वास्थ्य सेवायें उपलब्ध कराई गई।[3] मिशनरियों द्वारा सामाजिक कार्यों,

आर्थिक सहायताओं के माध्यम से जनता की सहानुभूति व विश्वास को प्राप्त करने का प्रयास किया गया। जिसमें विशेषकर शिल्पकार वर्ग ने अपने आर्थिक व सामाजिक उत्पीड़न से त्रस्त होने से ईसाई धर्म स्वीकार करने की ओर अधिक अभिरूचि दिखाई। ईसाई करण की प्रक्रिया में ईसाई धर्म को स्वीकार करने वाला पहला व्यक्ति ख्याली नामक युवक था, जो कि शिल्पकार वर्ग की ओड़ जाति से संबंधित था। 1867 ई. में ख्याली द्वारा ईसाई धर्म अपनाने के पश्चात् 1901 ई. तक ईसाई धर्म स्वीकार करने वाले व्यक्तियों की संख्या 654 तक हो गई थी। इनमें अधिकांशतः आर्थिक रूप से कमजोर शिल्पकार जातियाँ थी।[4]

मिशन के सुधारवादी कार्यक्रमों के प्रति समाज के निचले वर्ग (शिल्पकार वर्ग) ने उत्सुकता व लालसा दिखाई, परिणामस्वरूप गढ़वाल में ईसाई करण की जड़ें सशक्त होने लगी थी। गढ़वाल में ईसाई करण की प्रवृत्ति को रोकने तथा सामाजिक समानता को स्थापित करने के उद्देश्य से आर्य समाज ने यहाँ सुधारवादी कार्यक्रमों का अवलम्बन किया। आर्य समाज का उद्देश्य यहाँ के शिल्पकार वर्ग को, जो कि शोषित, आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ था, को सम्मान दिलाना था। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का उत्तराखण्ड में सर्वप्रथम पदार्पण सन् 1854 के अन्त में हुआ। आर्य समाज की पूर्ववर्ती संस्था 1874 में ढ़िकुली रामनगर (नैनीताल) में पंडित गजानन्द छिम्बाल (पं. गुंजदेव शर्मा) जो 1855 से ही स्वामी दयानन्द के शिष्य थे, के प्रयत्नों से सत्यधर्म प्रकाशिनी सभा के रूप में स्थापित हो गई थी। बाद में इसका नाम आर्य समाज कर दिया गया।[5]

गढ़वाल में आर्य समाज की स्थापना –

भारत में आर्य समाज की स्थापना से पूर्व स्वामी दयानन्द सरस्वती 1854–55 ई. में उत्तराखण्ड के व्यापक भ्रमण के अंर्तगत हरिद्वार, टिहरी, श्रीनगर, रूद्रप्रयाग, गुप्तकाशी, केदारनाथ, तुंगनाथ, ऊखीमठ,जोशीमठ, बद्रीनाथ, वसुधारा से होते हुए कैलाश मानसरोवर तक गए थे। राष्ट्रीय स्तर पर आर्य समाज की स्थापना हो जाने के पश्चात् उत्तराखण्ड में आर्य समाज की स्थापना, 1874 ई. में बनी सत्यधर्म प्रचारिणी सभा जिसकी स्थापना ठिकुली (रामनगर,नैनीताल) में पं. गजानन्द छिम्बाल, जो कि 1855 ई. से ही स्वामी दयानन्द के शिष्य थे, के द्वारा आर्य समाज की पूर्ववर्ती संस्था के रूप में की जा चुकी थी। जिसका बाद में विलय आर्य समाज में कर दिया गया।[6] कुमांऊ सम्भाग में आर्य समाज की स्थापना के पश्चात् गढ़वाल के देहरादून में 1879 ई. में स्वामी दयानन्द द्वारा आर्य समाज की स्थापना की गई। गढ़वाल में आर्य समाज आन्दोलन प्रथम विश्वयुद्ध के उपरान्त ही अधिक तेजी पकड़ सका।[7] 1889–90 ई. में गढ़वाल में अकाल पड़ा, इस समय आर्य समाजी नेताओं ने गढ़वाल में अकाल पीडितों की सहायता के लिए गढ़वाल रिलीफ फण्ड की स्थापना की, जिसके लिए पंजाब आदि क्षेत्रों से चन्दा इकट्ठा किया गया था। इसी समयावधि के दौरान पंजाब की आर्य प्रतिनिधि सभा तथा डी.ए.वी. कॉलेज लौहार ने यहाँ आर्य समाज का प्रचार किया। जिससे वे शिल्पकार प्रभावित हुए जो अभी तक ईसाईकरण की प्रक्रिया का हिस्सा नहीं बने थे।[8]

गढ़वाल में केशर सिंह रावत,योगेश्वर प्रसाद खण्डूडी, रघुवर दयाल, जयानन्द भारती तथा चन्द्रसिंह गढ़वाली आदि आर्य समाजी नेताओं ने आर्य समाज की विचारधारा का प्रचार ग्रमीण अंचलों में करने के उद्देश्य से गांव–गांव में भ्रमण किया। परिणामतः इनके कार्यों से

प्रेरित होकर सन् 1921ई0 में छवाण सिंह और गोपाल सिंह द्वारा उदयपुर पट्टी में आर्य समाज का व्यापक प्रचार प्रसार किया गया।आर्य समाज का गढ़वाल में प्रवेश शिल्पकार जातियों (निम्न वर्ग) के मध्य ईसाईकरण की बढ़ती प्रवृत्ति को रोकने, आंग्ल भाासन की विसंगतियों का विरोध करने तथा समाज के सभी वर्गों को गतिशील करने के उद्देश्य से हुआ था।[9] गढ़वाल में आर्य समाज द्वारा शिल्पकार जातियों के उत्थान हेतु निम्नलिखित कार्य किए गए–

1. शुद्धीकरण तथा जनेऊ धारण करवाना।
2. डोला–पालकी प्रयोग हेतु आन्दोलन।
3. आर्य समाजी स्कूल व कॉलेजों की स्थापना।

शुद्धीकरण तथा जनेऊ धारण करवाना –

शिल्पकार जातियों के लोग जिन्हें गढ़वाल में 'डोम'[10] कहा जाता था तथा वर्तमान में जिन्हें हरिजन, दलित, अनुसूचित जाति संज्ञा प्राप्त है, ईसाई मिशनरियों के प्रभाव में आकर मतान्तरण करने लगे थे। शिल्पकारों को मतान्तरित होने से रोकने की दिशा में आर्य समाज द्वारा विशेष प्रयास किये गये। आर्य समाज के आन्दोलन को 1920 के उपरान्त गढ़वाल में गति मिलना प्रारम्भ हुआ। देहरादून और बिजनौर के आर्य समाजी कार्यकर्त्ताओं के साथ नरदेवशास्त्री ने गढ़वाल के अन्दरूनी भागों तक पहुँचने का प्रयत्न किया। 1923 ई. में लैन्सडौन में आर्य समाज की स्थापना की गई। आर्य समाज के प्रचार–प्रसार से जनता में अनुकूल प्रतिक्रिया होने के फलस्वरूप सन् 1925 में केशर सिंह रावत, रघुबर दत्त पांथरी व हयात सिंह ने मिलकर ऐकेश्वर(चौंदकोट) में आर्य समाज की स्थापना की। इस केन्द्र से सम्पूर्ण चौंदकोट परगने में अस्पृश्यता तथा मिथ्या जातीय सर्वोच्चता के भ्रम को समाप्त किए जाने के लिए प्रयत्न किए गए। सन् 1920 ई. के उपरान्त कांग्रेस के तत्वाधान में आर्य समाज के कार्यक्रमों के विस्तार के लिए मंच मिल गया था। फलस्वरूप गढ़वाल जनपद के लिए एक पृथक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना की गई। तत्पश्चात् इसे आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर–प्रदेश के साथ सम्बद्ध किया गया। 20 वीं शताब्दी के तीसरे दशक में जब राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर पर राजनीतिक प्रश्न समाज में प्रमुखता लिए हुए थे, तब इन बदली हुई परिस्थितियों में गढ़वाल में आर्य समाज की गतिविधियां कांग्रेस संगठन के साथ एक धारा में सम्मिलित हो गई थी। परिणामस्वरूप 1930 के उपरान्त गढ़वाल में आर्य समाज के आन्दोलन की पृष्ठभूमि ने राष्ट्रीय कांग्रेज के कार्यक्रमों को जन–जन तक पहुँचाने का कार्य किया।[11]

आर्य समाजी नेताओं ने मतान्तरण को रोकने के लिए शुद्धिकरण के माध्यम से शिल्पकारों को आर्य समाज से जोड़ने का प्रयास किया गया। प्रख्यात राष्ट्रवादी आर्य समाजी नेता लाला लाजपत ने उत्तराखण्ड के नैनीताल जिले के सुनकिया गाँव(रामनगर) में 17 अगस्त 1913 ई. को अनेक शिल्पकारों को आर्य समाज में दीक्षित किया तथा उन्हें शिल्पकार शब्द संबोधन दिया। इस दिन से यह वर्ग शिल्पकार कहलाने लगा तथा 1925 ई. के बाद यह सरकारी अभिलेखों में भी दर्ज हो गया। इसी क्रम में गढ़वाल के कुछ उदारवादी लोग शिल्पकारों से सहानुभुति तो रखते थे परन्तु उन्हें सीमित अधिकारों तक ही सीमित रखना चाहते थे। सुनकिया भाुद्धीकरण पर पत्रकारों ने सम्पादकीय लिखा– कुमाऊँ में सुनकिया गाँव है, यहाँ मिस्त्री 'दलित' लोग रहते

हैं। द्विज लोग इन से छुआछूत का सदा से परहेज करते आये हैं। यह छुआछूत आर्यों में पहुँची (अर्थात् आर्य समाजियों को पता चला) तो उन्होंने पंजाब के प्रसिद्ध लाला राजपत राय को बुलाकर उन सब की भाुद्धि कर डाली। हम यह नहीं कह सकते कि ऐसा करना कहाँ तक ठीक है, किन्तु यह ठीक ही है कि इस घटना से तमाम हमारे पहाड़ी प्रवेश में युगान्तर (समाजिक परिवर्तन) हो जायेगा। एक ऐसा सामाजिक झगड़ा (संभावित) होगा जिससे स्थिति बिल्कुल पलट जायेगी। आर्य जगत में तो भाूद्रों का सर्वथा अभाव हो जायेगा यही बात अंतिम रहेगी।यह वर्ग उन लोगों का था जो शिल्पकारों के उन्नति को ब्राह्मणत्व के लिए चुनौती के रूप में देखता था। गढ़वाल क्षेत्र में आर्य समाज स्वामी श्रद्धानन्द के प्रयासों से लोकप्रिय हुआ। 1878–79 ई. में रूड़की, मसूरी और देहरादून में इसकी इकाईयां स्थापित हुई कालान्तर में कोटद्वार, लैंसडाउन व दुगड्डा में भी कार्य आरम्भ हुआ।[12] आर्य समाजी प्रचारकों ने यज्ञ–हवन आदि करके शिल्पकारों (हरिजनों) का उपनयन संस्कार करना आरम्भ किया। उन्होंने शिल्पकारों को बतलाया कि आप लोग भाुद्ध हो गए हैं और जनेऊ धारण करके राजपूत–ब्राह्मणों के समान बन गए हैं। जो अभी तक जनेऊ धारण करना अपना एकाधिकार समझते थे। आर्य समाजियों ने शिल्पकारों के नामों में भी सुधार किया, क्योंकि शिल्पकारों को अच्छे नाम रखने का भी अधिकार नहीं था। उन्हें गायत्री मन्त्र एवं आर्य समाज में प्रचलित सन्ध्या करना सिखलाया। जनेऊ धारी शिल्पकारों को आर्य समाजियों द्वारा आर्य कहा जाने लगा।[13]

गढ़वाल में आर्य समाज को लोकप्रिय बनाने का श्रेय जयानन्द भारतीय को जाता है। वे नौकरी की तलाश में मसूरी गए और वहाँ आर्य समाज के सम्पर्क में आये। हरिद्वार में स्वामी श्रन्दानन्द द्वारा 10 जून 1911 ई. को उनका यज्ञोपवीत कराया गया। आर्य समाज में नवदीक्षित जयानन्द भारतीय ने उत्साह से आर्य समाज का प्रचार प्रारम्भ किया। उन्होंने दुगड्डा (कोटद्वार) के निकटवर्ती गांवों में शिल्पकारों को यज्ञोपवीत धारण करवाकर आर्य समाज में दीक्षित कराया। अनेक शिल्पकार जो हिन्दू धर्म छोड़ चुके थे उनका भाुद्धिकरण किया गया तथा पुनः हिन्दू धर्म में दीक्षा दी गई। अब शिल्पकारों के शादी, विवाह, जन्म, नामकरण–संस्कार, पूजा–अर्चना हवन आदि सभी वैदिक मत्रों और रीतिरिवाजों से शुरू होने लगे। नव दीक्षित आर्य समाजी शिल्पकार कार्य कर्त्ताओं ने गांव–गांव में भजन मण्डलियाँ स्थापित की। आर्य समाज के प्रयासों से पहली बार शिल्पकारों को अपने मानव होने का अनुभव हुआ।[14] नवदीक्षित आर्य शिल्पकारों को द्विजों का विरोध भी झेलना पड़ा। शिल्पकारों का जनेऊ धारण करना उन्हें अच्छा नहीं लगा। शिल्पकारों को समानता दिए जाने को लेकर उनका मानना था कि यदि शिल्पकार जातियाँ द्विजों के समान जनेऊ धारण कर ब्राह्मणवादी गतिविधियाँ करेगें तो जिन कार्यों का संपादन ये जातियों करती हैं उदारणार्थ बर्तन बनाना, कपड़े बुनना, हल चलाना, घर बनाना इत्यादि। इन सब कार्यों को कौन करेगा? यदि भाूद्रों द्वारा द्विजों की बराबरी की जायेगी तो इससे भाूद वर्ग का सर्वथा अभाव हो जाऐगा।(गढ़वाली अखबार) इस के अलावा उनके साथ अच्छा व्यवहार करके भी भाूद्रों की उत्तरोत्तर उन्नति हो सकती है, अत्यजों के साथ हमारा घृणित व्यवहार तुरन्त बन्द होना चाहिए।[15]

इन सुधारों को लेकर अनुदारवादी परंपरागत रूढ़िवादी विचारधारा के सवर्णों द्वारा विरोध किया गया। उदारवादी सवर्णों को छोड़कर अप्रगतिशील विचारधारा वाले व आम सवर्ण जन

शिल्पकारों की सामाजिक उन्नति व आर्य समाज द्वारा चलाये गए भाुद्धिकरण व जनेऊ धारण करवाने वाले सुधारों को किस प्रकार से देखते थे तथा उनकी संकीर्ण मानसिकता को भाम्भूप्रसाद द्वारा रचित विराटहृदय[16] में वर्णित निम्नलिखित कविता के माध्यम से समझा जा सकता है–

मीन खौणी मीन, मीन खणी मीन, डोम' न जँदेऊ पैर लिने उगटात का दिन।
किनगोड़ी की काँडी,किनगोडी की काँडी।
डोम न जँदेऊ पैर लिने निर्पाणी डाँडी, वाह रे डोम, वाह रे डोम।
बाँटी जाला मेवा, बाँटी जाला मेवा, डोम करला संध्या, बिट्ठ'' करला सेवा।
वाह रे डोम, वाह रे डोम।
पैटी जाली बरात, पैटी जाली बारात, डोम करन खोजत शुदधी।
मारी जाली बरछी, मारी जाली बरछी, आचमनि भी कनीछ, भट्ट खोजा करछी।
वाह रे डोम, वाह रे डोम।
घोटी जाली रैंठी, घोटी जाली रैंठी, डोम संध्या करनू कू कूड़ा माँग।
वाह रे डोम, वाह रे डोम।
काटी जाली तूण, काटी जाली तूण, नि बोलनों बिट्ठू तुमन,ल्या रे डोम लोंण?
काँगली का घाँघा, काँगली का घाँघा, डोम करला हवन, बिट्ठ करला सेवा।

हिन्दी अनुवाद

मैंने खोदा, मैंने मीन (मेंड) को खोदा, डोम ने जनेऊ (यज्ञोपवीत) पहन लिया है अब विनाश (उगटात) के दिन आ गए हैं। किनगोंडा (Indian barberry) के काँटे, किनगोंडा के काँटे डोम ने जनेऊ पहन लिया है अब पहाड़ सूखे हो जाऐंगे अथवा सूख जाऐंगे, वाह रे डोम, वाह रे डोम। मेवा(मिठाई) बाँटी जाऐगी, मिठाई बाँटी जाएगी, डोम अब संध्या करेंगे अर्थात् पूजा–पाठ करेंगे और बिट्ठ अर्थात् सवर्ण सेवा करेंगे। वाह रे डोम, वाह रे डोम। बारात वापस जाऐगी (पैटी/पैटेगी) बारात वापस जायेगी। डोम संध्या करने के लिए बगत (समय) ढूंढेगा वाह रे डोम, वाह रे डोम।बरछी (चाकू) मारी जाएगी, बरछी मारी जाएगी/घोपी जाऐगी। डोमों ने आचमणि अर्थात् शुद्धि भी करनी है। तो भट्ट अर्थात् सर्वण ब्राह्मण तुम करछी (चम्मच) ढूँढ़ों अथवा लाओ। वाह रे डोम, वाह रे डोम। रैंठी (कद्दू का रायता) को घोटा जाएगा, रैंठी को घोटा जाएगा। डोम संध्या (पूजा–पाठ) करने के लिए अब कूड़ा (अर्थात घर या पूजा करने के लिए विशेष स्थान) मांग रहा है। वाह रे डोम, वाह रे डोम। तूण (एक प्रकार का पेड़ जो गढ़वाल में जानवरों के खाने के लिए प्रयोग होता है) को काटा जाऐगा, तूण को काटा जाऐगा। हे बिट्ठों अर्थात् सवर्णों अब तुमकों यह नहीं कहना है कि लो डोमों लोंण अर्थात् नमक लो।काँगली(कंघी) की डण्डियां(घाँधा), कंघी की डण्डिया। अब डोम करेंगे हवन और सवर्ण करेगें सेवा। वाह रे डोम, वाह रे डोम।

शिल्पकारों के जनेऊ धारण करने को सवर्णों ने विनाश की स्थिति ठहराया। उनमें कहावत भी प्रचलित हो गई कि डूम चड़ो अकाल पड़ो अर्थात् यदि डोम (शिल्पकार) महत्वाकांक्षा करता है तो अकाल पड़ता है।[17] सवर्णों की इस मानसिकता से अनुमान लगाया जा सकता है कि शिल्पकारों द्वारा जनेऊ धारण करने, पूजा–पाठ करने को लेकर उनमें आक्रोश था तथा वे

शिल्पकारों को इस प्रकार के अधिकार देने के पक्षधर नहीं थे। शुद्धिकरण व जनेऊ धारण करवाने के अतिरिक्त आर्य समाज द्वारा गढ़वाल के शिल्पकारों के मध्य फैले अंधविश्वास, ग्राम–देवताओं का त्याग, बलिप्रथा आदि को दूर करने का भी प्रयास किया गया।

ग्राम देवताओं का त्याग– आर्य बने हुए शिल्पकारों को उन ग्राम–देवताओं को सदा के लिए त्यागने को कहा गया जिनकी उनके पूर्वज पूजा करते आए थे। उन्होंने ऐसा करने से पूर्व अन्तिम बार अपने निरंकार आदि ग्राम–देवताओं की भलीभांति पूजा की, उन्हें बलि देकर संतुष्ट किया तत्पश्चात् उन्हें त्याग दिया। शिल्पकारों ने अपने भोजनादि में भी सुधार किया। वे अब तक मृत गाय–बैल एवं भैंसों का मांस खा लेते थे परन्तु आर्य बनने के बाद उन्हें इसे त्यागना पड़ा। इस प्रकार का परिवर्तन व त्याग करने वाले कुछ ही उत्साही शिल्पकार थे। वे अपने घरों को स्वच्छ रखने लगे तथा कभी– कभी हवन भी करने लगे।[18]

डोला–पालकी प्रयोग हेतु आंदोलन

गढ़वाल में सवर्णों के पुत्र– पुत्रियों के विवाह में डोला–पालकी का प्रयोग हुआ करता था। इसके साथ ही यहाँ नए बसे हुए मुसलमानों को भी विवाहों में डोला–पालकी का प्रयोग करने का अधिकार था। बारात में डोला–पालकी को ढ़ोने का कार्य तो शिल्पकार ही करते थे, पर उन्हें स्वयं अपने पुत्र–पुत्रियों के विवाह में डोला–पालकी के प्रयोग की मनाही थी।[19] जनेऊ धारी आर्य शिल्पकारों ने अपने पुत्र–पुत्रियों के विवाह में डोला–पालकी के प्रयोग की सोची, जिसके लिए पंजाब से आए हुए आर्य समाजी नेताओं ने उन्हें उत्साहित किया। इस कार्य को सर्वप्रथम 1924 ई. में कुरीखाल और बिंदलगांव के कोली शिल्पकारों ने किया। इस गांव के कोली शिल्पकार अपनी भूमि के स्वामी थे। अन्य ग्रामों में भी कोलियों में से कई के पास पर्याप्त भूमि थी तथा वस्त्र बनाते रहने से उनकी आय भी अच्छी थी। कुरीखाल से बिन्दलगांव जाने के मार्ग में कोई सवर्ण गांव भी नहीं पड़ता था। अतः कोलियों द्वारा डोला–पालकी लेकर बारात निकाली गई जिसमें पंजाब से आए हुए आर्य समाजी भी थे।[20] शिल्पकारों को डोला–पालकी का प्रयोग करता देख आस–पास गांव के ब्राह्मण–राजपूत और मुसलमान आक्रोशित हुए और चरा के गांव के एक धनी मुसलमान हैदर के साथ बारातियों को रोकने के लिए चल पड़े। बारातियों को जुड्डा नामक स्थान पर रोक दिया गया। उनके जनेऊ तोड़ दिए गए, पालकी जला दी गई तथा उन्हें बलपूर्वक दंगली (बाटी) तथा मछलियां खिलाई गई। सरकार ने हस्तक्षेप व बीच बचाव से दो–चार दिन के पश्चात् बारात बिना डोला–पालकी के विवाह करके लौटी। यद्यपि गढ़वाल के कई प्रबुद्ध नेता शिल्पकारों (हरिजनों) को जनेऊ पहनने का और डोला–पालकी का प्रयोग करने का अधिकार देने के पक्षधर थे,[21] फिर भी दोनों क्षेत्रों के ग्रामों में बहुत से लोग शिल्पकारों की डोला–पालकी वाली बारातों को अपने गांवों से या अपने घरों के पास से होकर जाने देने की अनुमति नहीं देते थे।[22] जयानन्द भारती, बलदेव सिंह आर्य गढ़वाल में हरिजनों की आर्थिक स्थिति से परिचित थे। वे चाहते थे कि शिल्पकारों को उनके अधिकार अवश्य मिलने चाहिए पर जहाँ तक सम्भव हो इन अधिकारों के लिए सवर्णों की सद्भावना प्राप्त कर लेने से दोनों पक्षों का हित होगा और सम्बन्ध भी अच्छे रहेंगे। किन्तु उग्रवादी नेता इसके विरूद्ध थे।[23] बलपूर्वक बारातें निकालने के प्रयास में शिल्पकार और सवर्णों के मध्य तनाव हो गया था। उच्च न्यायालय में शिल्पकारों द्वारा दायर याचिका पर निर्णय सुनाते

हुए 27 फरवरी 1936 में शिल्पकारों को डोला–पालकी का प्रयोग करने का कानूनी अधिकार मिल गया था, किन्तु इससे भी समस्या का स्थायी हल नहीं निकला।[24]

डोला–पालकी की समस्या के समाधान हेतु विभिन्न आर्य समाजी शिल्पकार नेता जयानन्द भारती, बलदेव सिंह आर्य, गेंदाराम आर्य, बुद्धिराम आर्य सवर्ण– शिल्पकारों के मध्य परम्परागत सौहार्द का वातावरण बनाने की दिशा में प्रयत्नशील थे। शिल्पकार–सवर्णों के मध्य चल रहे डोला–पालकी संघर्ष की खबर राष्ट्रीय स्तर तक पहुँची। जिससे गाँधी जी द्वारा चलाये जा रहे व्यक्तिगत सत्याग्रह पर गढ़वाल में 25 जनवरी 1941 को रोक लगा दी गई। डोला–पालकी समस्या पर विचार करने हेतु 23 फरवरी 1941 को लैंसडौन में जिले के सभी प्रबुद्ध व्यक्तियों का एक सम्मेलन हुआ, जिसे सर्वदलीय सम्मेलन या डोला–पालकी सम्मेलन कहा गया। इस सम्मेलन में उपस्थित सभी व्यक्तियों ने एक प्रस्ताव पारित करके घोषणा की कि जिस प्रकार सवर्ण बारात में वर–वधु को सम्मानपूर्वक डोला–पालकी में बिठाकर ले जाते हैं उसी प्रकार इस जिले के शिल्पकार (हरिजन) और उन में से आर्य समाज में प्रविष्ट भाई भी विवाहोत्सव के समय अपने वर–वधू को सम्मानपूर्वक डोला–पालकी में बिठा कर ले जा सकते हैं। किन्तु जिस प्रकार मठ–मन्दिर और निवासगृहों के सामने सवर्ण बन्धु सम्मान करने के उद्देश्य से इस जिले की प्रथानुसार उतरते हैं उसी प्रकार वे भी उतरा करें। इस प्रस्ताव पर 140 लोगों ने हस्ताक्षर करके वचन दिया कि भविष्य में शिल्पकारों (हरिजनों) की बारातों को रोकने की घटना नहीं होने देगें।[25]

सर्वदलीय सम्मेलन में लिए गए निर्णयों की जानकारी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी को भेजे जाने के उपरान्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के निर्देश पर, गढ़वाल कांग्रेस कमेटी के प्रतिनिधि मण्डल को इलाहाबाद में महात्मा गाँधी से मिलने के लिए निमंत्रित किया गया। गढ़वाल के शिष्टमण्डल ने गांधी से विचार–विमर्श किया एवं आश्वासन दिया कि भविष्य में डोला–पालकी की घटनाऐं नहीं होने देगें। इस स्पष्ट आश्वासन के उपरान्त ही महात्मा गांधी ने गढ़वाल के व्यक्तिगत सत्याग्रह पर लगा प्रतिबन्ध उठा लेने का निर्णय लिया और 12 मार्च 1941 को यह प्रतिबन्ध हटा लिया गया। गढ़वाल में डोला–पालकी समस्या पुनः उत्पन्न न हों, इस उद्देश्य से ठक्कर बाबा के संरक्षण तथा कलम सिंह नेगी, बलदेव सिंह आर्य के निरीक्षण में 1941 में नवीन स्थायी कमेटी बनाकर जनपद के समस्त शिल्पकारों को कमेटी का सहायक कार्यकर्त्ता नियुक्त किया गया। गढ़वाल में व्यक्तिगत सत्याग्रह के दूसरे चरण में कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं ने सुधारवादियों के साथ मिलकर शिल्पकारों के बीच सहयोग व सद्भाव का वातावरण बनाने के लिए कार्य किया। इन्ही प्रयत्नों के अन्तर्गत 14 मई, 1941 को लैन्सडौन में आर्य प्रतिनिधियों तथा सवर्णों के बीच सर्वनाम समझौता हुआ। जिसके अनुसार न्यायालयों में सवर्णों पर चल रहे दीवानी–फौज–दारी मुकदमें वापस लेने के संकल्प के साथ सम्बन्धों में उत्पन्न कटुता को समाप्त करने का व्यवहारिक प्रयास किया गया। अब सभी डोला–पालकी युक्त शिल्पकारों की बारातें स्थायी कमेटी (समिति) की सहायता से निकाली जाने लगी। स्थानीय जनता के सहयोग से स्थाई समिति द्वारा एक वर्ष के भीतर लगभग 30 डोला–पालकी बारातें निकाली गई।[26]

शिल्पकार–सवर्णों के मध्य सौहार्द की भावना उत्पन्न होने से लैन्सडौन तहसील के उदयपुर, अजमेर सीला, लंगूर, बदलपुर, कौड़िया, पिंगला पाखा, मवालस्यूँ, साबली, खाटली गुजडू आदि

पट्टियों में समिति के संरक्षण के बिना ही शिल्पकारों की डोला–पालकी बारातें बिना विघ्न बाधा के अपने गन्तव्य स्थानों तक पहुँची।[27] इस प्रकार के वातावरण का परिणाम यह निकाला कि पहले आर्य समाजी शिल्पकार ही डोला–पालकी का उपयोग करते थे परन्तु अब अन्य गैर आर्य समाजी शिल्पकार भी बिठों की सलाह पर डोला–पालकी अधिकार का प्रयोग करने लगे थे।[28] आर्य समाजी नेताओं ने समय–समय पर सवर्णों से बातचीत द्वारा, कानूनी सहायता से शिल्पकारों को डोला–पालकी के अधिकार दिए जाने की माँग की। जयानन्द भारती, बलदेव सिंह आर्य, गंगाराम आर्य आदि शिल्पकार नेताओं ने सवर्णों के साथ मिलकर बातचीत द्वारा इस समस्या के समाधान का प्रयास किया। इसका परिणाम यह हुआ की गढ़वाल में डोला–पालकी की समस्या को सुलझाने में आर्य समाज ने सफलता प्राप्त की।

आर्य समाजी स्कूल व कॉलेजों की स्थापना

गढ़वाल में 20वीं शताब्दी के प्रथम दशक से ही राष्ट्रीय विचारों से प्रभावित कुछ व्यक्तियों गंगादत्त जोशी (तहसीलदार), जोधसिंह नेगी (सेटिल मेन्ट ऑफिस) तथा नरेन्द्र सिंह (चीफ रीडर) ने आर्य समाज की स्थापना से पूर्व इस मत का प्रचार–प्रसार करना प्रारम्भ कर दिया था। इन सुधारवादी व्यक्तियों को नमस्ते का प्रचार कर जनता में आर्य समाज का विचार प्रस्तुत किया। इसके पश्चात् स्थानीय व्यक्तियों की सहायता से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब तथा डी.ए.वी. कॉलेज, लौहार ने गढ़वाल में शैक्षणिक कार्यक्रमों को प्रारम्भ करते हुए 1910 में दुगड्डा(गढ़वाल) में पहला आर्य समाजी स्कूल स्थापित किया। इसके बाद सन् 1913 ई. में स्वामी श्रद्धानन्द ने भगड़खाल(लैन्सडाउन) में दूसरा आर्य समाजी स्कूल खोला। आर्यसमाजी शैक्षणिक केन्द्रों में शिक्षा प्राप्त युवकों ने अध्ययन करने के उपरान्त गढ़वाल में कांग्रेस व आर्य समाजी दोनों के प्रचार–प्रसार में अपना योगदान दिया जिसके परिणामस्वरूप यहाँ मिशनरियों का प्रभाव घटने लगा। गढ़वाल में मिशन स्कूलों के समानान्तर आर्य समाज ने अपनी शिक्षण संस्थायें खोले जाने की प्रक्रिया का विस्तार करते हुए पौड़ी, चैलूसैंण, बीरौंखाल आदि स्थानों पर मिडिल स्कूलों की स्थापना की। गढ़वाल में आर्य समाज द्वारा शिल्पकारों के मध्य शैक्षिक पिछड़ेपन को दूर करने के प्रयासों का परिणाम यह हुआ कि प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व तक गढ़वाल में एक भी शिल्पकार इन्ट्रेंस परीक्षा उत्तीर्ण नहीं था, किन्तु 1930 के दशक तक सुधारवादी नेताओं और कार्यकर्त्ताओं के प्रयासों से विभिन्न शैक्षिक केन्द्रों पौड़ी, लैन्सडौन तथा श्रीनगर आदि में 300 से अधिक शिल्पकार विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। इनमें से 114 लड़के मिडिल स्कूलों में, 85 लड़के अंग्रेजी हाईस्कूलों में तथा 3 छात्र इन्टरमीडियट में अध्ययन कर रहे थे। इसके अतिरिक्त 23 लड़कियाँ नौगाँवखाल प्राइमरी स्कूल में सहशिक्षा के रूप में अध्ययन कर रही थी। सन् 1940 तक गढ़वाल में 60 से अधिक शिल्पकार प्राइमरी से लेकर मिडिल स्कूलों में अध्ययन कार्य करने लगे थे। शिल्पकारों के मध्य इस नवशिक्षित वर्ग ने भी धर्मांतरण का विरोध किया। गढ़वाल में शैक्षणिक कार्यक्रम के उपरान्त आर्य समाज ने शिल्पकारों में व्याप्त कुरीतियों और दोशों को दूर करने का प्रयत्न किया। इस संदर्भ में स्थानीय शिल्पकार नेता जयानन्द भारती के अतिरिक्त सवर्ण व्यक्तियों नरेन्द्र सिंह तथा सुरेन्द्र सिंह ने मिलकर शिल्पकारों में गौ–मांस भक्षण बन्द किए जाने तथा इनके बच्चों को स्कूल भेजने के लिए प्रेरित किया। इसके अतिरिक्त शिल्पकारों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए भूमिहीन शिल्पकारों (हरिजनों) को प्रशासन से भूमि दिलाये जाने की मांग की गई।[29]

गढ़वाल में आर्य समाज की स्थापना ईसाई मिशनरियों के प्रतिरोध में हुई। ईसाईकरण का प्रभाव निम्नवर्ग पर बढ़ रहा था जिससे यह वर्ग धर्मान्तरण की ओर अग्रसर हो रहा था। इस प्रक्रिया को रोकने तथा यहाँ के पिछड़े शिल्पकार वर्ग को समानता दिलाने हेतु आर्य समाज प्रयत्नशील था। ईसाई मिशनरियों द्वारा शैक्षणिक केन्द्रों के माध्यम से, अकाल की स्थिति में अन्न वितरण कर तथा आर्थिक सहायता प्रदान कर निम्न वर्ग को आकर्षित किया, जिसके परिणामस्वरूप यह वर्ग धर्मान्तरण की ओर अग्रसर हुआ। गढ़वाल में ईसाई मिशनरियों को सफलता प्राप्त होने से यहाँ कुछ स्थानों पर ईसाई परिवार बसने लगे थे। ये ईसाई परिवार निर्धन व निर्बल शिल्पकारों के बीच बसे जिस कारण इन परिवारों ने शिल्पकार वर्ग (दलित वर्ग) की सहानुभूति प्राप्त की।[30] यह शिल्पकार वर्ग सदैव से ही सवर्णों की बस्तियों से दूर निवास करते थे, जब ईसाई परिवार इनके साथ– बसे तो इन्हें समानता का एहसास हुआ। जिस कारण वे ईसाई धर्म की ओर आकर्षित हुए। जिससे इन्हें आर्थिक एवं सामाजिक रूप से समानता भी प्राप्त हुई। शिल्पकारों का धर्मान्तरण बुद्धिजीवियों एवं उदारवादियों के लिए चिन्ता का विषय था, अतः इस ओर ध्यान देते हुए आर्य समाजी बुद्धिजीवियों ने धर्मान्तरण को रोकने तथा गढ़वाल के शिल्पकार वर्ग के सामाजिक, आर्थिक स्तर को उठाने हेतु प्रयास किया। जिसके लिए आर्य समाजी नेताओं ने शुद्धिकरण शैक्षणिक केन्द्रों की स्थापना, शिल्पकारों में व्याप्त अंधविश्वास, मांस–भक्षण को रोकना आदि कार्यक्रमों का सहारा लिया। आर्य समाज का ही प्रभाव था कि यहाँ के शिल्पकारों में पुर्नजागरण हुआ तथा वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुए। उन्हें सवर्णों के समान पूजा–पाठ इत्यादि करने, डोला–पालकी का प्रयोग करने का अधिकार मिला साथ ही वर्ग भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में अपना योगदान दे पाया। आर्य समाज के सम्पर्क में आने से शिल्पकार वर्ग से अनेक शिल्पकार नेतृत्व यथा–जयानन्द भारती, बलदेव सिंह आर्य, गंगा राम आर्य, बच्ची राम आर्य आदि उभर कर आए और इनके नेतृत्व में यह वर्ग उन्नति कर सका।

गढ़वाल में आर्य समाज का प्रवेश और उसकी निरन्तर प्रगति का इतिहास स्थानीय नवजात चेतना के स्वरों को राष्ट्रीय जीवन की मूल धारा में सम्मिलित करता है। परिणामस्वरूप सन् 1930 ई. से जन–आन्दोलनों के इतिहास में समाज के निम्न वर्ग तक चेतना का संचार होने लगा था। आर्य समाज के इन प्रयत्नों के कारण स्थानीय शिल्पकारों के मध्य जयानन्द भारती, बलदेवसिंह आर्य तथा बच्चीराम आर्य के रूप में शिल्पकार नेतृत्व उभर कर सामने आया। यह शिल्पकार नेतृत्व राष्ट्रवादी होने के साथ–साथ कांग्रेस के प्रति भी निष्ठावान था। इसने शिल्पकारों को राष्ट्रीय आन्दोलन की धारा में सम्मिलित कर कांग्रेस के तत्वाधान में ही–इस वर्ग की समस्याओं के हल के लिए प्रयत्न किए। परिणामतः आगे चलकर शिल्पकार चेतना गढ़वाल में राष्ट्रीय आन्दोलन का हिस्सा बनने में सफल रही।

❐

सन्दर्भ –

1. *धस्माना, डॉ. योगेश, (2006), उत्तराखण्ड में जनजागरण और आन्दोलनों का इतिहास,विनसर पब्लिशिंग कंपनी, देहरादून, पृ. 11*
2. *राय, डॉ. सत्या एम.,(1990), (सं.) भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ.194*
3. *पूर्वोक्त, धस्माना, डॉ. योगेश, (2006), पृ. 70–74*

4. डबराल, शिवप्रसाद,(1978),भाग–08, खण्ड–2, उत्तराखण्ड का इतिहास, वीरगाथा प्रकाशन दोगड्डा, पृ.150
5. सिंह, विजय,(2003),उत्तरांचल के समाज सुधार में आर्य समाज का योगदान, अप्रकाशित शोध ग्रंथ, हे.न.ब.ग.वि.वि.,पृ171
6. वही
7. पूर्वोक्त, धस्माना, डॉ0.योगेश, (2006), पृ. 77
8. पूर्वोक्त, डबराल, शिवप्रसाद, (1978), पृ. 387
9. पूर्वोक्त, धस्माना, डॉ.योगेश, (2006), पृ. 77–82
10.एटकिन्सन,ई.टी.,(2003),हिमालयन गजेटियर,अनुवाद प्रकाश थपलियाल,उत्तराखण्ड़ प्रकाशन, सरस्वती प्रेस, देहरादून, पृ.106
11. पूर्वोक्त, धस्माना, डॉ0 योगेश, (2006), पृ. 80–81
12. खत्री,जसपाल,(2010),बीसवीं सदी में गढ़वाल में दलित चेतना एक ऐतिहासिक अध्ययन, अप्रकाशित शोध ग्रंथ, हे.न.ब.ग.वि.वि., पृ. 141–142
13. पूर्वोक्त, डबराल, शिवप्रसाद, (1978), पृ. 388
14. पूर्वोक्त, खत्री, (2010), पृ. 142
15. गढ़वाली, 1913
16. प्रसाद,शम्भू,(1950), विराट ह्रदय,अलकनन्दा मन्दाकिनी प्रकाशन,लखनऊ, पृ. 223
17. पूर्वोक्त, डबराल, (1978), पृ. 388
18. वही, पृ. 388–389
19. हरिजन, 13 अक्टूबर 1946
20. पूर्वोक्त, डबराल, शिवप्रसाद, (1978), पृ. 389
21. पूर्वोक्त, डबराल, शिवप्रसाद, (1978), पृ. 389
22. हरिजन, 13 अक्टूबर 1946
23. पूर्वोक्त, डबराल, शिवप्रसाद, (1978), पृ. 390
24. पूर्वोक्त, धस्माना, डॉ0 योगेश, (2006), पृ. 226
25. पूर्वोक्त, डबराल, (1978), पृ. 391
26. पूर्वोक्त, धस्माना, डॉ0 योगेश, (2006), पृ. 229–231
27. वही, पृ. 232
28. पूर्वोक्त, डबराल, शिवप्रसाद, (1978), पृ. 392
29. पूर्वोक्त, धस्माना, डॉ0 योगेश, (2006), पृ. 78–82
30. वही, पृ. 73

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 87–93

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

अटल विहार आवास योजना का हितग्राहियों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में योगदान

(छत्तीसगढ राजनांदगाँव, नगर निगम क्षेत्र के विशेष संदर्भ में)

कु. रागिनी पराटे

सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय दिग्विजय स्वशासी महाविद्यालय, राजनांदगॉव .

डॉ.के.एल.टांडेकर

प्राचार्य शासकीय दिग्विजय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजनांदगॉव (छ.ग.)

सारांश

राज्य के नागरिकों कों आवास की सुविधा प्रदान करने के लिए राज्य शासन द्वारा महत्वाकांक्षी योजनाओं को पूर्ण करने के लिए अटल विहार आवास योजना की शुरूवात की गई। इस योजना का क्रियावन्यन राज्य स्तर पर छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल द्वारा किया जा रहा है इस आवास योजना अंतर्गत प्रत्येक हितग्राहियों को अनुदान प्रदान किया जाता है। वर्तमान में शासन द्वारा वर्तमान में राज्य स्तर पर 50000 से अधिक भवनों का निर्माण किया जा चुका है। इस योजना मे लगभग 800000 से 2500000 रुपये तक भवन का मूल्य निर्धारित किया गया है।[1] इस योजना में भवनों के क्रय हेतु भाड़ा क्रय योजना के माध्यम से किस्त भुगतान की सुविधा 10–15 वर्षो तक प्रदान की जा रही है इसके द्वारा निम्न आय स्तर के नागरिकों को आवास की सुविधा प्रदान की जा रही है। इस योजना के माध्यम से हितग्राहियों का आर्थिक एवं सामाजिक विकास होता है।

मुख्य शब्द : अटल विहार आवास योजना, सामाजिक एवं आर्थिक विकास ,योजना का क्रियान्वयन ,छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल

प्रस्तावना

प्राचीन काल में मानव की मूलभूत आवश्यकताएं थी रोटी कपड़ा और मकान प्राचीन काल से ही मानव घास ,फूस से बने कच्चे मकान में निवास करता था तथा समयानुसार वह स्वयं के आवास स्थान में परिवर्तन करता था। आधुनिक युग में भी मानव की मूलभूत आवश्यकताओं मे कदापि परिवर्तन नहीं हुआ हैं तथा वर्तमान में भी मानव आवास मे निवास करता हैं।

आवास से आशय किसी भी जीव के ऐसे परिवेश से हैं। जिसमें वह निवास करता है। प्राचीन काल में भी आवास की समस्या थी ,जो वर्तमान में भी बनी हुई हैं। प्रमुख समस्याओं में मलिन बस्ती की समस्या ,कच्चे मकान की समस्या मकान में मूलभूत सुविधा का आभाव आदि हैं।

मानव जीवन में आवास का अत्यधिक महत्व हैं, उन्हें आवास से निवास की सुविधा, आराम की सुविधा, सुरक्षा की सुविधा, संपति के भंडारण की सुविधा, स्वच्छता की सुविधा आदि सुविधाओं के कारण मानव को आवास की आवश्यकता होती हैं। इन सभी आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए राष्ट्रीय स्तर पर 2022 तक सभी नागरिकों को आवास उपलब्धता हेतु विभिन्न परियोजनाऐं निर्मित एवं संचालित की जा रही हैं। इस संदर्भ में राष्ट्रीय आवास नीति,राष्ट्रीय आवास बैंक, प्रधानमंत्री आवास योजना (नगरीय एवं ग्रामीण) एवं अन्य योजनाऐ संचालित की जा रही हैं एवं राज्य शासन द्वारा भी विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा हैं। इस संदर्भ में राजकीय आवास नीति घोषित की गई हैं तथा छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की स्थापना की गई हैं।

भू–संपदा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए एवं गुणवतापूर्ण किफायती आवास की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए "सबके लिए आवास" कथन के साथ छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की स्थापना छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल अधिनियम 1972 के तहत (No. 3 of 1973) 2000 कों हुआ तत्पश्चात् अधिसूचना क्रमांक 177 / 3236 / 32 / 2003 दिनांक 12.02.2004 में पुनर्गठन किया गया।[2]

छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल निगमित निकाय है। जो आवास एवं पर्यावरण विभाग के अंतर्गत आता है। मंडल में एक अध्यक्ष होता है जो विधानसभा का सदस्य, एक आयुक्त जो आई.ए.एस.संवर्ग का होता तीन अपर आयुक्त होते हैं। जो आयुक्त के अधीन कार्य करते है इनका मुख्यालय नवा रायपुर है। सर्किल स्तर पर उपायुक्त होता है जिसके अधीन कार्यपालन अभियंता होते हैं कार्यपालन अभियंता जिला स्तर का प्रमुख होता है जिनके अधीन कर्मचारी कार्यरत होते हैं। वर्तमान में प्रथम / द्वितीय / तृतीय / चतुर्थ श्रेणी के कुल 646 अधिकारी / कर्मचारी कार्यरत है।

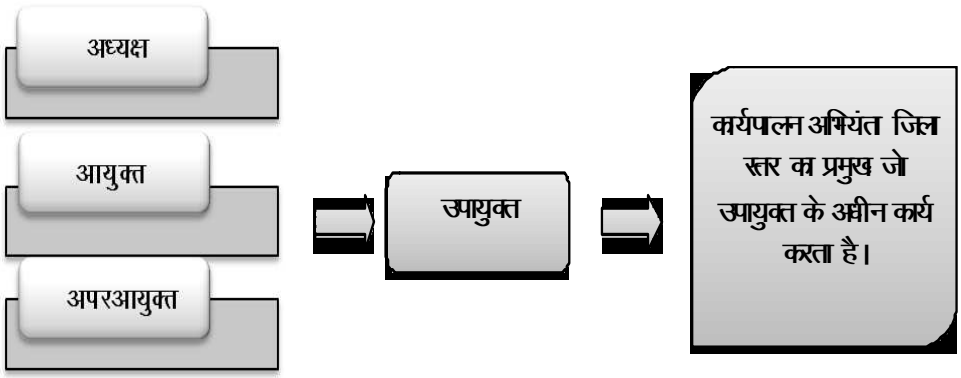

छत्तीसगढ़ शासन की आवास नीतियों को लागु करने वाली यह प्रमुख संस्था हैं इसका मुख्य छत्तीसगढ़ शासन की आवास योजना क्रियान्वयन समाज में करना हैं। छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल एक स्वायत्तय संस्था हैं। सीमित साधनों के साथ इसकी स्थापना की गई थी। परन्तु कुछ ही समय में मंडल प्रगति के सोपानों की ओर अग्रसर है। मंडल ने विभिन्न योजनाओं के माध्यम से हितग्राहियों को संतुष्ट किया है एवं किफायती दर पर आवास उपलब्ध कराया है। राज्य में आवास के क्षेत्र में नई क्रांति उत्पन्न की है।

छत्तीगढ गृहनिर्माण मण्डल द्वारा EWS एवं LIG वर्गों के नागरिकों को किफायती दर पर आवास उपलब्धता सुनिश्चित कराने की प्राथमिकता है,[3] तथा मंडल द्वारा अटल आवास योजना, अटल विहार योजना, दीनदयाल आवास योजना में विभिन्न सुविधाओं के साथ आवास उपलब्ध हैं। इन योजनाओं के लिए मंडल को राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित किया जा चुका हैं। मंडल द्वारा पिछले 15 वर्षो में 94116 से अधिक आवास निर्मित किए जा चुके हैं। इनमें से 85 प्रतिशत आवास EWS एवं LIG वर्गो के लिए निर्मित किए गए है इस संबंध में छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य हैः–

1. आवासहीन ग्रामीण परिवारों को अनुदान के पश्चात् कम दर पर प्राथमिकता के आधार पर आश्रय की सुविधा सुनिश्चित करना।
2. राज्य के नागरिकों को आवास की सुविधा सुरक्षित करने के लिए प्रेरित करना।
3. राज्य में आवासीय गतिविधियों के मध्य की अनावश्यक प्रशासनिक एवं कानूनी बाधाओं को दूर करना।
4. राज्य की क्षेत्रीय संस्थान एवं पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप ,अर्ध्द निजी संस्थाओं भवनों में विनियोग के लिए सक्रिय करना एवं प्रोत्साहित करना ।
5. सभी आवास विकासकों को प्रोत्साहित करना कि वह आवास के निर्माण में स्वास्थ्य, शिक्षा एवं सामाजिक सुविधा सुनिश्चित करें।

शोध अध्ययन का उद्देश्य

1. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की परियोजनाओं का अध्ययन करना।
2. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की अटल विहार आवास योजना का हितग्राहियों तक पहॅूच की सुनिश्चितता का अध्ययन करना।
3. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की अटल विहार आवास योजना का विभिन्न क्षेत्र में योगदान का अध्ययन करना।
4. हितग्राहियों के आर्थिक विकास एवं सामाजिक विकास में छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की अटल विहार आवास योजना के योगदान का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पना

1. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की अटल विहार आवास योजना का हितग्राहियों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में योगदान हैं।
2. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की अटल विहार आवास योजना की पहॅूच विभिन्न वर्गो तक है।

3. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की परियोजनाओं का कियान्वयन एवं मंडल की स्थिति सुद्वढ़ करने में छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल संभाग राजनांदगांव का महत्वपूर्ण योगदान है।

शोध प्रविधि

इस शोध पत्र में प्राथमिक आकड़ों हेतु हितग्राहियों से संपर्क किया गया है एवं द्वितीयक आकड़ों के रूप में विवरणात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है।[4] छत्तीसगढ़ निर्माण मंडल की विभागीय वेबसाइट एवं छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल जिला राजनांदगॉव से विभिन्न सूचना पत्र एवं पत्रिकाओं के माध्यम से द्वितीयक आकड़ों का संकलन किया गया है।

अटल विहार आवास योजना

मंडल के द्वारा विभिन्न स्थानों पर हितग्राहियों की मांग अथवा नगरीय विकास के संभावनाओं के आधार पर सभी आय वर्ग के हितग्राहियों हेतु जैसेः– उच्च आय वर्ग (एच.आई.जी.), मध्यम आय वर्ग (एम.आई.जी.), निम्न आय वर्ग (एल.आई.जी.) एवं अल्प आय वर्ग (ई.डब्लू.एस.) हेतु पृथक पृथक श्रेणी के भवनो का निर्माण किया जाता है।[5] इसके अंतर्गत स्वतंत्र भवन अथवा बहुमंजिले भवनो का निर्माण किया जाता है। सामान्यतः इस योजना अंतर्गत शासन या अन्य संस्थाओं द्वारा कोई अनुदान दिया जाता है, लगभग रुपये 40000/– से 80000/– तक अनुदान दिया जाता है। मंडल द्वारा निम्न आय वर्ग (एल.आई.जी.) तथा अल्प आय वर्ग (ई.डब्लू.एस.) भवनो के मूल्य के सीमित रखने के उद्देश्य से अन्य भवनों के लागत मूल्यों को क्रास सब्सिडाईज किया जाता है।[6] राजनांदगॉव जिले अटल विहार आवास योजना पेड्री में क्रियान्वित की चुकी है।

अटल विहार आवास योजना अंतर्गत निर्मित एवं विक्रित भवनों की संख्या

योजना का नाम	कालोनी का नाम	निर्मित भवनों की संख्या	विक्रित भवनों की संख्या
अटल विहार आवास योजना एच.आई.जी. एम.आई.जी.	पेण्ड्री	556	553
अटल विहार आवास योजना इ.डब्ल्यू.एस.	पेण्ड्री	392	383
कुल योग		948	936

अटल विहार आवास योजना अंतर्गत राजनांदगॉव में निर्मित एवं विक्रित भवनों की संख्या

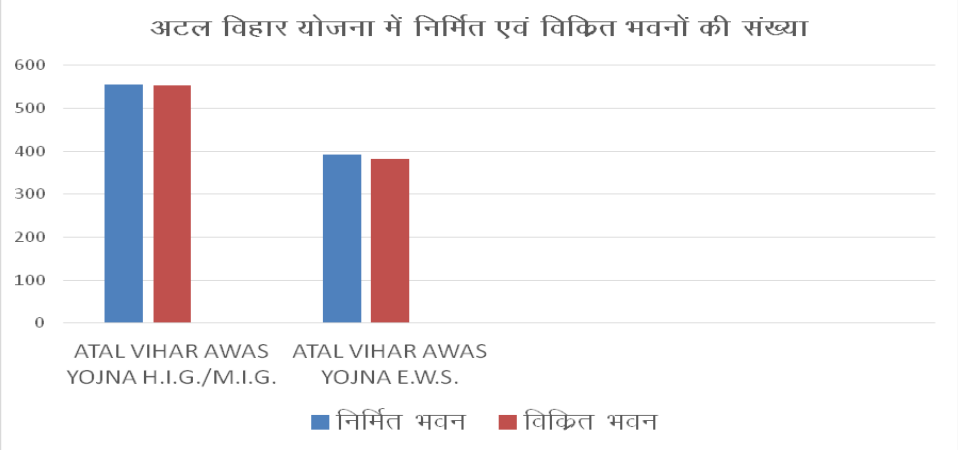

अटल विहार योजना एच. आई.जी./एम.आई.जी. में निर्मित भवनों की संख्या 556 एवं विक्रित भवनों की संख्या 553 एवं ई.डब्लू. एस. में लखोली में 392 एवं 383 है।

अटल विहार आवास योजना अंतर्गत राजनांदगॉव में हितग्राहियों की संख्या

क्रं.	कालोनी की संख्या	हितग्रहियों की संख्या
1.	अटल विहार आवास योजना एच.आई.जी. /एम.आई.जी	553
2.	अटल विहार आवास योजना ई.डब्ल्यू.एस.	383
	योग–	936

छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की अटल विहार आवास योजना का हितग्राहियों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में योगदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन। प्राथमिक आकड़ों के लिए प्रश्नावली के माध्यम से आकड़ों का संकलन किया गया, प्राप्त आकड़ों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन निम्न है :

हितग्राहियों की संख्या :– 936

क्रं.	विवरण	वर्ग	हाँ	नहीं	तटस्थ
1.	आवासीय संपत्ति क्रय करने से वित्तीय स्थिति सुदृढ़ हुई।	अ	532	300	104
2.	आवासीय संपत्ति क्रय करने से जीवन स्तर में सुधार हुआ।	ब	502	402	32
3.	अटल विहार आवास योजना अंतर्गत भवन क्रय करने से भाड़ा क्रय की सुविधा प्राप्त हुई।	स	498	367	71
4.	अटल विहार योजना अंतर्गत भवन क्रय करने से भाड़ा क्रय की सुविधा से आपकी आय में बचत हुई।	द	587	316	33
5.	क्या आप छ.ग. गृह निर्माण मंडल की कार्यप्रणाली से संतुष्ट है।	इ	566	245	125

(स्त्रोत :– प्राथमिक स्त्रोत प्रश्नावली के माध्यम से संलग्न)

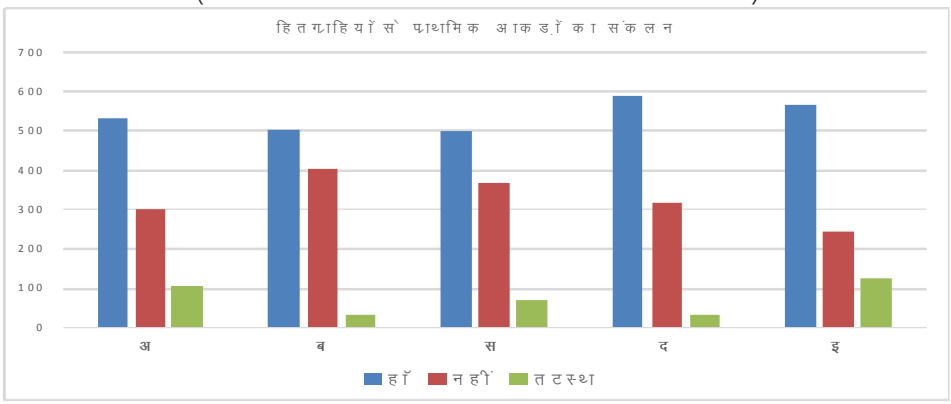

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है,कि अटल विहार आवास योजना अंतर्गत आवास क्रय करने से हितग्राहियों के आय एवं जीवन स्तर में वृध्दि हुई है। जिससे दृष्टिगोचर होता है कि छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की अटल विहार आवास योजना का हितग्राहियों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में योगदान है।

छत्तीसगढ़ निर्माण मंडल की सामान्य आवास योजना के क्रियान्वयन की प्रमुख समस्याऐं–

1. योजनाओं की हितग्राहियों तक पहूँच एवं प्रचार प्रसार की समस्या– छत्तीसगढ़ निर्माण मंडल की योजनाओं के प्रचार प्रसार के अभाव के कारण जरूरतमंद हितग्राहियों तक योजना का पहूँच सुनिश्चित नहीं होता है जिससे योजना के क्रियान्वयन में समस्या होती है।

2. संकुचित एवं दुरस्थ क्षेत्र में योजना का क्रियान्वयन– मंडल द्वारा निर्मित योजना का क्षेत्र संकुचित होता है एवं जितनी भी योजनाएं निर्मित की जाती है। वह शहर से दूरस्थ क्षेत्र में होती है। जिससे अटल विहार आवास योजना अंतर्गत भवनों के विक्रय मे समस्या होती है।

3. शासन द्वारा अनुदान एवं पूँजी की समस्या–शासन द्वारा मंडल को हितग्राहियों को अनुदान एवं भूमि के अतिरिक्त कोई छुट नहीं दी जाती है एवं मंडल में पूँजी की समस्या रहती है जिससे नवीन योजना निर्मित करने में समस्या होती है।

4. अत्यधिक औपचारिकताएं– मंडल की योजना के प्रारंभ में प्रक्रिया पूर्ण करने में अत्यधिक औपचाकिताएं होती है एवं हितग्राहियों को नवीन परिसर क्रय करने में भी अत्यधिक औपचारिकता को पूर्ण कारना होता परिणामस्वरूप परियोजना के क्रियान्वयन में समस्या होती है।

सुझाव

1. योजना प्रचार प्रसार– योजनाओं की हितग्राहियों तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए विज्ञापन एवं अन्य माध्यम से योजना का प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए।
2. विस्तृत एवं निकट क्षेत्र में भवनों का निर्माण

   भवनों का निर्माण संकुचित क्षेत्र में न करके विस्तृत क्षेत्र में किया जाना चाहिए एवं भवनों दुरस्थ क्षेत्र में निर्मित न करके शहर के निकट किया जाना चाहिए।
3. शासन द्वारा अनुदान

शासन द्वारा समय समय पर अनुदान उपलब्ध करना चाहिए पूँजी के अभाव में छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की परियोजनाओं का क्रियान्वित नहीं हो पाती है एवं अन्य शासकीय आवास निर्माण का कार्य भी छत्तीसगढ़ निर्माण मंडल को प्रदान किया जाना चाहिए जिसके परिणामस्वरूप पूँजी की समस्या नहीं होगी।

4. विशेष छुट एवं योजना का प्रावधान

छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल के द्वारा भवनों के विक्रय हेतु विशेष छुट का प्रावधान करना चाहिए एवं विशेष वर्गो हेतु विशेष योजनाएं निर्मित करनी चाहिए जिससे भवनों के विक्रय की मात्रा में वृद्धि होगी एवं मंडल के लाभ में भी वृद्धि होगी।

5. अत्यधिक औपचारिकता में कमी करना

मंडल के द्वारा योजना के प्रारंभ में अत्यधिक औपचारिकता होने के देरी होती है एवं भवनों के विक्रय में भी समस्या होती है। अतः औपचारिकता में कमी करने हेतु एकल खिड़की प्रणाली एवं ऑनलाईन भुगतान की सुविधा होनी चाहिए।

निष्कर्ष

छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल द्वारा अटल विहार आवास योजना के माध्यम से राजनांदगॉव नगर निगम क्षेत्र में लगभग 936 से अधिक नागरिकों कों छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल के माध्यम से आवास की सुविधा प्रदान की गई है[7] जिसके माध्यम से नागरिकों का आर्थिक एवं सामाजिक विकास हुआ है एवं इस क्षेत्र में मंडल को 10 से अधिक पुरस्कार प्राप्त हो चुके है।[8] मंडल के माध्यम से हितग्राहियों को भवन क्रय करने से आवास की सुविधा प्राप्त होती है एवं स्लम क्षेत्रों विकास होता है एवं जीवन स्तर में वृद्धि जिससे यह परिलक्षित होता है कि, भवन के निर्माण एवं हितग्राहियों के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में अटल विहार आवास योजना की महत्वपूर्ण भूमिका है।

❐

सन्दर्भ –

1. *छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की संगवारी मंडल हितग्राही मार्गदशिका द्वितीय संस्करण 2018 छ.ग.गृह निर्माण मंडल नवा रायपुर पृ. 4*
2. *छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की संगवारी मंडल हितग्राही मार्गदशिका द्वितीय संस्करण 2018 छ.ग.गृह निर्माण मंडल नवा रायपुर पृ. 77*
3. *छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की संगवारी मंडल हितग्राही मार्गदशिका द्वितीय संस्करण 2018 छ.ग.गृह निर्माण मंडल नवा रायपुर पृ. 3*
4. *शोध पद्धति डॉ. आलोक गुप्ता एवं नितिन गुप्ता संस्करण 2021 एस.बी. पी. डी. पब्लिकेशन आगरा पृ. 76*
5. *हरिभूमि आवास एवं पर्यावरण विशेष पत्रिका 14 वॉ वर्ष का संस्करण रायपुर प्रधान संपादक डॉ. हिमाशु द्विवेद्दी पृ. 47*
6. *रायपुर संभाग के अंतर्गत छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल की कार्यप्रणली एवं उपलब्धियों का विश्लेषण देवागंन करूणा एवं वर्मा एल. एन.। 2016 पं. रविशंकर शुक्ल वि. वि. रायपुर पृ. 56*
7. *छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल द्वारा प्रकाशित संपति प्रबंधन शाखा मैन्यूअल रायपुर वर्ष 2013 पृ. 27*
8. *छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मंडल द्वारा प्रकाशित संपदा प्रबंधन परिपत्रों का संकलन फरवरी 2004 से मार्च 2013 शंकर नगर रायपुर पृ. 52*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 94–99

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में सांस्कृतिक एवं भाषाई अवरोध

डॉ.रामहेत गौतम

सहायक प्राध्यापक, संस्कृत विभाग,
डॉ.हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
E-mail : drrhgautam@gmail.com Mob- 8827745548

संस्कृति शब्द को भी आज संस्करण की आवश्यक जान पड़ती है। काट–छांट कर सुधार की प्रक्रिया संस्कार अथवा संस्करण है। इसे भाषा व लिपिबद्ध करना साहित्य है। संस्कृति व साहित्य में प्रासंगिकता के अनुसार काट–छांट को संस्कृति व साहित्य के साथ छेड़छाड़ क्यों मान लेते हैं और लगते हैं विरोध करने।

भाषण का अर्थ है किसी अर्थ (भाव) का प्रकटीकरण। परिभाषा किसी भाव का स्पष्टीकरण है। अतः भाषा का अर्थ है भाव के प्रकटीकरण का माध्यम बनने वाली वाचिक/अंकित ध्वनिचिह्नों की विशिष्ट प्रक्रिया। देश, काल एवं परिस्थियाँ बदलने पर यह चिह्न प्रक्रिया भी बदलती है। अतः भाषा एक नहीं अनेक हैं। तर्क के बलबूते रहस्य की गुत्थियाँ खोलने पर नये आविष्कार सामने आते हैं जो मानवीय जीवन को और अधिक सुगम व सम्पन्न बनाते हैं। एक भाषाई साहित्य विकसित होता है। मानवीय विकास से नवीन आयाम भाषान्तरित होते ही हैं। साहित्य समृद्ध होता जाता है। समृद्धि साधनों की हो या भाषा, विचार या साहित्य की। पुत्रवत् मोह व भ्रम पैदा हो जाने पर दूसरे की उपेक्षा व आत्मगौरव का भ्रम हो उठता है। अतार्किक मानवीय समूह सीमाओं में कैद होकर भाषाई पवित्रता की फाँसी से वैज्ञानिक चिन्तन का गला घोंटने लगते हैं।

क्या? क्यों? कैसे? कब तक? की कसौटी पर कसते हुए शोध प्रवृत्ति वाला दृष्टिकोण वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। यह दृष्टिकोण देश की पूँजी है। इसी पर भावी पीढ़ी की स्थिति निर्भर है। भावी पीढ़ी को चमत्कारी कहानियाँ सुनानी होगीं। ये चमत्कार विज्ञान के हों न कि अंधविश्वासी। न सीमाओं से, न जनसंख्या से, न भौगोलिक संपदा से, न संस्कृति से, न भाषा से राष्ट्र सशक्त होता है, सशक्त होता है तो केवल बौद्धिकता है। तर्कविहीन ज्ञान बौद्धिकता नहीं होती। बच्चे के पैदा होते ही गोबर लेपित धरती पर बच्चों को धरती पर लिटाने की संस्कृति ने कितने ही बच्चों की जान ली है। जो बच गये वे बजरबट्टू की गिरफ्त में लिए गये। फिर भी बच गये तो झाड़फूंक फिर भूतों की कहानियाँ, फिर चबूतरों के चमत्कार, फिर परलोक के लालच

और दैवीय कोप का भय और न जाने कितने बन्धनों भरा मकड़जाल। ऊपर से बात–बात में प्रयुक्त होने होने वाले कथन जो आँख मूंदकर बात मानते रहने को प्रेरित करते हैं। जो न माने तो भयभीत करने वाली बातों, कथनों की भी कमी नहीं है। फिर भी सैकड़ों अवरोधों वाले चक्रव्यूह को पार कर ले तो संस्थाओं में मौजूद अंधेरे के नुमाइंदों से जूझना पड़ता है। संतप्त होने के पश्चात् भी जो निर्मित करता है। उस विज्ञान के चमत्कार का उपयोग भी विज्ञान के खण्डन में भरपूर किया जाता है। जैसे कि मोबाईल के माध्यम से सोसल मीडिया पर विज्ञान को कोसते हुए लोग। विज्ञान के कंधे पर बैठकर यात्रा करता अंधविश्वास विज्ञान को रोकने की नाकाम कोशिश करता रहता है।

कोई भी देश सीमाओं से नहीं लोगों से बनता है। लोग विकसित तो देश विकसित। लोगों के जीवन के हर पहलू में विज्ञान–तकनीक तथा शोध की प्रवृत्ति उन्हें साधन सम्पन्न बनाती है। यही देश के विकास की कुंजी है। बच्चे देश का भविष्य हैं उनकी परवरिस् व शिक्षा कितनी सूचना व ज्ञान आधारित है? यह सोचने–समझने का विषय है।

मैं संस्कृत का विद्यार्थी हूँ साथ ही हिन्दी भाषी हूँ। मेरे आस–पास जो घटित होता वही मेरे इस लेख में चर्चा का विषय है।

सांस्कृतिक अवरोध– भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखने पर पाते हैं कि निम्नलिखित तत्त्वों को भारतीय संस्कृति का अनिवार्य हिस्सा माना जाता है जो वैज्ञानिक वातावरण के निर्माण में बाधक हैं। पुंसवन संस्कार–यह संस्कार गर्भाधान के तीन महीने से पहले किया जाता है ताकि केवल पुत्र ही पैदा हो। यह क्रोमोसोम के विज्ञान को स्थापित होने में बाधक तो है ही कन्याभ्रूण के प्रति उपेक्षा भाव को बढ़ाता है। इसको समझाने के लिए मैं अपने आस–पास के अनेक उदाहरण दे सकता हूँ। मैं ग्रामीण परिवेश से हूँ। मैंने देखा कि कई ओझा लड़का होने की दवा देने का दावा करते हैं। अशिक्षित व अतार्किक लोग इनके चक्कर में पड़ कर ठगे जाते हैं।[1]

बच्चे पैदा होने की दवा के बहाने से महिलाओं का शारीरिक शोषण भी होता है। लेकिन बदनामी के डर से महिलायें अपमान का घूँट पीकर रह जाती हैं।[2] वर्णव्यवस्था के अनुसार नामकरण संस्कार समाज में विद्वेष पैदा करता है जिससे चिन्तन निर्माणकारी न होकर विनाशकारी अधिक हो जाता है।[3] उपनयन संस्कार भी वर्णव्यवस्ता के अनुसार होने से बहुसंख्यक वर्ग शिक्षा से वंचित कर दिया जाता है। यह संस्कार लोगों की प्रतीकात्मक पहचान स्थापित करता है। उपनयन करा चुके लोग प्रत्यक्षतः स्वयं को श्रेष्ठ घोषित करके घूमते हैं इससे अप्रत्यक्ष रूप से शेष को कमतर घोषित कर दिया जाता है।[4] समाज बट जाता है। वर्णव्यवस्था समाज में भेदभाव, शोषण का कारण बनती है। यह सभी को एक धरातल पर आने से रोकती है। परिणाम स्वरूप तर्कशीलता समाप्त हो जाती है। चरण वन्दन व पूज्य–पूजक भाव के कारण बिना तर्क किये विश्वास कर लेने की प्रवृत्ति बढ़ती है। बलिप्रथा लोगों को हिंसक बनाती है। ऐसी घटनायें आये दिन सुनने को मिलती हैं।[5]

महिलाओं में पति के जीवन रक्षक प्रतीकों के प्रति अंधश्रद्धा उन्हें तर्कशील व उद्यमशील होने से रोकती है। यह पागलपन इस हद तक बढ़ जाता है कि परिजनों के लिए खतरा साबित हो सकता है। कुछ समय पहले ही खबर आई थी कि महिला ने देवी को खुश करने के लिए अपने ही बेटे की बली दे दी।[6]

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे आस–पास अनेक सांस्कृतिक अवरोध वैज्ञानिक वातावरण को दुष्प्रभावित करते हैं।

भाषाई अवरोधों की बात करें तो हम पाते हैं कि हमारे आस–पास अनेक कहावतें, किस्से, कहानियाँ प्रचलित हैं जो लोगों को अंधविश्वासी बनाने में अपनी भूमिका निभाते हैं जिससे वैज्ञानिक वातावरण दुष्प्रभावित होता है। जैसे 'जूता सुंघा दो मिरगी भाग जायेगी' कहावत रोगी के प्रति उपेक्षा भाव को बढ़ाने के साथ–साथ चिकित्सा के प्रति लोगों का ध्यान ही नहीं जाने देती।[7] 'मल–मूत्र, भभूत लगाओ भूत भगे'[8] जैसी कहावतें लोगों को मानसिक रोगों के उपचार के वारे में सोचने से रोकती हैं। 'पूत न जने सो बाँझ' 'बाँझ क्या जाने प्रसव पीड़ा'[9] कहावत स्त्रियों के प्रति अत्याचार को बढ़ाती है। 'दूधों नहाओ पूतों फलो'[10] 'दाढ़ी, मूँछ नारी वारे से काय न समारी' कहावत लड़कियों के प्रति शोषण को बढ़ाती है। 'चार घर घूमें सो कुल्टा' 'जबाव दे सो कुतिया' आदि अनेक कहावतें स्त्री के मनोबल व तर्कशीलता को नहीं बढ़ने देते। पतिवृता नार[11] का सिद्धान्त पति के शोषण को सहने अभ्यस्त बना देता है। इतना ही नहीं निज भाषा गौरव की अतिशयता के साथ गैर भाषा के प्रति तिरस्कार का भाव बढ़ जाने पर लोग अन्य भाषा साहित्य में व्याप्त तर्कशीलता से वंचित रह जा रहे हैं।

इस निज सांस्कृति व भाषाई अतिराग के साथ–साथ अन्य संस्कृति व भाषा के प्रति पनपते द्वेशपूर्ण परिवेश के प्रभाव से कोई भी अछूता नहीं रह पा रहा है।[12] इसी पहलू को लेकर आज मैं विकट स्थिति से जूझ रहा हूँ। मेरे परिवार के लोग आपस में झगड़ रहे हैं। एक परम्परा वादी है उसके दादा–दादी से सुने किस्से कहानियों में ही उसे सम्पूर्ण समृद्धि नजर आती है। जबकि दूसरी संतान विज्ञान पढ़ रही है। वह कहती है पृथ्वी उत्पत्ति के बारे में निहारिका व एकतारा परिकल्पनायें हैं, प्लेटस् विस्थापन का सिद्धान्त है। ओपेरिन की परिकल्पना, मिलर के प्रयोगों की बात करने लगी। इतना ही नहीं डार्विन के सिद्धान्त भी सुनाने लगी। इतना सुनते ही दादा–दादी भड़क गये। और लगे पौराणिक आख्यान सुनाने। अब आप पूछ सकते हैं कि पौराणिक आख्यान ही क्यों तो बताना चाहता हूँ कि मेरा घर पुराणों व संस्कृत के ग्रन्थों से ही भरा है। मैं संस्कृत का शिक्षक जो हूँ। बेटा बड़ा है आ गया दादा की बातों में लगा बेटी को हड़काने।

दादी टीबी खोल के भक्ति सीरियल देखती हैं तब कहती हैं देखो चमत्कारों से पैदाईस हो जाती थी आज कैसा जमाना आ गया सब बन्द हो गया। बेटी कहती मुझे मत बताओ ऐसी बातें, वो लगी परागण व निशेचन प्रक्रिया को समझाने। दोनों झगड़कर भूखे ही सो जाते। सुबह होते ही मुझे दोनों को सुनना होता है दोनों कहते आप उन्हें समझाते नहीं। दादी कहती बेटी की बातें मानकर पूरी संस्कृति का नाश कर दिया। बेटी कहती पौराणिक खयालों में जीकर विश्व के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं की जा सकती। जीते रहो गोबर–मूत्र, सूर्य को निगलने, पहाड़ों को ढोने, संसार को तीन पगों में नाप लेने, टोने, टोटके से दुश्मन को परास्त करने, डायन प्रथा, झाड़–फूंक से रोग मुक्त हो जाने, ओझाओं से मनोकामना पूरी कराने के पीछे कब तक भागते रहेंगे? मानती हूँ ये

संस्कृति व साहित्य में अच्छी चीजें भी हैं पर हमारे पास जो है उसे छांटना–बीनना तो पड़ेगा ही साथ ही जो नहीं हैं हमारे पास उस पर फौकस करने में हीं समझदारी है। वरना रह जायेंगे कूप–मण्डूक।

आगे बेटी ने कहा ऐसे काम नहीं चलेगा। जिस पर ये कथा–ज्ञान बटोर रहे हैं वह टी. वी., मोबाईल, कम्प्युटर विज्ञान से ही मिला है। जिस चश्मे को लगाकर सब जिन मोटे–मोटे ग्रन्थों को पढ़ पाते हैं और अब तो ऐप के माध्यम से सुन भी सकते हैं। ये सब विज्ञान के प्रयोगों के ही परिणाम हैं। घर में वैज्ञानिक वातावरण बनने दो। संविधान का अनुच्छेद 51 ए भी मौलिक कर्तव्यों में वैज्ञानिक वातावरण की बात करता है। इतना सुनते ही पुराने ख्यालों वाले परिजन भड़क कर भारतीय दण्ड संहिता 1860 की धारा 505 की धमकी दे रहे हैं– कि ऐसी बातें कर रही हो लोगों की भावनायें आहत कर रही हो तीन साल का कारावास भुगतोगी। इतना ही नहीं हमारे पाठ्यक्रम में भारतीय संस्कृति का एक पेपर पढ़ाता हूँ भारतीय संस्कृति की अच्छाइयाँ व विशेषतायें तथा विश्व में उसके फैलाव को बताता हूँ पर बच्चे वर्ण–व्यवस्था, जाति व्यवस्ता के बारे में पूछते हैं कि इनका औचित्य क्या है आज तो मुझे या तो मौन रहने में ही भलाई नजर आती है क्योंकि आज कल भावनायें भड़काने के आरोप में शिक्षक जेलों में भी डाले जा रहे हैं। शेष हवालात के तो क्या कहने?

अब आप ही बतायें ऐसे वातावरण में व कैसे कैसा रिसर्च हो सकता है? पर एक खयाल ये भी आता है कि– ये ओझा, ये गले में पोटलियाँ, ये वर्ण, ये जातियाँ, ये नीबू–मिर्ची, ये दारू–बलि आदि पुराने हो गये हैं छोड़कर विज्ञान के साथ जीना ही होगा। क्योंकि– तुम संस्कृत शास्त्रों की बात मानते हो, आओ उन्हीं की बात बताता हूँ। मानो और पुराने कचरे को छाँटों, काम की चीज रख लो नई चीजों के लिए जगह दो। क्योंकि जिस साहित्य को आप गौरवशाली मानते हैं तो उसी की बात मान लो वह कहता है कि –

यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारो नान्यथा भवेत्।
कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते।।[13]

अर्थात् जिस प्रकार मिट्टी के नये वर्तन में पहली बार जो कुछ भी भरेंगे तो उसका संस्कार उस पात्र में हमेशा बना रहता है। जैसे कि घी भरने पर घी का प्रभाव सदा बना रहेगा। यदि मट्ठा भरा जायेगा तो खटास बनी रहेगी। उसी प्रकार अबोध बच्चों को जो कुछ सिखाया जायेगा वह लम्बे समय तक उसके व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। अतः आवश्यक है कि बच्चों को तर्कशील बनाने की विद्या ही दी जानी चाहिए। तर्कशीलता वैज्ञानिक दृष्टिकोण की चाबी है। हम आज जो सुखद साधन सम्पन्न जीवन जी रहे हैं वह वैज्ञानिक अनुसंधानों की ही देन है। कोई कह सकता है कि यह भोगवाद है। तो प्रश्न उठता है कि लाख में से एक वैराग्य का जीवन जीता है शेष तो भौतिक जीवन ही जीते हैं। तर्क के बिना तो वैराग्य भी नहीं हो सकता। क्योंकि कहा भी जाता है कि–

आपरितोशाद् विदुषां न साधु मन्येप्रयोगविज्ञानं।
बलवदपि शिक्षितानामत्मन्यप्रत्ययं चेतः।।[14]

जब तक विद्वानों की सभा पूर्ण सन्तुष्ट न हो जाये तब तक किसी भी प्रायोगिक कार्य को सफल नहीं मानना सच्चे शिक्षकों का स्वभाव होता है।

तंत्र–मंत्र, टोने–टोटके, झाड़–फूंक, ताबीज–गण्ड़े, कर्मकाण्ड, दैवीय भरोसे लोगों को अंधविशावासी व अकर्मण्य बनाते हैं। अकर्मण्य व्यक्ति कुछ भी नया नहीं बना सकता। अतः कहा जाता है कि–

न दैवमपि संचिन्त्य त्यजेदुद्योगमात्मनः।

अनुद्योगेन कस्तैलं तिलेभ्यः प्राप्तुमर्हति?।।[15]

अर्थात् दैव/भाग्य के भरोसे अपनी उद्यमशीलता (कुछ नया करने की प्रव त्ति) को न छोड़ें क्योंकि उद्यमशीलता के बिना तिलों से तेल कौन निकाल सकता है?

सुविध–असुविधा के लिए दैव का सहारा अनुचित है। सुविधा चाहिए तो दैव छोड़ उद्यम किया जाये।

उद्यमेन हि सिद्धयन्ति कार्याणि न मनोरथैः..... [16]

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीर्दैवेन देयमिति कापुरुषा वदन्ति।

दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या, यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोत्र दोषः?।।[17]

अतः कहा जा सकता है कि 'क्रिययैव आयाति परिवर्तनं न तु कृपया। कृपा तु बन्धनहेतुः।' (कृपा नहीं क्रिया लायेगी बदलाव। कृपा बन्धन हेतु है।)

कुछ लोग अतीत के गुणगान में वर्तमान की उपेक्षा करते रहते हैं। और वैश्विक प्रतियोगिता में मजबूर होकर पीछे–पीछे घसिटते रहने हैं। अतः आवश्यक है कि अतीत के मोह को छोड़कर वर्तमान में बदलते विश्व के साथ बदलें। वैज्ञानिकता को स्वीकार करें। इस विषय में भी संस्कृत में एक महत्त्वपूर्ण कथन प्राप्त होता है कि दृ पुराना होने से कोई विषय–वस्तु सही नहीं हो सकती वर्तमान के तर्कशील व समझदार लोक उसकी वर्तमान में प्रासंगिकता को परख कर ही सही मानते हैं।

पुराणमित्येव न साधु सर्वं न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।

सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः।।[18]

अतः आज के माता–पिता को चाहिए कि वे अपने बच्चों को अंधविश्वासी शिक्षा से दूर रखते हुए तर्कशील व वैज्ञानिक दृष्टीकोण वाली शिक्षा दें अन्यथा आने वाली संततियाँ वैश्विक मंच पर मजाक का पात्र बनेंगी। जैसा कि कहा भी गया है कि –

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः।

न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा।।[19]

ये उदाहरण मैं उन लोगों के लिए दे रहा हूँ जो वैज्ञानिक दृष्टीकोंण की बात करते ही शास्त्र–संस्कृति के ठेकेदार बनकर हिंसक पशु वत् व्यवहार करने लगते हैं। उनको समझना होगा

कि समाज में गलत का विरोध पूरे समाज का विरोध नहीं होता। उसी प्रकार गलत के विरोध को सम्पूर्ण संस्कृति व साहित्य का विरोध न माना जाये। जो गलत है उसे सुना जाय, स्वीकारा जाय तथा सही किया जाये। यही है राष्ट्रनिर्माण की कुंजी है।

❐

सन्दर्भ –

1. *Amarujala/Sirsa Updated Sat, 01 Apr 2017 Read more: https://www.amarujala.com/haryana/sirsa/person-giving-medition-for-gureenty-son-born-have-been-arrasted-by-policehttps://www.amarujala.com/haryana/sirsa/person-giving-medition-for-gureenty-son-born-have-been-arrasted-by-police*
2. *https://www.uttamhindu.com/National/59086/priests-raped-by-maid TUESDAY, NOVEMBER 09,2021 https://www.livehindustan.com/uttar-pradesh/badaun/story-rape-of-bareilly-39-s-married-woman-who-came-to-take-medicine-for-child-birth-4725908.html*
3. *https://ia801608.us.archive.org/9/items/in.ernet.dli.2015.541037/2015.541037.Ath-Sanskarvidhi.pdf??.64-65https://www.deshbandhucollege.ac.in/pdf/resources/1585794498_HS(H)-IV-GE-CH3.pdf*
4. *https://ia801608.us.archive.org/9/items/in.ernet.dli.2015.541037/2015.541037.Ath-Sanskarvidhi.pdf ??.78-79*
5. *https://ndtv.in/videos/video-story-301544*
6. *https://hindi.webdunia.com/madhya-pradesh/woman-axes-son-in-panna-120102200068_1.html*
7. *https://www.bhaskar.com/bihar/patna/news/BIH-PAT-HMU-MAT-latest-patna-news-021502-1105118-NOR.html*
8. *https://www.amarujala.com/haryana/yamuna-nagar/bhabhuti-fed-the-woman-by-talking-about-exorcism-raped-her-when-she-was-unconscious-yamuna-nagar-news-knl79349143*
9. *https://www.everyday41.com/2021/04/lokoktiyaan.html*
10. *https://www.hindivarta.com/lokokti-muhavara-dudho-nahao-puto-falo/*
11. *https://www.bhajanganga.com/bhajan/lyrics/id/2368/title/hai-koi-sant-ram-anurani-jaki-surat-sahib-se-lagi*
12. *https://samyakbharat.blogspot.com/2021/10/blog-post.html*
13. *हितोपदेश प्रस्तावना–8*
14. *अभिज्ञानशाकुन्तलम् प्रथम अङ्क–2*
15. *हितोपदेश प्रस्तावना–9*
16. *हितोपदेश प्रस्तावना–36*
17. *हितोपदेश प्रस्तावना–31*
18. *मालविकाग्निमित्रम् 1.2*
19. *हितोपदेश प्रस्तावना–38*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 100–104

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

प्राचीन बौद्ध मूर्तिकला में अभिव्यक्त सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन

प्राची रंगा

शोधछात्रा, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग,
गुरुकुल कांगड़ी सम विश्वविद्यालय हरिद्वार
E-mail : prachisinghnehra@gmail.com Mob, +91 7082651190

सारांश

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज का व्यक्ति पर प्रभाव अवश्य ही पड़ता है। इसी रूप में कलाकार भी अपना व्यक्तित्व रखता है और कला के माध्यम से समाज को प्रतिबिम्बित करता है। साहित्य तथा कला समाज के दर्पण हैं। एक में कल्पना की उड़ान तथा घटनाओं का विवेचन मिलता है तो कला कृतियों में समाज का रूप दृष्टिगोचर होता है। वैदिक युग के कलात्मक नमूने उपलब्ध नहीं हैं, अतएव तत्कालीन सामाजिक प्रभाव का अध्ययन कठिन है। ऐतिहासिक युग में बौद्धधर्म का उत्थान तथा विकास हुआ। बौद्ध धर्म को विभिन्न राजवंशो ने संरक्षण प्रदान किया तथा लोक की धार्मिक परम्परा और भावना के मंथन से ही स्तूप का जन्म हुआ। इसके निर्माण में अनेक प्राचीन भारतीय लोक धर्मों ने सहयोग दिया। स्तूप का भाव कहीं बाहर से नहीं आया, इसे पृथ्वी की दीर्घकालीन धर्म भावना ने जन्म दिया। लोक के अनेक गृहस्थ मिल कर स्तूप के सम्पूर्ण वास्तु का निर्माण करते थे। भरहुत और सांची के समान स्तूपों का निर्माण करना इतिहास की कोई साधारण सी घटना नहीं थी। इसके लिए बहुत बड़े संगठन की आवश्यकता पड़ी होगी। स्तूप की सजावट में तत्कालीन अनेक सामाजिक–सांस्कृतिक तत्वों का प्रयोग किया गया है। समस्त समाज का जीवन ही इन स्तूपों और उनके विभिन्न अंगों में जीवन्त हो उठा था। भरहुत, बोधगया, अमरावती, मथुरा, सारनाथ, सांची आदि के तोरणों एवं फलकों पर जातक कथाओं से सम्बन्धित, राजवंशों से सम्बन्धित विभिन्न चित्रों का अंकन तो हुआ ही है, साथ ही सामान्य लोकजीवन के विभिन्न तत्वों का निरूपण भी इन पर देखने को मिलता है। जिसमें मनुश्यों के घर, व्यवसाय के साधन, रथ, गाड़ियां, वेशभूशा, केशविन्यास, अस्त्र–शस्त्र, श्रृंगार के साधन, राजाओं की मूर्तियां आदि सम्मिलित हैं।

मूलशब्द – बौद्धकला, सामाजिक जीवन, संस्कृति, भरहुत, सांची, बोधगया, वस्त्राभूषण

प्राचीन भारत में मौर्य काल के बाद भारतीय मूर्तिकला की प्रवृत्तियों में अनेक मूलभूत परिवर्तन हुए। इनका आभास मुख्यतः भरहुत एवं सांची की छवियों में मिलता है। यह युग 'क्लासिकल' प्रवृत्ति के आगमन को स्पष्ट करता है। क्लासिकल प्रवृत्तियां शुंग काल के बाद भी गुप्त काल तक की बौद्ध कला में देखी जा सकती हैं। यदि भरहुत की 'क्लासिकल' कला में प्रतीकात्मकता की सम्पन्नता है तो दूसरी ओर सांची के शिल्प में निश्कपट सुखवाद की भावना है। गुप्तयुगीन कला में 'क्लासिकल' परिवेश की पराकाष्ठा है। प्राचीन बौद्ध कलाकृतियों को देखने से समाज के आदर्श, कोमल भावना, सरस मनोवृत्ति तथा स्वार्थपरता से विमुख विषयों का परिज्ञान स्वतः हो जाता है। मौर्य एवं शुंग–सातवाहन काल के दौरान भारत में बौद्धधर्म से सम्बन्धित अनेक कलाकेन्द्र अस्तित्व में आ चुके थे। इनमें से भरहुत स्तूप की शुंग कालीन कला का मुख्य उद्देश्य मध्येदशीय लोगों के सामूहिक विचार तथा सामाजिक भावना को प्रकट करना था। यह लोगों के मानसिक संकल्प से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती है। व्यक्तित्व से रहित यानी सामूहिक कल्पना का प्रतिनिधित्व इसमें दिखता है, जिससे जन समुदाय की परम्परा की अभिव्यक्ति भी उसके द्वारा हो जाती है। भरहुत स्तूप की वेदिका पर अप्सराओं के नृत्य तथा दरबार का दृश्य भी प्रदर्शित किया गया है। इसमें मिश्रकेशी, अलम्बुशा, सुभद्रा तथा पद्मावती आदि अप्सराओं को नृत्यरत दिखाया गया है।[1] दूसरे स्थान पर भी नृत्य–गायन का दृश्य अंकित किया गया है। यहां किसी उत्सव का वातावरण प्रतीत होता है क्योंकि इसके लिए 'साडिकं सम्मदृंतुरं देवानाम' पाठ का प्रयोग हुआ है। साडिक शरद ऋतु में मनाया जाने वाला सट्टक पर्व ही है।[2] वे सभी प्रसन्नता से उस पर्व पर देवों की सभा में वाद्य–संगीत प्रस्तुत कर रही हैं। वेदिकाओं पर इन अंकनों का वास्तविक प्रयोजन क्या रहा होगा इसके विषय में निश्चित रूप से कुछ भी कहना संभव नहीं हैं। किन्तु इन चित्रों से तद्युगीन उत्सव, संगीत, वाद्य यंत्रों, गायन एवं नृत्यांगनाओं के वस्त्रालंकरण तथा साज–श्रृंगार का पर्याप्त अनुमान हो जाता है। साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि इस शुंग काल में किस प्रकार बौद्ध धर्म पर अन्य सम्प्रदायों अथवा समाज में प्रचलित आमोद प्रमोद का प्रभाव पड़ रहा था। नृत्य का बौद्ध धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं था परन्तु भरहुत की वेदिकाओं पर इस प्रकार का अंकन होना आश्चर्यजनक है। वस्तुतः अशोक के काल के पश्चात समाज में अनेक परिवर्तन देखने को मिलते हैं। पुष्यमित्र शुंग के काल में वैदिक धर्म एवं उससे सम्बन्धित क्रियाकलापों का समाज में प्रचलन बढ़ गया था। अशोक ने जहां उत्सवों एवं मेलों आदि पर रोक लगा दी थी, वहीं इस काल में भरहुत की वेदिका पर अंकित इन दृश्यों से यह पुष्टि होती है कि समाज में उत्सव, मेले, नृत्य गायन एवं वादन जैसे कार्य पुनः प्रारम्भ हो चुके थे।

भारतीय कला के इतिहास में बोधगया वेदिका का स्थान भरहुत से श्रेष्ठ माना गया है। यह वेदिका बोधिवृक्ष तथा चंक्रम पथ को घेर कर तैयार की गई है। बौद्ध मत से संबंधित होने पर भी इस वेदिका पर सूर्य का चित्रण किया गया है।[3] यह एक प्रकार से समाज में उपस्थित सांस्कृति समन्वय एवं धार्मिक सहिष्णुता का द्योतक है। जिसमें यह अभिव्यक्त करने का प्रयास

किया गया है कि यद्यपि बोधगया बौद्धों का पूजनीय स्थान है तथापि इस समय समाज में प्रचलित ब्राह्मण धर्म एवं उससे सम्बन्धित देवताओं तथा विश्वास दोनों ही सम्प्रदायों में प्रचलन में थे। बोधगया की वेष्टिनी पर सर्वाधिक विलक्षण अंकन बारह राशि चिन्हों का है जिसे प्रमुख स्थान दिया गया है। इन बारह राशियों की आकृतियां ज्योतिष के आधार पर तैयार की गई हैं। ताकि देखकर उस राशि का भाव प्रकट हो जाय।[4]

वहीं सांची की वेदिका यद्यपि साधारण है, तथापि सांची के तोरण द्वार अलंकरण की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं समृद्धशाली हैं। उन पर तत्कालीन जीवन के विभिन्न पक्षों को जैसे ऊंचे, धनवान, कुलीन, राजकीय दरबार, नगरों का व्यस्त जीवन, ग्रामीण लोगों का कर्म, जंगली जीवन आदि को कलात्मक ढंग से उत्कीर्ण किया गया है। इसके साथ ही सांची के तोरणों पर विस्वन्तर जातक और भाडदंत जातक का प्रदर्शन बड़ी ही सजीवता और कथानक में प्रवाह तथा क्रमबद्ध दिखाने का प्रयास किया गया है। पश्चिमी तथा दक्षिण के तोरण पर बुद्ध के शरीर के अवशेषों के लिए जो युद्ध का प्रदर्शन है उसमें वास्तविक युद्ध का आभास मिलता है। वहां पैदल, रथ, अश्व तथा हस्ति के कार्यों का सजीव चित्रण है।[5] इससे इंगित होता है कि तत्कालीन समय पर होने वाले युद्धों में किस प्रकार की सेना का प्रयोग किया जाता था। सैनिकों के वस्त्र, अस्त्र–शस्त्र आदि की जानकारी भी इन दृश्यों से हो जाती है। इसी प्रकार के उदाहरणों में रामग्राम की धार्मिक यात्रा की भी गणना होती है।

भरहुत तथा सांची में स्तूप वास्तु और शिल्प का बहुत विकास हुआ था। मथुरा के कलाकारों ने उसी परम्परा का अनुसरण किया किन्तु उनके द्वारा निर्मित स्तूप निर्माण काला का कोई भी नमूना सुरक्षित नहीं रहा। प्राप्त अवशेषों से प्रतीत होता है कि यहां के स्तूपों में मेधियां, अधिष्ठान, वेदिका, तोरण, अण्डभाग, हर्मिका, छत्रावली आदि सभी अवयव शामिल थे। यहां से प्राप्त एक वेदिका के अवशेष पर दो गजारोहियों का सुन्दर चित्र प्राप्त हुआ है।[6] गजारोहियों ने धोती पहनी है साथ ही मस्तक पर उष्णीश का प्रयोग किया है। उनके हाथों में हाथी को नियंत्रित करने हेतु चाबुक भी दिखाया गया है। दोनों के बांये हाथ में कड़े तथा कानों में कुण्डलों को धारण किये हुए दिखाया गया है। साथ ही हाथी के मस्तक को भी शीर्ष पट्ट द्वारा सुसज्जित किया है एवं हाथी की पीठ पर कालीननुमा एक वस्त्र भी है जिस पर गजारोही व्यक्ति बैठे हैं। वहीं एक अन्य स्तम्भ पर एक भिक्षु छत्र लगाये खड़ा है। ऊपर के भाग में बंदरों के लिए नेत्रों के अस्पताल का दृश्य है, जिसमें मूढे पर बैठे हुए चिकित्सक बन्दर की आंखों में सलाई से दवा लगा रहे हैं।[7] यह पशु चिकित्सा से सम्बन्धित सर्वोत्तम उदाहरणों में से एक है। समाज में मनुष्य के साथ–साथ पशु–पक्षियों के लिए भी संवेदनाओं का होना बहुत आवश्यक है, बौद्ध कला में इन संवेदनाओं को पूर्णरूप से अभिव्यक्त किया गया है। इसके साथ ही वेदिका स्तम्भों पर शालवृक्ष के नीचे उद्यान क्रीड़ा करती हुई स्त्रियों का अंकन भी किया गया है। शालभंजिकाओं के रूप–श्रृंगार एवं वेशभूषा से तद्युगीन समाज में प्रचलित वस्त्रों, आभूषणों तथा मनोरंजन के साधनों को विषय में महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। शालभंजिकाओं को भांति–भांति के

केशविन्यासों को करते हुए दर्शाया गया है। इनमें पुष्प शेखर या भारी माला द्वारा बालों को गूंथना, पुष्पोचय, पुष्पप्रथन, पुष्पाभरण आदि केशविन्यास समाज में अवश्य ही लोकप्रिय थे, जिनका अंकन मूर्तिकला में देखने को मिलता है।[8]

वस्त्राभूषण किसी भी समाज एवं संस्कृति के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण पड़ाव होते हैं। इनका व्यक्ति से सीधा सम्बन्ध है। किसी भी काल में समाज में व्यक्तियों द्वारा जिस प्रकार के वस्त्राभूषणों का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार के वस्त्राभूषणों का निरूपण उस काल की कला में भी किया जाता है। यद्यपि समाज में कलाकार स्वतन्त्र रूप से कार्य करता है किन्तु सामाजिक परिस्थितियों द्वारा उसके मानसिक विकास को प्रोत्साहन मिलता है। प्राकृतिक सुन्दरता से उसकी शक्ति का उद्‌बोधन होता है और अपनी शिक्षा, दीक्षा और अनुभूतियों से कला में सहायता प्राप्त करता है। सामाजिक प्रभाव का साक्षात दृष्टांत मूर्तियों के वस्त्राभूषण से विदित हो जाता है। प्रारम्भिक बौद्ध कला में धार्मिक प्रतीक को प्रधान स्थान दिया गया। बुद्ध के विभिन्न प्रतीकों का पूजन करते हुए लोगों को दिखलाया गया है। मौर्य काल से पूर्व यक्ष के प्रतिमाओं में अधोवस्त्र तथा उत्तरीय दिखाई देता है। दीदारगंज की यक्षी दो वस्त्रों के साथ करधनी, पायल, कुण्डल आदि आभूषणों से सुसज्जित है।[9] मौर्य तथा शुंग कालीन आकृतियों में धोती, चादर के अतिरिक्त पगड़ी भी वर्तमान है। स्त्रियों के श्रृंगार में केशविन्यास के नमूने अत्यन्त आकर्शक दिखाई पड़ते हैं। आभूषणों में कुण्डल, हार, चूड़ामणि, कंकण, वलय, केयूर, पायल, तथा अंगूठियां आदि प्रमुख हैं। किसी–किसी हाथ की हथेलियां तक अलंकृत हैं। इसका मूल कारण यह है कि सामाजिक अलंकरण ने कला को मुख्यतः मूर्तिकला को अत्यन्त प्रभावित किया था, जिसका निरूपण कलाकारों के द्वारा सांची, भरहुत, सारनाथ, अमरावती, मथुरा, गया आदि विभिन्न कलाकेन्द्रों की कलाकृतियों में देखने को मिलता है। आरम्भिक मौर्य एवं शुंग कालीन मूर्तियों में वस्त्रों का बहुत अधिक प्रयोग नहीं हुआ है। वस्त्रों के अधिक प्रयोग को दर्शाकर वास्तव में वस्त्राभूषणों से सज्जित अंगों को वास्तविक रूप से नहीं दिखाया जा सकता है। परन्तु कुषाण काल के बाद जब देवी–देवताओं की मूर्तियों का निर्माण किया जाने लगा तब उन्हें वस्त्रों से सुसज्जित किया जाने लगा। इसके साथ ही विभिन्न प्रकार के केश विन्यासों का प्रचलन भी इस काल में हो चुका था। ग्रंथि बांधने के साथ–साथ एक वेणी या दो वेणी युक्त केशों का प्रदर्शन मूर्तिकला में किया गया है। इसके साथ ही केशो में रत्न जटित आभूषणों का प्रयोग भी विभिन्न मूर्तियों में देखने को मिलता है, जिनमें शीर्षजाल, शीर्षपट्ट आदि प्रमुख हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्राचीन बौद्ध कला में जनमानस की सांस्कृतिक परम्परा का प्रतिनिधित्व होता है। इसमें तत्कालीन जन–जीवन का यथार्थ अंकन हुआ है। मनुष्यों के घर, व्यावसाय के साधन देवों और राजाओं की मूर्तियां, आवागमन के साधन, रथ, साड़ियां, नौकाएं, विभिन्न प्रकार की वेशभूषा, श्रृंगार सामग्री, अस्त्र–शस्त्र, आभूषण आदि अत्यन्तर

सुन्दरता के साथ उकेरे गये हैं। नगरों में महलों का दृश्य, जंगल के वातावरण का प्रदर्शन तथा मनुष्य की भावभंगिमा एवं वस्त्राभूषणों के चित्रण में कलाकारों ने बड़ी कुशलता प्राप्त की है। राजा तथा सामान्य लोगों के वस्त्र परिधानों में पर्याप्त अंतर प्रदर्शित किया गया है। साधारण जनों को धोती, चादर और पगड़ी के साथ प्रस्तुत किया गया है जबकि राजा एवं धनी वर्ग को धातुओं एवं रत्नों से अलंकृत वस्त्रों का प्रयोग करते हुए दिखाया गया है। नृत्यरत स्त्रियों के प्रदर्शन में उनके शरीर पर हार, भुजबंद, मेंखला, अंगूठी, कंकण, ललाटिका, शीर्षजाल आदि का सुन्दर अंकन देखने को मिलता है। ये सभी आभूषण उस समय समाज में अवश्य ही प्रचलित रहे होंगे। ग्रामीण जन–जीवन के दृश्यों में नाई लुहार, शिकारी, माली आदि को अपने व्यवसाय से सम्बन्धित उपकरणों के साथ दिखाया गया है। इस प्रकार प्राचीन बौद्ध कला भारतीय जन–मानस के जनजीवन का वास्तविक प्रतिनिधित्व करती है।

❒

सन्दर्भ –

1. *श्रीवास्तव, बृजभूषण, प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान एवं मूर्तिकला, विश्वविद्यालय प्राकशन, वाराणसी,2015,पृ. 284*
2. *अग्रवाल, वी. एस., इंडियन आर्ट, पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी, 1965, पृ.136*
3. *मार्शल, जे., जर्नल ऑफ रॉयल एसियाटिक सोसायटी, 1908, पृ.1096–97, प्लेट 5, चित्र 3*
4. *बरूआ, बी. एम. गया एण्ड बुद्ध–गया, वॉल्यूम 2, कलकत्ता, 1934, पृ. 63*
5. *उपाध्याय, वासुदेव, प्रतिमा–विज्ञान, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, 1970, पृ. 44*
6. *अग्रवाल, वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृथिवी प्रकाशन वाराणसी 1966, पृ. 264*
7. *वही, पृ. 264*
8. *वही, पृ. 273*
9. *उपाध्याय, वासुदेव, प्रतिमा–विज्ञान, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, 1970, पृ. 20*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 105–113

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

गढ़वाल हिमालय की कार्तिकेय प्रतिमाओं की लोकप्रियता की प्रमाणिकता : एक विश्लेषण

प्रो.देवेन्द्र कुमार गुप्ता

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, गुरूकुल कांगड़ी, विश्वविद्यालय, हरिद्वार

श्वेता कुमारी

शोधार्थी, इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, गुरूकुल कांगड़ी, विश्वविद्यालय हरिद्वार

आदिकाल से भातरवर्ष में देवोपासना की प्रवाहमान समृद्ध सनातन परंपरा में कार्त्तिकेय एक महत्वपूर्ण देव के रूप में प्रतिष्ठित रहे हैं। परवर्त्ती ग्रंथों में शिव–पुत्र के रूप में प्रतिष्ठित कार्त्तिकेय को वैदिक कालीन ग्रंथों में युद्ध–देवता के रूप में वर्णित किया गया है। कुमार शब्द का वर्णन सर्वप्रथम ऋग्वेद में मिलता है जहाँ इन्द्र, अग्नि आदि देवों को वीर–योद्धा रूप में आह्वान के लिए कुमार शब्द से सम्बोधित किया गया है।[1] अथर्ववेद में कार्त्तिकेय युद्ध में अपने मित्रों के साथ महत्वपूर्ण कार्यों को संपन्न करते हुए वर्णित हैं।[2] शतपथ ब्राह्मण मे कार्त्तिकेय को अग्नि का नवाँ स्वरूप माना गया है।[3] ऐतरेय ब्राह्मण में कार्त्तिकेय को व्यास कहा गया है।[4] मैत्रायणी संहिता में कार्त्तिकेय के तीन नामों यथा कुमार, कार्त्तिकेय और स्कंद का उल्लेख मिलता है।[5] छान्दोग्य उपनिषद् में कार्त्तिकेय का उल्लेख स्कंद रूप में मिलता है यहाँ स्कंद को धूर्त्त कहा गया है, जो भाटों के सरदार थे।[6] सूत्रकाल आते–आते कार्त्तिकेय महत्वपूर्ण देव के रूप में प्रतिष्ठित हो गए। हिरण्यकेशिन गृह्यसूत्र में कार्त्तिकेय को विष्णु का अवतार कहा गया है।[7] बौधायन गृह्यसूत्र में कार्त्तिकेय को स्कंद, षण्मुख, विशाल, महासेन तथा सुब्रह्मण्यम् कहा गया है।[8] रामायण में कार्त्तिकेय को अग्नि और गंगा के संयोग से उत्पन्न पुत्र बताया गया है।[9] महाभारत में कार्त्तिकेय को युद्ध–देवता और देवताओं के सेनापति के रूप में वार्णित किया गया है।[10] पाणिनि के सूत्र पर भाष्य करते हुए पतंजलि ने शिव के साथ स्कंद तथा विशाख की प्रतिमाओं का उल्लेख किया है। जिनकी उस काल में पूजा की जाती थी।[11] वायुपुराण तथा ब्रह्माण्ड पुराण में कार्त्तिकेय को शिव–पार्वती और अग्नि से संबंधित करते हुए 'जाह्न्वीसूत''[12] एवं 'शंकरात्मज'[13] कहा गया है। मत्स्य पुराण में कार्त्तिकेय को शिव–पार्वती से उत्पन्न बताया गया है। अन्यत्र मत्स्य पुराण में ग्रहशांति के समय अन्य देवताओं के साथ कार्त्तिकेय के आह्वान का भी उल्लेख मिलता है। गुप्तकालीन महाकवि कालीदास की रचना कुमारसंभव में कार्त्तिकेय की उत्पत्ति संबंधी कथानक का विस्तृत वर्णन मिलता है।

इस प्रकार साहित्यिक ग्रंथों में कार्त्तिकेय को विभिन्न नामों यथा स्कंद, कुमार, देव सेनापति, षडानन्, अग्निपुत्र, गंगापुत्र आदि से अभिहित किया गया है। महाभारत के वनपर्व में कार्त्तिकेय के 53 नामों का उल्लेख है, ये हैं– आग्नेय, स्कंद, दीप्तिकीर्ति, अनामय, मयूरकेतु, धर्मात्मा, भूतेश, महिषामर्दन, कामजित, कामद, कान्त, सत्यवाक्, भुवनेश्वर, शिशु, शीघ्र, शुचि, चण्ड, दीप्तवर्ण, शुभानन्, अमोघ, अनघ, रौद्र, प्रिय, चन्द्रानन, दीप्तशक्ति, प्रशान्तात्मा, भ्रदकृत, कूटमोहन, षष्ठीप्रिय, धर्मात्मा, पवित्र, मातृवत्सल, कन्याभर्ता, विभक्त, स्वाहेय, रेवतीसुत, प्रभु, नेता, विशाख, नैगमेय, सुदुश्चर, सुव्रत, ललित, बालक्रीडनकप्रिय, आकाशचारी, ब्रह्मचारी, शूर, शखणोद्भव, विश्वामित्रप्रिय, देवसेनाप्रिय, वासुदेवप्रिय, प्रिय और प्रियकृत। इन ग्रंथों में कार्त्तिकेय के नामों की उत्पत्ति से संबंधित कथानक भी मिलते हैं।[14] रामायण में वर्णित कथानक भी मिलते है।[15] रामायण में वर्णित कथानक के अनुसार कृत्तिकाओं द्वारा दुग्धपान कराने के कारण इनका नाम कार्त्तिकेय[16] तथा तरूण योद्धा के रूप में प्रतिष्ठित होने के कारण इन्हें 'कुमार' कहा गया है। अन्यत्र रामायण में वर्णित कथानक के अनुसार गर्भावस्था में स्कंदित होने के कारण कार्त्तिकेय का नाम स्कंद पड़ा।[17] महाभारत के वनपर्व में वर्णित कथानक में अग्नि द्वारा उत्पन्न होने के कारण इन्हें अग्निपुत्र और छः ऋषि पत्नियों का पुत्र होने के कारण इन्हें षडानन् नाम से अभिहित किया गया है। इसी पर्व में इन्हें गंगापुत्र के नाम से भी संबोधित किया गया है।[18]

साहित्यिक साक्ष्यों के अतिरिक्त पुरातात्विक साक्ष्यों से भी कार्त्तिकेय की महत्ता एवं प्रामाणिकता स्पष्ट होती है। उत्तर भारत के प्रसिद्ध यौधेय गणराज्य जिनका साम्राज्य वर्तमान हरियाणा, पंजाब, राजस्थान तथा उत्तराखण्ड के गढवाल–हिमालय क्षेत्र तक विस्त त था, से प्राप्त मुद्राओं में कार्त्तिकेय का अंकन बहुलता से प्राप्त होता है।[19] इसी प्रकार कुषाण राजाओं के सिक्कों पर भी कार्त्तिकेय का अंकन बहुलता से मिलता है। गुप्तवंशीय शासक कुमारगुप्त प्रथम की मुद्राओं पर भी मयूर और कार्त्तिकेय का अंकन कार्त्तिकेय की लोकप्रियता का उत्कृष्ट प्रमाण है। उत्तर भारत के अतिरिक्त दक्षिण भारतीय इक्ष्वांकु तथा पल्लव राजवंश के शासकों की भी कार्त्तिकेय अंकित मुद्राएँ मिलती है। इस प्रकार साहित्यिक एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों से स्पष्ट होता है कि कार्त्तिकेय प्राचीन काल से ही किसी न किसी रूप में महत्वपूर्ण हिंदू–देव के रूप में प्रतिष्ठित रहे है।

विभिन्न ग्रंथों में कार्त्तिकेय की उत्पत्ति से संबंधित अनेक कथानक मिलते है। कार्त्तिकेय की उत्पत्ति का सबसे प्राचीन कथानक महाभारत के वन पर्व में मिलता है। इस कथानक के अनुसार योग्य सेनापति के अभाव में दानवों के विरूद्ध देवताओं की बार–बार पराजय होती थी। इस पर इन्द्र ने सोचा कि यदि अग्नि की ऐसी संतान हो जिसमें सब देवताओं की शक्ति समाहित हो तो वह देवसेना का सेनापतित्त्व करने के लिए सबसे योग्य होगा। तदन्तर सभी देवगण सप्तर्षियों द्वारा अनुष्ठित यज्ञ में शामिल होने उनके आश्रम में एकत्रित हुए। अग्नि देव भी आश्रम में सभी देवगणों के साथ उपस्थित हुए। यहाँ अग्नि देव को सूर्यमण्डल से प्रकट होने का उल्लेख है। यज्ञ अनुष्ठान में अनन्तर अग्नि ऋषि पत्नियों के सौंदर्य पर मुग्ध हो गए और अपने इस अनुराग से आतुर होकर वन में भ्रमण करने चले गए। इसी समय दक्ष पुत्री स्वाहा, जो आश्रम में ही अग्नि पर अनुरक्त हो गई थी, ने वन में अग्नि के साथ छल करके ऋषि पत्नियों का वेश धारण कर अग्नि के साथ समागम किया। परन्तु स्वाहा केवल छह ऋषि पत्नियों का वेश ही

धारण कर पायी। इस प्रकार छह बार अग्नि से समागम करके स्वाहा ने उसके वीर्य को एक श्वेत पर्वत पर शरों के बीच डाल दिया। शरों में स्थापित इस वीर्य से समय होने पर एक शिशु का जन्म हुआ, जिसके सभी संस्कार इन्द्र ने विधिवत सम्पन्न कराए।[20] इस प्रकार हम देखते है कि यहाँ कार्त्तिकेय को अग्नि पुत्र माना गया है और शिव से इनका कोई संबंध नहीं है। इस कथानक में उल्लिखित एक पक्ष में अग्नि का तादात्म्य सूर्य से स्थापित किया गया है। अतः विदित होता है कि प्रारंभ में कार्त्तिकेय सूर्य संबंधी देवता थे और सम्भवतः सूर्य के उस देदीप्यमान प्रकाश के प्रतीक थे जिसके समक्ष समस्त अंधकार का उन्मूलन हो जाता है। इस कारण अंधकार के प्रतीक दानवों के दमन के लिए कार्त्तिकेय ही उपयुक्त देवता थे। इस संबंध में यह भी दृष्टया है कि कार्त्तिकेय का विशेष वाहन मयूर है जिसका प्राचीन काल से अपने पंख पर के सुनहले चिन्हों के कारण और अन्य कारणों से सूर्य से घनिष्ठ संबंध रहा है। मयूर का सूर्य के साथ सम्बंध का एक उदाहरण हमे सिंधुघाटी में चन्हूदड़ों नामक स्थान से प्राप्त भाण्डावशेष पर अंकित अनेक चित्रों में मिलता है। वहाँ सूर्य के प्रतीकों के साथ अनेक बार मयूर भी दिखाया गया है।[21] अतः मयूर का कार्त्तिकेय का वाहन होना इस बात का एक और प्रमाण है कि प्रारंभ में कार्त्तिकेय एक सूर्य–संबंधी देवता थे। परन्तु जब इस नवजात शिशु को देवताओं के सम्मुख लाया गया, तब उसको 'रूद्रपुत्र' कहा गया, क्योंकि अग्नि का नाम रूद्र भी था। जब 'रूद्रपुत्र' के वास्तविक अर्थ को लोग भूल गए, तब शिव को ही कार्त्तिकेय का वास्तविक पिता माना जाने लगा। शिव के इस कार्त्तिकेय पितृत्व का समाधान करने के लिए ही कार्त्तिकेय के जन्म की कथा में कुछ फेरबदल किया गया और कथानक को कुछ बढ़ाया गया। इस परिवर्तित कथानक का पहला रूप स्वयं महाभारत में ही मिलता है। वनपर्व में एक अन्य स्थान पर कार्त्तिकेय की उत्पत्ति की कथा कही गई है और इसमें बताया गया है कि शिव और पार्वती ने क्रमशः अग्नि और स्वाहा का रूप धारण किया था अतः कार्त्तिकेय वास्तव में इन्हीं दोनों की संतान थे।[22] कथा की इससे अगली अवस्था तब आई जब इसको शिव और पार्वती के विवाह का उत्तर भाग बना दिया गया। इस रूप की कथा भी महाभारत में मिलती है। देवताओं ने जब शिव और पार्वती की रतिक्रिया का वृतांत सुना, तब वह भय से काँप उठे। उन्होंने शिव के पास जाकर प्रार्थना की कि वह पार्वती से कोई संतान उत्पन्न न करें, क्योंकि ऐसे तेजस्वी माता–पिता की संतान का तेज कोई सहन नहीं कर सकेगा और अपने तेज से वह समस्त विश्व को ध्वस्त कर देगा। शिव ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली, परन्तु पार्वती असामायिक विघ्न उत्पन्न करने वाले देवताओं पर अत्यंत कुपित हो गई और उन्होंने देवताओं को श्राप दिया कि उनकी कभी कोई संतान नहीं होगी। शिव ने अपना वीर्य ऊपर खींच लिया और तभी से वह 'उर्ध्वरेताः' कहलाए। परन्तु उनके वीर्य का जो अंश स्खलित होकर पृथ्वी पर गिर गया था उसने तत्क्षण ही प्रचण्ड ज्वाला का रूप धारण कर लिया। इस वीर्य को अग्नि ने जो पार्वती के श्राप के समय देवताओं के साथ उपस्थित नहीं थे, धारण कर लिया। जब देवता अपने सैन्य नेतृत्त्व के लिए सेनापति खोज रहे थे, तब ब्रह्मा ने उन्हें यह परामर्श दिया कि वह अग्नि से कहे कि वह शिव के इस वीर्य को गंगा के गर्भ में स्थापित करें और इस प्रकार जो संतान उत्पन्न होगी वह दानवों पर विजय प्राप्त कर पाएगी। अग्नि और गंगा इस बात के लिए सहमत हो गए। गंगा के गर्भ में शिव के इस वीर्य ने जब भ्रूण का रूप धारण किया, तब वह इसे सहन नहीं कर सकी। तब

गंगा उसे मेरू पर्वत पर सरकण्डों के समूह में रख आई। समय पूर्ण होने पर इस भ्रूण ने एक शिशु का रूप धारण कर लिया। पर्वत पर बिहार कर रहीं कृत्तिकाओं ने इस शिशु को प्राप्त किया और इसका पालन–पोषण किया।[23] महाभारत के ही उत्तर संस्करण में इस कथानक के अंतिम भाग का एक विचित्र और स्पष्टतः अपरकालीन रूप अनुशासन पर्व में दिया गया है। इसमें कथा इस प्रकार है कि जब गंगा ने भ्रूण को फेंक दिया, तब छह कृत्तिकाओं ने उसे उठा लिया और उसके छह भाग करके अपने–अपने गर्भ में स्थापित किया। इस प्रकार विभक्त भ्रूण वृद्धि करता गया और पूरे समय पर छहों कृत्तिकाओं ने एक शिशु के विभिन्न अंगों को जन्म दिया। परन्तु पैदा होते ही ये विभिन्न अंग जुड़ गए। इस प्रकार कर्त्तिकेय की उत्पत्ति हुई।[24]

पुराणों में कार्त्तिकेय की उत्पत्ति से संबंधित कुछ भिन्न कथानक मिलता है। शिव पुराण के अनुसार तारकासुर सहित अन्य दानवों के अत्याचार से त्रस्त होकर विष्णु समेत सभी देवगण शिव से पुत्र उत्पन्न करने की प्रार्थना करने उनकी शरण गए, क्योंकि वरदान के परिणामस्वरूप शिव से उत्पन्न पुत्र ही तारकासुर का वध कर सकता था। जब देवगण शिव से प्रार्थना करने उनके द्वार पहुँचे तो उस समय शिव–पार्वती के साथ एकांतवास में थे। द्वार आए देवगणों की प्रार्थना सुनकर शिव रति क्रिया छोड़कर देवगणों से मिलने चले आए। तभी अनजाने में शिव का तेज स्खलित हो गया। शिव के इस स्खलित तेज को देवगणों की प्रेरणा से अग्नि ने कपोत वेश धारण कर ग्रहण कर लिया, क्योंकि वेदानुसार सभी देवता अग्नि के मुख से ही भोजन ग्रहण करते हैं। अतः अग्नि द्वारा शिव के तेज को ग्रहण करते ही अग्नि समेत सभी देवगण पीड़ित हो उठे। शिव के तेज से उत्पन्न ताप की असह्नीय पीड़ा से मुक्त होने के लिए सभी देवगण शिव से प्रार्थना करने लगे। देवगणों की प्रार्थना से प्रसन्न होकर शिव ने उन्हें असह्नीय ताप की पीड़ा से मुक्त होने के लिए तेज वमन करने को कहा। शिव की इस प्रेरणा से तेज का वमन कर देवगण असह्नीय ताप की पीड़ा से मुक्त हो गए। परंतु अभी भी ताप की असह्नीय वेदना से व्याकुल अग्नि चुपके से तेज ग्रहण करने की भूल के लिए शिव से क्षमा माँगते हैं। अग्नि की इस भूल को क्षमा करते हुए शिव उन्हें अपने तेज के ताप की असह्नीय वेदना से मुक्त होने के लिए अग्नि द्वारा धारण गर्भ को किसी सुलक्षणा स्त्री में स्थापित करने को कहते है। इसी अवसर पर माघ–मास के प्रातःकालीन स्नान के लिए सप्तऋषि पत्नियाँ वहाँ आती हैं। स्नान के पश्चात् वशिष्ठ ऋषि की पत्नी अरूँधती को छोड़कर अन्य छः ऋषि पत्नियाँ शीत से पीड़ित होकर अग्नि ज्वाला के समीप आती हैं। अग्नि ज्वाला के समीप पहुँचने पर अग्नि द्वारा गृहीत तेज रोमकूप द्वारा ऋषि पत्नियों के शरीर में प्रविष्ट हो गया। शिव के इस तेज के प्रविष्ट होते ही सभी छः ऋषि पत्नियाँ गर्भवती हो गयी। अपनी पत्नियों के गर्भवती होने की बात जानकर क्रोधातुर ऋषियों ने अपनी पत्नियों का परित्याग कर दिया। दुख से व्याकुल पति परित्यक्ता ऋषि पत्नियों ने शिव के तेज से उत्पन्न इस गर्भ को हिमालय के हिम शिखर पर त्याग दिया। शिव के तेज से उत्पन्न इस गर्भ के ताप से हिमालय भी प्रकम्पित हो उठा। हिमालय ने इस तेज से उत्पन्न गर्भ को गंगा में विसर्जित कर दिया। शिव के तेज के प्रचण्ड ताप को गंगा भी सहन नही कर सकी। गंगा ने इस गर्भ को सरकण्डों के समूह में अपनी तरंगों द्वारा स्थापित कर दिया। सरकण्डों के समूह में स्थापित शिव के तेज से उत्पन्न गर्भ से माघ–मास के शुक्ल–पक्ष की षष्ठी तिथि को एक तेजस्वी सुंदर बालक का प्रादुर्भाव हुआ।[25]

प्रतिमाशास्त्रीय ग्रंथों में कार्त्तिकेय प्रतिमा के लक्षणों का विस्तार से वर्णन प्राप्त होता है। बृहत्संहिता[26] के अनुसार कार्त्तिकेय प्रतिमा का अंकन बाल स्वरूप में मयूर पर आसीन तथा हाथ में ध्वज और शक्ति लिए हुए करना चाहिए। विष्णुधर्मोत्तर पुराण[27] के अनुसार कार्त्तिकेय को षड्मुखी तथा चार भुजाओं सहित लाल वस्त्र धारण किए हुए मयूरासीन प्रदर्शित करना चाहिए। चतुर्भुजी देवता के दाहिने हाथों मे कुक्कुट और घंटा तथा बाएँ हाथों में विजय ध्वज और शक्ति प्रदर्शित करना चाहिए। मत्स्य पुराण[28] में वर्णित प्रतिमाशास्त्रीय लक्षणों के अनुसार कार्त्तिकेय प्रतिमा को मध्यकालीन सूर्य के सदृश्य देदीप्यामान, कमल सदृश्य वर्णवाले एक सुकोमल कुमार के रूप में दण्डधारी और मयूरासीन प्रदर्शित करना चाहिए। साथ ही कार्त्तिकेय की द्वादशभुजी प्रतिमा के दाहिने छः हाथों में क्रमशः शक्ति, पाश, तलवार, बाण और शूल तथा अभयमुद्रा में प्रदर्शित करना चाहिए जबकि बायीं ओर के छः हाथों में धनुष, पताका, मुष्टि मुद्रा, तर्जनी, मुद्रा, खेटक तथा कुक्कुट को प्रदर्शित करना चाहिए। चतुर्भुजी प्रतिमा के दाहिने हाथों में खड्ग और दूसरा अभय या वरद् मुद्रा में प्रदर्शित करना चाहिए जबकि बायाँ हाथ शक्ति और पाश से युक्त प्रदर्शित करना चाहिए। कार्त्तिकेय की द्विभुज स्वरूप की प्रतिमा में देवता के दाहिने हाथ में कुक्कुट तथा बायें हाथ में शक्ति का अंकन करना चाहिए। द्वादशभुजी प्रतिमा की स्थापना नगर में, चतुर्भुज स्वरूप की स्थापना खर्वट (पर्वत के निकट का गाँव) में, द्विभुज स्वरूप की स्थापना ग्राम में करनी चाहिए। समरांगण सूत्रधार[29] के अनुसार कार्त्तिकेय प्रतिमा को तरूण सूर्य के सदृश्य तेजवान, रक्तवर्णी वस्त्र धारण किए हुए प्रदर्शित करना चाहिए। देवता को बाल स्वरूप में सुकांत, मंगलमय, तेजोमयी, प्रसन्न मुखाकृति युक्त एकमुखी एवं भाड्मुखी स्वरूप में आभूषणों से सुसज्जित विशेष मुकुट युक्त प्रदर्शित करना चाहिए। द्वादशभुजी प्रतिमा में देवता के दाहिने हाथ में शक्ति, बाण, खड्ग, भुशुण्डी, मुद्गर और छठा हाथ प्रसारित मुद्रा में प्रदर्शित करना चाहिए? जबकि बायें हाथों में धनुष, पताका, घण्टा, खेटक और कुक्कुट तथा छठा हाथ संवर्द्धनस्वरूप प्रदर्शित करना चाहिए। देवता की द्वादशभुजी प्रतिमा की स्थापना नगर में, षडभुजी प्रतिमा खेड़ा (छोटा गाँव) में तथा द्विभुजी प्रतिमा ग्राम में स्थापित करनी चाहिए। कार्त्तिकेय की प्रयोजनीय प्रतिमा को कुक्कुट के साथ क्रीड़ा लीला करते हुए मयूरासीन प्रदर्शित करना चाहिए। अपराजितपृच्छा[30] के अनुसार देवता को षड्मुखी, त्रिनेत्रधारी, द्वादशभुजी, मयूरासीन, माँसल देहयुक्त कुमारस्वरूप में प्रदर्शित करना चाहिए।

प्रतिमा निर्माण की दृष्टि से कार्त्तिकेय की प्रतिमा संपूर्ण भारत से प्राप्त हुई हैं, परंतु इस दृष्टि से गढ़वाल हिमालय का क्षेत्र भी अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। इस क्षेत्र से कार्त्तिकेय की प्रतिमाएँ दो स्वरूपों में प्राप्त हुई है एक उमा–महेश्वर की प्रतिमाओं के साथ तथा दूसरी स्वतंत्र प्रतिमा के रूप में। इस क्षेत्र से प्राप्त कार्त्तिकेय की स्वतंत्र प्रतिमा एकानन और षडानन् दोनों रूपों में प्राप्त हुई हैं। कार्त्तिकेय के एकानन स्वरूप का अंकन सर्वप्रथम यहाँ शासन करने वाले कुणिंद राजवंश की मुद्राओं पर मिलता है। साथ ही कुणिंद राजवंश के पश्चात् यहाँ शासन करने वाले अन्य राजवंशों कत्यूरी तथा चंद राजाओं के सिक्कों पर भी कार्त्तिकेय की प्रतिमाएँ मिलती है। मुद्राओं के अतिरिक्त कार्त्तिकेय की पाषाण–निर्मित प्रतिमाएँ भी बहुसंख्या में प्राप्त हुई हैं। प्रतिमा निर्माण के अतिरिक्त यहाँ सातवीं सदी से लेकर आगे प्रायः तीन सदियों तक शासन करनेवाले प्रथम ऐतिहासिक कार्त्तिकेयपुर– राजवंश, जो कि प्राचीन कुणिंदों की एक शाखा थी,

का नाम कार्त्तिकेयपुर होना, इस क्षेत्र में कार्त्तिकेय की लोकप्रियता का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस क्षेत्र से प्राप्त स्वतंत्र रूप में निर्मित कार्त्तिकेय प्रतिमाओं का विवरण निम्न प्रकार है –

1. इस स्वरूप की पहली प्रतिमा (चित्र संख्या 1) देहरादून जिले में स्थित लाखामण्डल के लाक्षेश्वर महादेव मंदिर से प्राप्त हुई है। इस मूर्ति में षड्मुखी देवता को अपने वाहन मयूर के ऊपर ललितासन में बैठे हुए प्रदर्शित किया गया है। देवता का दाहिना पैर नीचे की ओर लटकता हुआ पीठिका पर स्थित है, जबकि बायाँ पैर मयूर की ग्रीवा से लिपटा हुआ उसकी पीठ पर स्थित है। इस मूर्त्ति में देवता के षड्मुखों को दो पंक्तियों में एक के ऊपर एक करके प्रदर्शित किया गया है। इस मूर्त्ति में चतुर्भुजी देवता के दाहिने दो हाथों में से पिछले हाथ में शक्ति है जबकि अगला हाथ अभयाक्ष मुद्रा में है। इसी प्रकार बायीं तरफ के दो हाथों में से पिछले हाथ में घण्टा (?) है, जबकि अगले हाथ में कुक्कुट को पकड़े हुए दर्शाया गया है। इस मूर्त्ति में देवता को जटाजूट, जिनकी घुंघराली लटे दोनों कंधों पर फैली है, के अतिरिक्त कुण्डल, कण्ठा, यज्ञोपवीत, बाजूबंद, कंगन, कटिबंध तथा पादकटक आदि आभूषणों से सुसज्जित दर्शाया गया है। इसके अतिरिक्त देवता के सिर के पीछे किनारे से अलंकृत प्रभामण्डल का अंकन है। इसी स्थान से प्राप्त यदुवंश राजकुमारी ईश्वरा के अभिलेख के आधार पर इस इस मंदिर की निर्माण तिथि छठीं–सातवीं शताब्दी ई. मानी गयी है। अतः इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस मूर्त्ति का निर्माण भी लगभग इसी समय किया गया होगा।

2. इस स्वरूप की दूसरी प्रतिमा (चित्र संख्या–2) चमोली जिले के गोपेश्वर से प्राप्त हुई है, जो वर्तमान स्थानीय संग्रह में रखी हुई है। इस प्रतिमा में देवता को अपने वाहन मयूर के ऊपर ललितासन में बैठे हुए प्रदर्शित किया गया है। इस मूर्ति में द्विभुज देवता के दाहिने हाथ में शक्ति है जबकि बायाँ हाथ मयूर को फल खिलाते हुए प्रदर्शित है। साथ ही देवता को त्रिशिखा प्रकार की शिरोभूषा, पत्र–कुडल, एकावली, व्याध्रनख, उदरबंद, कटिबंध, बाजूबंद, कंगन आदि से सुशोभित दर्शाया गया है। देवता के सिर के पीछे विकसित पद्म प्रभामण्डल का अंकन है। साथ ही देवता के मुख–मण्डल पर आध्यात्मिक कांति की अद्भुत छटा विद्यमान है। हाथों की स्थिति के आधार पर यह प्रतिमा मत्स्यपुराण के विवरण के अनुरूप बनाई हुई प्रतीत होती है।

इस स्वरूप की तीसरी प्रतिमा (चित्र संख्या–3) चमोली जिले के गोपेश्वर से प्राप्त हुई है, जो वर्तमान में स्थानीय संग्रह में रखी हुई है। इस प्रतिमा में एकमुखी देवता को अपने वाहन मयूर के ऊपर उत्कुटिकासन में बैठे हुए दर्शाया गया है। इस मूर्त्ति में द्विभुज देवता के दाहिने हाथ में शक्ति है जबकि बायाँ हाथ मयूर को फल खिलाते हुए प्रदर्शित है। साथ ही देवता को जटाजूट, कुण्डल, हार, केयूर कटिबंध आदि पहने हुए दर्शाया गया है। देवता के पीछे मयूर–पंख को इस प्रकार से प्रदर्शित किया गया है कि वह प्रभामण्डल सा बनाता हुआ प्रतीत होता है। इस स्वरूप की चौथी प्रतिमा (चित्र संख्या–4) चमोली जिले के गोपेश्वर से प्राप्त हुई है।

इस प्रतिमा में देवता को अपने वाहन मयूर का आश्रय लेकर एक पीठिका के ऊपर त्रिभंग मुद्रा में खड़े हुए प्रदर्शित किया गया है। इस मूर्ति में देवता को एकमुखी स्वरूप में प्रदर्शित किया गया है। द्विभुज देवता के दाहिने हाथ में शक्ति है जो नीचे पीठिका से लेकर ऊपर मुकुट तक ऊँची है जबकि बायाँ हाथ अपनी जंघा पर स्थित है। इस मूर्त्ति में देवता को जटाजूट, कुंडल, कंठा, बाजूबंद, कंगन, कटिबंध तथा पादकटक पहने हुए प्रदर्शित किया गया है। साथ ही देवता के पीठ के पीछे गोलाकार प्रभामण्डल का अंकन है, जिसका ऊपरी भाग खण्डित हो चुका है।

इस स्वरूप की पाँचवी प्रतिमा (चित्र संख्या–5) चमोली जिले के आदिब्रदी से प्राप्त हुई है। इस प्रतिमा में देवता को अपने वाहन मयूर के ऊपर ललितासन में बैठे हुए प्रदर्शित किया गया है। देवता का दाहिना पैर नीचे की ओर लटकता हुआ पीठिका पर स्थित है, जबकि बायाँ पैर मयूर की ग्रीवा से लिपटा हुआ उसकी पीठ पर स्थित है। इस मूर्त्ति में चतुर्भुजी देवता के दाहिने दो हाथों में से पिछले हाथ का आयुध अस्पष्ट है, जबकि अगला हाथ शक्ति धारण किए हुए प्रदर्शित है। इसी प्रकार बायीं तरफ के दो हाथों में से पिछले हाथ की स्थिति अस्पष्ट है जबकि अगला हाथ मयूर को फल खिलाते हुए प्रदर्शित है। इस मूर्त्ति में षड्मुखी देवता को जटामुकुट, रत्न–कुण्डल, कण्ठा, हार, श्रीवत्स बाजूबंद, कंगन, माला, कटिबंध तथा पादजालक आदि आभूषणों से सुसज्जित दर्शाया गया है। वास्तव में यह मूर्ति उत्तराखण्ड से प्राप्त कार्त्तिकेय मूर्तियों में सर्वोत्कृष्ट है।

इस स्वरूप की छठी प्रतिमा (चित्र संख्या – 6) जो कि वर्तमान में श्रीनगर संग्रहालय में सुरक्षित है, में देवता को एक पीठिका के ऊपर खड़े हुए प्रदर्शित किया गया है। लेकिन दुर्भाग्यवश इस मूर्त्ति में देवता का जंघा से ऊपर का संपूर्ण भाग पूर्णतया खण्डित है। इसीलिए यह बता पाना कठिन है कि इस मूर्ति में देवता के कितने मुख तथा भुजाएँ रही होगी। इस मूर्त्ति की एकमात्र सुरक्षित भुजा में से बाँयी भुजा में देवता को शक्ति पकड़े हुए प्रदर्शित किया गया है, जिसका निचला भाग पीठिका पर स्थित है। देवता के पीछे उनके वाहन मयूर को खड़े हुए प्रदर्शित किया गया है। जिसका मुख दाहिनी ओर प्रदर्शित है। साथ ही बायीं ओर अंजलि मुद्रा में बैठे एक उपासक को देवता की स्तुति करते हुए दर्शाया गया है।

इस स्वरूप की साँतवी प्रतिमा (चित्र संख्या–7) चमोली जिले के गोपेश्वर से प्राप्त हुई है। इस प्रतिमा में देवता को एक पीठिका के ऊपर त्रिभंग मुद्रा में खडे हुए प्रदर्शित किया गया है। लेकिन दुर्भाग्यवश इस मूर्ति में देवता का मुखमण्डल पूर्णतया खण्डित है। इस मूर्ति में द्विभुज देवता के दाहिने हाथ में शक्ति है जबकि बाँयी तरफ का हाथ खण्डित है, लेकिन उसकी स्थिति से ऐसा प्रतीत होता है कि यह हाथ कटि पर स्थित होगा। इस मूर्ति में देवता रत्नकुंडल, व्याघ्रनख से सुशोभित चन्द्राहार, कटिबंध तथा अधोवस्त्र पहने हुए प्रदर्शित किया गया है। देवता के पीछे उनके वाहन मयूर को खड़े हुए दर्शाया गया है।

इस प्रकार इस क्षेत्र से प्राप्त प्रतिमाओं के आधार पर हम कह सकते है कि यहाँ पर प्राचीन काल से ही कार्त्तिकेय लोकप्रिय देव के रूप में प्रतिष्ठित रहे है। जिनकी लोकप्रियता

केवल यहाँ के जनमानस में ही नहीं वरन् राजवंशीय परंपरा में भी स्थापित रही है। इसकी प्रामाणिकता का उत्कृष्ट उदाहरण यहाँ शासन करने वाले कुणिदों, यौधेयों एवं कुषाणों की मुद्राओं पर कार्त्तिकेय का अंकन है। साथ ही इस क्षेत्र में कार्त्तिकेय की महत्ता केवल स्वतंत्र देव के रूप में ही नहीं रही है अपितु शिव–परिवार के साथ भी उनका अंकन बहुतायत से मिलता है। प्रतिमाओं के अतिरिक्त इस क्षेत्र में कार्त्तिकेय का एक स्वतंत्र मंदिर भी रूद्रप्रयाग जिले के चौंरी ग्राम में स्थापित हैं, जो इस क्षेत्र में कार्त्तिकेय की लोकप्रियता का प्रमाण है। इस मंदिर में कार्त्तिकेय सफेद स्फटिक के पिंड रूप में प्रतिष्ठित हैं। जिसका कथानक कार्त्तिकेय एवं गणेश से जुड़ा है।

संदर्भित चित्र–

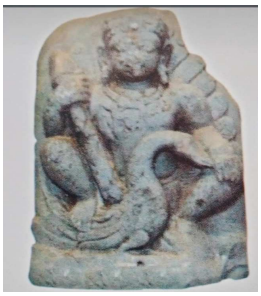

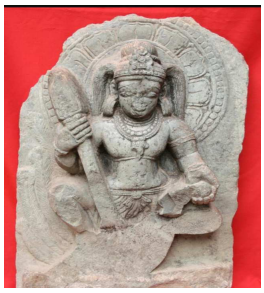

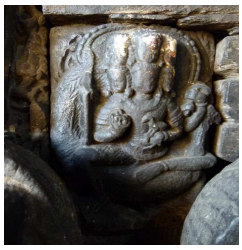

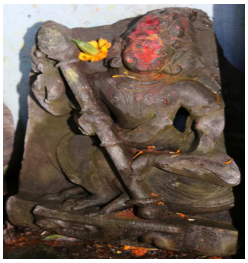

❒

सन्दर्भ –

1. *ऋग्वेद, 4/15*
2. *दि डेक्कन कॉलेज रिसर्च इंस्टीट्यूट, खण्ड 9, पृ. 210*
3. *शतपथ ब्राह्मण, अध्याय –1, भाग–2, पृ.134*
4. *ऐतरेय ब्राह्मण, 1/3*

5. मैत्रायणी संहिता, 2/9/1–2
6. पी.वी. काणे, हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, 5, पृ.1581
7. हिरण्यकेशि गृह्यसूत्र, 2/8/19
8. बौधायन गृह्यसूत्र, 2/5/8
9. रामायण, 1/37/19
10. महाभारत, 3/229/23–24, 'सोऽभिशिक्तो मघवता सर्णैदेवगणैः सह।'
11. अ टाध्यायी, 5/3/99, 'अतीत शुशुभे तत्र पूज्यमानो महर्षिभिः।'
12. वायुपुराण, 72/34/37
13. ब्रह्माण्ड पुराण, 3/10
14. मत्स्यपुराण, 93/13,
'भास्करस्येश्वरं विद्यादुमां चृशशिनस्तथा।
स्कंदमङ्गरकस्यापि बुधस्य च तथा हरिम्।।'
15. महाभारत, 3/232
16. रामायण, 1/37/24–25,
'ताः क्षीरं जातमात्रस्य कृत्वा समयमुत्तमम्।
ददुः पुत्रोऽयमस्मांक सर्वासामिति निश्चिताः
ततस्तु देवताः सर्वा कार्त्तिकेय इति ब्रुवन।
पुत्रस्त्रैलोक्यविख्यातो भवि यति न संशयः।।'
17. वही, 1/37/27,
'स्कंद इत्यब्रुवन देवाः स्कंद गर्भपरिस्त्रवे।
कार्त्तिकेयं महाबाहुं काकुत्स्थ ज्वलनोपमम्।।'
18. महाभारत, 3/225
19. अवस्थी, अवध बिहारी, यौधेयों का इतिहास, पृ. 6
20. महाभारत, 3/225
21. रॉयल सोसाइटी ऑफ आर्ट्स, इंडिया सेक्शन, 1637
22. महाभारत, 3/225
23. वही, 9/36
24. वही, 13/74
25. शिवपुराण, द्वितीय रूद्रसंहिता, चतुर्थ कुमारखण्ड।
26. बृहत्संहिता, 58/41, 'स्कंदः कुमाररूपः शक्तिधरो बर्हिकेतुश्चः।।'
27. विष्णुधर्मोत्तर पुराण, 3/71/3,
'चतुर्मूर्तेः कुमारस्य रूपं ते वच्मि यादव।
कुमारश्च तथा स्कंदो विशाखश्च गुरूस्तथा।'
28. मत्स्यपुराण, 260/45–46,
'अग्रे च ऋषयस्तद्वत कार्याः पैतामहे पदे
कात्तिकेयः प्रवक्ष्यामि तरूणादित्यसप्रभम्।।
कमलोदरवर्णाभं कुमारं सुकुमारकम्।
दण्डकैश्वीरकैर्युक्तं मयूरवाहनम्।।'
29. समरांगणसूत्रधार, 77/23–25,
'कार्त्तिकेयस्य संस्थानमिदानीमभिधीयते।
तरूणार्कनिभो रक्तवासाः पावकसप्रभः।।
ईशद्वालाकृतिः कान्तो मङ्गल्यः प्रियदर्शनः।
प्रसन्नवदनः श्रीमानोजस्तेजोन्वितः शुभः।।
मुक्तामणि भूषितः
षण्मुखो वैकवक्त्रो वा शक्तिं रोचिश्मति दधत्।।'
30. अपराजितपृच्छा, 2/41,
'षड्वक्त्रं द्वादशभुजं लोचनत्रयसंयुक्तं।
शिव्यारूढं मांसलं च कुमारं कुमारा कृतिम।।'

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 114–123

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

ग्रामीण भारत को सशक्त करने में मनरेगा की भूमिका

बंशीलाल

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग,
महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर
E-mail : bansilalbhamboo@gmail.com

सारांश

वर्तमान में मनरेगा सम्पूर्ण विकास का एक माध्यम बना हुआ है। इस कानून के तहत लाभान्वित समाज के कमजोर वर्गों के लोगों के एक बड़े हिस्से को काम मिला है। हमारे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्य वर्षभर उपलब्ध नहीं होते हैं एवं कृषि कार्यों के अतिरिक्त अन्य रोजगार के साधन सीमित मात्रा में ही उपलब्ध होते हैं, जिसके कारण या तो रोजगार की तलाश में जरूरतमंद श्रमिकों को गाँव से पलायन कर शहर की ओर जाना पड़ता है या फिर गाँवों में बेकारी का सामना करना पड़ता है। इसी समस्या को दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों की आजीविका सुरक्षा को मजबूत करने के लिए गाँव के प्रत्येक ऐसे परिवार को, जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक श्रम करने को तैयार हों, को एक वित्तीय वर्ष में 100 दिवस का निश्चित रोजगार अपने ही ग्राम पंचायत में उपलब्ध कराना है।

मूल शब्द : मनरेगा और ग्रामीण विकास, ग्रामीण सशक्तीकरण में मनरेगा की भूमिका।

प्रस्तावना

मनरेगा एक असामान्य कार्यक्रम इसलिए है, क्योंकि जिस काल में रोजगार और अधोसंरचना विकास के काम का निजीकरण किया जा रहा था, उस काल में सामाजिक आन्दोलनों और जनपक्षीय राजनीति के दबाव के कारण भारत सरकार ने सभी ग्रामीण परिवारों को 100 दिन के काम का वैधानिक अधिकार दिया। 2005 में बनी यह योजना एक कानून के तहत संचालित होती है। मनरेगा भारत के पर्यावरण को बेहतर करने के लिए भी एक बेहद महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम रहा है और पानी के विकराल होते संकट के असर को कम करने में भी इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।[1]

भारत के 55 प्रतिशत परिवार जॉबकार्ड धारी हैं। उत्तरप्रदेश में 1.85 करोड़, बिहार में 1.86 करोड़, पश्चिम बंगाल में 1.27 करोड़, गुजरात में 40.95 लाख, राजस्थान में 1.08 करोड़ और मध्यप्रदेश में 71.33 लाख परिवारों के पास जॉबकार्ड हैं। इनमें से 7.81 करोड़ (56 प्रतिशत) जॉबकार्ड धारी पिछले तीन सालों में योजना में श्रम करते रहे हैं। बिहार से सबसे ज्यादा पलायन होता है, वहाँ 1.86 करोड़ जॉबकार्ड धारी परिवारों में से केवल 54.12 लाख (29.1 प्रतिशत) ही सक्रिय हैं। छत्तीसगढ़ में 41.16 लाख जॉबकार्डों में से 33.41 (81.2 प्रतिशत), मध्यप्रदेश में 71. 33 लाख में से 52.58 लाख (73.7 प्रतिशत), पश्चिम बंगाल में 83.48 लाख (65.6 प्रतिशत) और राजस्थान में 69.88 लाख (64.6 प्रतिशत) जॉबकार्ड सक्रिय हैं। मई 2020 की स्थिति में 13.87 करोड़ जॉबकार्डों पर 27 करोड़ श्रमिक दर्ज हैं। इनमें से लगभग 12 करोड़ (कुल श्रमिकों का 44.3 प्रतिशत) ने पिछले तीन सालों में मनरेगा में श्रम किया है। बिहार में मनरेगा में दर्ज 2.61 करोड़ श्रमिकों में से केवल 63.23 लाख (24.2 प्रतिशत) श्रमिक ही सक्रिय हैं। जबकि छत्तीसगढ़ में 94.61 लाख में से 67.55 लाख (71.4 प्रतिशत), मध्यप्रदेश में 1.62 करोड़ में से 95 लाख (58.8 प्रतिशत) और पश्चिम बंगाल में 2.86 करोड़ में से 1.39 करोड़ (48.7 प्रतिशत) श्रमिक ही सक्रिय रहे हैं।

वर्ष 2020–21 की केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय की रिपोर्ट के मुताबिक गुजरात में मजदूरों को 188 रुपए प्रतिदिन के हिसाब से ही भुगतान हुआ है, जबकि वहाँ मनरेगा में मजदूरी की दर 224 रुपए प्रतिदिन है, राजस्थान में 220 के स्थान पर औसतन 167, मध्यप्रदेश में 190 रुपए प्रतिदिन के स्थान पर 180, पश्चिम बंगाल में 204 के स्थान पर 193, छत्तीसगढ़ में 190 रुपए प्रतिदिन के स्थान पर 174 रुपए प्रतिदिन की मजदूरी का भुगतान हुआ है। मजदूरी के कम मूल्यांकन के कारण भी लाखों मजदूरों ने मनरेगा से किनारा किया है। कोविड–19 के कारण लगभग 1.5 से 2.0 करोड़ मजदूरों के गाँव वापस लौटने का अनुमान है। बिहार का नागरिक किन हालातों में मुंबई या बंगलुरु पलायन करता होगा? क्या वास्तव में वहाँ ज्यादा मजदूरी मिलती है? ऐसा तो नहीं है। बंगलुरु में भी औसतन 350 से 400 रुपये की मजदूरी मिलती है, जो बिहार के औसत से ज्यादा है, किन्तु जब पलायन पर रहने के खर्चों के आधार पर गणित लगाते हैं, तो पता चलता है कि वास्तव में उन्हें बिहार की दर से 15 से 20 प्रतिशत मजदूरी ही ज्यादा मिलती है। तब सवाल यह है कि मजदूर पलायन क्यों करता है? शोषण, लगातार रोजगार नहीं मिलने और नए विकास की चमक को अपनी आंखों में उतार लेने की अपेक्षा के कारण! सच तो यह भी है कि सरकारों ने मनरेगा के लिए बजट जरूर आवंटित किया है, किन्तु इस पर विश्वास नहीं किया।[2]

मनरेगा कभी भी ग्रामीण परिवारों को 100 दिन का रोजगार देने के करीब नहीं पहुँच पाया। वर्ष 2016–17 से वर्ष 2019–20 के केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय के अध्ययन से पता चला कि इस अवधि में औसतन 7.81 करोड़ सक्रिय जॉब कार्डधारी परिवारों में से केवल 40.7 लाख (5.2 प्रतिशत) को ही 100 दिन का रोजगार मिला। बिहार में 54.12 लाख सक्रिय जॉबकार्ड में से केवल 20 हजार (0.3 प्रतिशत) परिवारों ने, उत्तरप्रदेश में 85.72 लाख सक्रिय जॉबकार्ड्स में से औसतन 70 हजार (0.8 प्रतिशत) परिवारों ने, मध्यप्रदेश में 52.58 लाख सक्रिय जॉबकार्ड धारियों में से केवल 1.1 लाख (2.1 प्रतिशत) परिवारों ने, छत्तीसगढ़ में 33.41 लाख

जॉबकार्ड धारी परिवारों में से 2.9 लाख (8.8 प्रतिशत), कर्नाटक में 33.39 लाख सक्रिय जॉबकार्ड धारियों में से 1.6 लाख (4.7 प्रतिशत) पश्चिम बंगाल में 83.48 लाख कार्ड धारियों में से 6.1 लाख (7.4 प्रतिशत) और राजस्थान में 69.88 लाख जॉबकार्ड धारियों में से 5.2 लाख (7.5 प्रतिशत) परिवारों ने ही यह लक्ष्य हासिल किया। मनरेगा में हर पंचायत की वार्षिक और पंचवर्षीय कार्ययोजना बनाने का प्रावधान है, लेकिन क्रियान्वयन में सही ढंग से नियोजन न होना, एक बड़ी चुनौती रही है। चार साल की रिपोर्ट्स बताती हैं कि मनरेगा में हर साल औसतन 184.1 लाख काम या तो नए शुरू होते हैं या फिर पहले से चले आ रहे होते हैं। हर साल औसतन 39.4 प्रतिशत काम ही पूरे हो रहे हैं, बाकी अगले साल की कार्ययोजना में जुड़ जाते हैं। सबसे खराब स्थिति बिहार की है। वहाँ औसतन 12.8 लाख काम खोले गए, जिनमें से औसतन 2.1 लाख (16.1 प्रतिशत) ही पूरे किये गए। छत्तीसगढ़, झारखंड, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश में 40 प्रतिशत से ज्यादा काम पूरे हुए।[3]

श्रम का पारिश्रमिक :–

वर्ष 2019–20 के बजट पर चर्चा करते हुए भारत के ग्रामीण विकास मंत्री ने कहा था कि हमारी सरकार मनरेगा को हमेशा नहीं चलाये रखना चाहती है। यह योजना गरीबों की मदद के लिए है और हम गरीबी मिटा देंगे ताकि यह योजना बंद की जा सके। इस वक्तव्य से यह स्पष्ट दिखता है कि भारत सरकार यह जानती ही नहीं है कि इस योजना से केवल मजदूरों को काम नहीं मिलता है, इससे ऐसी परिसंपत्तियों का निर्माण भी होता है, जिनसे गाँवों की बदहाली पर रोक लग रही है। इनसे पेयजल, वृक्षारोपण, कृषि, पशुपालन के साथ–साथ आवागमन का ढाँचा भी तैयार हुआ है। वर्ष 2020–21 के शुरूआती 2 महीनों में ही इस तरह के 1.37 करोड़ व्यक्तिगत कामों को मनरेगा में शामिल करके, उन पर काम शुरू किया गया। भारत के सुरक्षित और संपन्न वर्गों को यह तो अहसास होना ही चाहिए कि यहाँ के गाँव और गाँव के मजदूरों के जीवन में भी सकारात्मक बदलाव आए। जो लोग यह मानते हैं कि मनरेगा के लिए किया जाने वाला खर्च मध्यमवर्गीय परिवारों पर बोझ बनता है, उन्हें सरकारी आंकड़ों पर एक दृष्टि डाल लेनी चाहिए।

जब वर्ष 2020–21 के लिए भारत सरकार ने मनरेगा के लिए 61,500 करोड़ रुपये का बजट आवंटित किया, तो वह किसी दान या मुफ्त वितरण के लिए आवंटन नहीं था। इस राशि से 5.5 करोड़ परिवार (7.8 करोड़ मजदूर) मेहनत करके भारत को ठोस विकास अवस्था में ले जाते हैं। इससे उत्पादन बढ़ता और भारत की खाद्य असुरक्षा और गरीबी में कमी आती और महंगाई दर नियंत्रण में रहती।[4]

कोरोना अवधि का दुनियाभर में ऐसा प्रभाव पड़ा कि ये आम लोगों के लिए चर्चा का विषय बना रहा। सोशल मीडिया और तो और भू–राजनीति तक में कोरोना महामारी की चर्चा केंद्र बिन्दु बनी रही। ऐसे में कहा जा सकता है कि साल 2020 को "कोविड–19" के साल के रूप में याद किया जा सकता है। कोरोना प्रभावित शीर्ष चार वैश्विक अर्थव्यवस्थाओं में अमेरिका, ब्राजील और रूस के साथ भारत भी शामिल है। भारत में तेजी से फैले संक्रमण को देखते हुए मार्च के आखिरी हफ्ते में भारत सरकार ने देशव्यापी लॉकडाउन की घोषणा की, जिसने भारत

की अर्थव्यवस्था को बुरी तरह प्रभावित किया। केंद्र सरकार ने अर्थव्यवस्था में जान डालने के लिए 300 बिलियन अमेरिकी डॉलर के रिकवरी पैकेज की घोषणा की है, जिसमें दुनिया की सबसे बड़ी रोजगार योजना महात्मा गांधी ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम के लिए अतिरिक्त 6 बिलियन डॉलर आवंटित किया गया है।

कोविड–19 के जितने भी मामले अब तक सामने आए हैं, उनमें अधिकांश मामले शहरों में दर्ज हुए हैं। देश के जिन जिलों में भारत के 25 बड़े शहर आते हैं, वहाँ देश की कुल आबादी का महज 10 प्रतिशत हिस्सा रहता है। लेकिन, भारत में कोविड–19 के जितने मामले सामने आए हैं, उनमें से 60 प्रतिशत मामले इसी आबादी में मिले हैं। इससे स्पष्ट है कि सतही तौर पर बाजार में पहुँच में व्यवधान और जरूरी चीजों की कीमत में अस्थिरता को छोड़ दें, तो भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर कोविड–19 का प्रभाव नहीं पड़ा। वैसे, किसी भी सूरत में तार्किक तौर पर कृषि, अर्थव्यवस्था का वह सेक्टर है, जो सबसे कम प्रभावित होता है। इसे निराशा से भरी अर्थव्यवस्था में एक चमकदार बिंदु माना जाता है, जो रफ्तार पकड़ने की ओर अग्रसर है और अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने में अग्रणी भूमिका निभाएगा। रबी सीजन में बम्पर पैदावार एक अच्छा संकेत है। लेकिन इसका एक पहलू और है, जो कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। लॉकडाउन के कारण शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों से बड़े पैमाने पर कामगारों का रिवर्स माइग्रेशन हुआ है। इसका तात्कालिक प्रभाव ये होगा कि ग्रामीण क्षेत्रों में कामगारों की संख्या बढ़ेगी। कामगारों की संख्या बढ़ेगी, तो मजदूरी कम मिलेगी और संभवतः मनरेगा के तहत काम की माँग बढ़ेगी, खासकर उन इलाकों में जहाँ गरीबी है। मनरेगा स्थानीय श्रम बाजार में चार तरीके से काम करता है :–

टाइप 1– अनुपयुक्त : जहाँ स्थानीय स्तर पर मजदूरी दर मनरेगा से ज्यादा होती है, वहाँ अध्ययन में पता चला है कि मनरेगा बहुत कारगार नहीं होता है और समुदाय मनरेगा के काम में रुचि नहीं लेता है। ऐसा शहरों से सटे इलाके व औद्योगिक जिलों में देखा जाता है।

टाइप 2– अपर्याप्त : जब मनरेगा मजदूरी दर स्थानीय मजदूरी दर से अधिक होती है, लेकिन मनरेगा लागू करने का स्कोप व स्केल छोटा हो और मजदूरों की कमी हो, तो मनरेगा अपर्याप्त होता है। ऐसा सामान्य तौर पर वहाँ देखा जाता है जहाँ स्थानीय प्रशासन पर्याप्त स्थितियाँ होते हुए भी मनरेगा के काम की माँग पैदा नहीं कर पाते हैं।

टाइप 3– संभावित तौर पर महत्त्वपूर्ण : ऐसे मामले में भी मनरेगा की मजदूरी दर स्थानीय मजदूरी दर के मुकाबले ज्यादा होती है और इससे मनरेगा के काम की माँग भी उत्पन्न होती है। लेकिन, मजबूत माँग होने के बावजूद स्थानीय जनप्रतिनिधियों द्वारा मनरेगा लागू करने में व्यवधान डाला जाता है।

टाइप 4– महत्त्वपूर्ण : जब मनरेगा की मजदूरी दर स्थानीय मजदूरी दर से अधिक हो, स्थानीय प्रशासन अतिसक्रिय होता है और ग्रामीण नेता अपनी क्षमता दिखाते हुए जब मनरेगा का इस्तेमाल अपनी सियासी पूंजी बढ़ाने में करते हैं, तो मजदूरी दर और कार्यक्षेत्र के माहौल में महत्वपूर्ण और सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इससे लंबे समय तक चलने वाली संपत्ति का निर्माण होता है।

टाइप–1 क्षेत्र में रिवर्स माइग्रेशन के चलते श्रमिकों की कमी हो सकती है, जिससे कृषि के क्षेत्र में या तो मशीनरी का इस्तेमाल बढ़ सकता है। ट्रेक्टर की बिक्री के उछाल के कुछ संकेत साफ दिख रहे हैं। दूसरी तरफ, टाइप–4 क्षेत्रों में जहाँ मनरेगा ग्रामीण स्तर पर मजदूरी दर और आजीविका में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है, वहाँ मनरेगा के तहत काम और संपत्ति निर्माण की माँग और बढ़ सकती है। टाइप–2 और टाइप–3 क्षेत्र उसका प्रतिनिधित्व करते हैं, जहाँ मनरेगा को प्रभावशाली तरीके से लागू करने की जरूरत है ताकि मजदूरों को उनके घरों के पास काम का अवसर मिले। सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी पर काम सुनिश्चित करने वाले मनरेगा की विशेषता है कि ये "स्वलक्षित" है। हालांकि, कुछ मामलों में ग्रामीण स्तर पर इसका पालन नहीं होता है। मनरेगा मुख्य तौर पर ग्राम पंचायत और स्थानीय प्रखंड व जिला प्रशासन की समर्थता पर निर्भर करता है कि वे निर्बाध तरीके से काम करते हुए वार्षिक श्रम बजट और संपत्तियों के निर्माण की योजना तैयार करें। प्रायः ये देखा जाता है कि जहाँ मनरेगा के काम की जरूरत सबसे ज्यादा होती है वहाँ ग्राम पंचायत व स्थानीय प्रशासन कमजोर होते हैं। अध्ययन में पता चला है कि गरीब राज्यों में भी मनरेगा के काम की माँग पूरी नहीं हो पाती है।

मनरेगा स्कीम लगभग डेढ़ दशक से चल रही है। ऐसे में ये आकलन करने का सही समय है कि इस स्कीम ने ग्रामीण श्रम बाजार और कृषि व्यवस्था में क्या बदलाव किए हैं। दस्तावेज में दर्ज है कि मनरेगा से जितनी संपत्तियाँ तैयार होती हैं, उनका दो तिहाई हिस्सा "जल संपत्तियाँ" होती हैं। मनरेगा इस मायने में भी महत्वपूर्ण है कि इसमें विकलांगता से प्रभावित लोगों को भी कोई न कोई काम देने का प्रावधान किया गया है। संभवतः मनरेगा भारत में विकलांगता से प्रभावित सबसे अधिक लोगों को रोजगार देने वाला कार्यक्रम भी है। इस योजना में पिछले चार वर्षों में हर साल औसतन 4.67 लाख विकलांग लोगों को भी रोजगार मिला। औसतन 250 करोड़ मानव दिवस का रोजगार मनरेगा के तहत सृजित किया गया। इसमें से हर साल 50 करोड़ दिनों का रोजगार आदिवासी समुदाय के और 42 करोड़ दिवस रोजगार अनुसूचित जाति के समुदाय से जुड़े लोगों को मिला। महिलाओं के जीवन को भी यही कार्यक्रम व्यवस्थागत हक उपलब्ध करवाता है। महिलाओं को लगभग 56 प्रतिशत अवसर मिलता है।[5]

मनरेगा के 2019–20 के बजट में 40,000 करोड़ रुपए जोड़ने के बाद, एक लाख करोड़ की राशि बनती है। कई राज्यों में लाखों की संख्या में मजदूर, प्रवासी मजदूर, एवं स्थानीय लोग रोजगार पाने के लिए मनरेगा कार्यस्थलों पर जा रहे हैं। इस कार्यक्रम में वर्तमान में वित्तीय मजबूती होने की वजह से बहुत सारे रोजगार सृजित करने के रिकॉर्ड बन रहे हैं। विगत वर्षों में राजस्थान में मजदूरों की संख्या अधिकतम 32 लाख रही है। यह बढ़कर 52 लाख हो गई है। उत्तर प्रदेश में भी 50 लाख से ज्यादा मजदूर मनरेगा के तहत रोजगार माँग रहे हैं। सम्पूर्ण भारत में इस प्रकार मजदूरों की संख्या 3.19 करोड़ से बढ़कर 4.89 करोड़ पहुँच चुकी है। मनरेगा को ज्यादा से ज्यादा लोगों के लिए एक मजबूत सहारा और आधार बनाना है तो रोजगार गारंटी में मजदूरी के दिन बढ़ाने पड़ेंगे।

इस योजना में यह प्रावधान है कि आपदा की स्थिति में 50 दिन प्रति परिवार का रोजगार बढ़ाया जा सकता है। इस साल यह हक 200 दिन कर देना चाहिए। मनरेगा में पूरी पारदर्शिता हो, कार्य के क्रियान्वयन में ग्रामीणों की हिस्सेदारी हो, साथ ही निगरानी और अंकेक्षण में भी

जन भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। कार्य चयन लोगों द्वारा होना चाहिए। स्पष्ट है कि रोजगार गारंटी में सामूहिक हित के काम सबसे प्रमुख हैं लेकिन, कुछ राज्यों में सामूहिक या सरकारी जमीन है और कई राज्यों में इतनी सामूहिक या पड़त भूमि नहीं है। जहाँ सामूहिक काम के लिए जमीन की कमी है वहाँ दिन बढ़ाने के साथ–साथ, सामूहिक हित की सेवाओं की तरफ भी रोजगार गारंटी के काम को मोड़ना पड़ेगा। उत्पादन और सामूहिक हित को बढ़ाने के लिए जल, जंगल, जमीन तथा खेती–किसानी की तरफ ध्यान देना, पर्यावरण की रक्षा करना और मानव संसाधनों को सृजित करने के काम के बारे में भी सोचा जा सकता है।[6]

सुझाव :–

सबसे पहले रोजगार के अधिकार के दिनों की संख्या 100 से बढ़ाकर 150 दिन होनी चाहिए, ताकि निम्न आय वर्ग के 7.81 करोड़ परिवारों के सामने अति गरीब हो जाने की स्थिति उत्पन्न न हो जाए। इसके लिए 3.38 लाख करोड़ रुपए का प्रावधान करना होगा, जिसमें से 2.37 लाख करोड़ रुपये का व्यय केवल मजदूरी पर किया जाना होगा। मध्यप्रदेश को 22,769, बिहार को 23,426, उत्तरप्रदेश को 37,105, पश्चिम बंगाल को 36,135 और राजस्थान को 30,248 करोड़ रुपए की जरूरत होगी। दूसरा, यदि औसत मजदूरी की दर 202 रुपए से बढ़ाकर 300 रुपए की जाती है तो भारत सरकार को मजदूरी के भुगतान के लिए 3.51 लाख करोड़ रुपए आवंटित करने होंगे।

शहरी श्रमिकों को रोजगार का कानूनी अधिकार प्रदान करने से शहरी अर्थव्यवस्था में कम आमदनी पर काम करने वाले श्रमिकों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। इतना ही नहीं, ये शहरी बुनियादी ढांचे और सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार करेगा। इस तरह का कार्यक्रम न केवल कोविड–19 के कारण शहरी अर्थव्यवस्था को पहुँचे झटके से उबरने के उपाय के रूप में काम करेगा, बल्कि जलवायु परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाले आर्थिक और पारिस्थितिक नुकसान से उबरने में काफी मदद करेगा। मनरेगा का ये शहरी संस्करण उन कार्यों की प्रकृति को व्यापक बना सकता है, जो रोजगार गारंटी के माध्यम से किए जा सकते हैं। खासकर, "ग्रीन जॉब्स" जैसे सामूहिक जल निकायों का निर्माण और मरम्मत, शहरी मैदान और आर्द्रभूमि का कायाकल्प, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन, वनस्पति और पेड़ लगाना, सार्वजनिक पार्कों, खेल के मैदानों और फुटपाथों का निर्माण करना, आश्रय स्थलों, संगरोध सुविधाओं जैसे सामान्य बुनियादी ढांचे का निर्माण करना, किचन गार्डन बनाना, सर्वेक्षण करना आदि।[7]

आर्थिक संकट की जो गंभीरता कोविड–19 की वजह से फैली है, उसने अर्थव्यवस्था के हर क्षेत्र में विनाशकारी प्रभाव डाला है। सरकार ने जो राहत की घोषणा की है, उससे श्रमिकों को कोई खास फायदा नहीं होने जा रहा है। हमें इस समय का उपयोग सिर्फ एक राहत पैकेज के लिए नहीं करना चाहिए, बल्कि अपने देश में श्रम और श्रमिक अधिकारों को मौलिक स्तर पर बदलना चाहिए। यही एकमात्र तरीका है, जिससे दोबारा बनने वाली अर्थव्यवस्था में श्रमिक अपनी हिस्सेदारी तलाश सकेंगे और यह सुनिश्चित कर सकेंगे कि आगे उनके साथ ऐसी असमानता और अशिष्टता भरा व्यवहार न हो। सरकार द्वारा शहरी रोजगार गारंटी अधिनियम पारित करने के लिए मजदूर यूनियनों, अभियानों और नागरिक संगठनों को साथ मिलकर प्रयास

करने की आवश्यकता है। यदि इस वक्त हम श्रमिकों को इस देश के असली देशभक्त के रूप में पहचान सकें और देश के विकास में उनके योगदान को हम पहचान कर उनका हिस्सा उन्हें दे सकें तो इतिहास में ये बातें स्वर्णाक्षरों में लिखी जाएंगी।[8]

ग्रामीण भारत को सशक्त करने में मनरेगा की भूमिका :–

केंद्र सरकार ने महात्मा गांधी नरेगा का 2022–23 का बजट 73,000 करोड़ रुपए रखा है। वहीं वर्ष 2013–14 में केंद्र सरकार द्वारा योजना के लिए 33,000 करोड़ रुपए ही प्रदान किए गए थे। हालांकि इसमें अतिरिक्त फंड की आवश्यकता होने पर वित्त मंत्रालय से फंड जारी किए जाने का अनुरोध किया जा सकता है। इससे स्पष्ट है कि वर्तमान में पीएम मोदी के नेतृत्व में भी महात्मा गांधी नरेगा अधिनियम ग्रामीण कामगारों को अधिक रोजगार मुहैया कराने में सक्षम रहा है।

2021–22 में इसके द्वारा लाभार्थियों द्वारा की गई माँग के अनुसार 310.01 करोड़ से अधिक व्यक्ति–दिवसों का स जन किया जा चुका है। इस योजना के अंतर्गत 30.12 करोड़ कामगार कार्य कर रहे हैं। वहीं 15.81 करोड़ को जॉब कार्ड जारी किए जा चुके हैं। वित्तीय वर्ष 2006–07 से 2013–14 में 1660 करोड़ मानव श्रम दिवस सृजित हुए। वहीं वित्तीय वर्ष 2014–15 से 2021–22 के बीच 2,092 करोड़ मानव श्रम दिवस सृजित हुए। केवल इतना ही नहीं 2014 से अब तक कुल 592.32 लाख कार्य भी पूरे हुए हैं और 6.13 करोड़ परिसंपत्तियाँ भी सृजित की जा चुकी हैं।

2021–22 में 15.3 करोड़ सक्रिय कामगारों ने महात्मा गांधी नरेगा के अंतर्गत कार्य किया। इससे उन्हें इस योजना का लाभ मिला और रोजगार के साथ अपने गाँव में ही आजीविका कमाने का अवसर प्राप्त हुआ। बेरोजगारी भत्ते का प्रावधान उस लाभार्थी के लिए लागू है, जिसने काम की माँग की है और माँग की तारीख से 15 दिनों के भीतर काम की पेशकश नहीं की जा सकती है। जहाँ लाभार्थी ने चालू वित्तीय वर्ष में 100 दिन पहले ही पूरे कर लिए हैं या लाभार्थी जिसने माँग की है लेकिन काम की माँग की तारीख से 15 दिन पहले उसकी मृत्यु हो गई है, तो वह बेरोजगारी भत्ते के लिए पात्र नहीं होगा।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम में वर्ष 2021–22 के दौरान डीबीटी लेनदेन 46.02 करोड़ रुपए रहा है। वहीं इस योजना से लाभान्वित परिवारों की संख्या कुल 6.84 करोड़ रही। यह तमाम आंकड़े दर्शाते हैं कि केंद्र सरकार गाँव में लोगों को 100 दिन का गारंटीशुदा रोजगार किस प्रकार मुहैया कराती है। कोविड संकट के दौरान जब बहुत से लोगों को शहरों से काम छोड़कर अपने गाँव वापस लौटना पड़ा था तो ऐसे ग्रामीणों की मदद के लिए भी केंद्र सरकार ने जिम्मा संभाला था। उस समय केंद्र सरकार ने इन ग्रामीणों को उनके गाँव में या गाँव के नजदीक ही हो रहे सरकारी निर्माण कार्यों में रोजगार उपलब्ध कराया था। इतना ही नहीं, केंद्र सरकार ने महात्मा गांधी नरेगा के माध्यम से देश में महिलाओं के सशक्तिकरण में भी बड़ी भूमिका अदा की है। अब जब लोगों को अपने ही गाँवों में कार्य मिल रहा है तो इससे ग्रामीणों का शहरों की ओर होने वाला पलायन घट रहा है।[9]

मनरेगा में मांगने पर भी काम न पाने वाले राज्यों की स्थिति :–

देश के ग्रामीण इलाकों में रोजगार की सबसे बड़ी केंद्रीय योजना मनरेगा में मांगने पर भी 1.89 करोड़ लोगों को काम नहीं मिल पाया है। वित्त वर्ष 2021–22 (जनवरी 2022 तक) में देशभर में कुल 11.6 करोड़ लोगों ने मनरेगा में रजिस्ट्रेशन कराया था। इनमें से 9.7 करोड़ को काम मिला, जबकि 16.3 प्रतिशत को नहीं मिला। काम नहीं पाने वालों का यह औसत पिछले चार वर्षों में सर्वाधिक है। केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार, मांगने के बावजूद काम नहीं पाने वालों का सबसे ऊंचा औसत गुजरात, बिहार और मध्यप्रदेश में है। गुजरात में पिछले साल 25.45 लाख लोगों ने काम मांगा था। इनमें से 8.84 लाख (34.7 प्रतिशत) को काम नहीं मिला। केंद्र सरकार की मनरेगा स्कीम ग्रामीण भारत में रोजगार की सबसे मजबूत कड़ी रही है। कोरोनाकाल के दौरान लोग पलायन कर गांवों में लौटे थे। इसीलिए, 2020 में सबसे ज्यादा 13.3 करोड़ लोगों ने मनरेगा में रजिस्ट्रेशन कराया था।

राज्य	काम मांगा	काम नहीं मिला	प्रतिशत
गुजरात	25.45 लाख	8.84 लाख	34.7%
बिहार	52.35 लाख	13.41 लाख	25.6%
मध्यप्रदेश	1.14 करोड़	25.78 लाख	22.7%
हरियाणा	6.52 लाख	1.34 लख	20.7%
छत्तीसगढ़	61.39 लाख	12.22 लाख	19.9%
महाराष्ट्र	35.64 लाख	6.17 लाख	17.3%
झारखंड	34.68 लाख	5.97 लाख	17.2%
उत्तर प्रदेश	1.09 करोड़	17.72 लाख	16.2%
राजस्थान	1.07 करोड़	15.45 लाख	14.3%
पंजाब	12.16 लाख	1.70 लाख	14.0%
प.बंगाल	1.17 करोड़	12.57 लाख	10.8%
हिमाचल	9.80 लाख	98,518	10.0%

2021 में 11.6 करोड़ लोगों ने रजिस्ट्रेशन कराया, यानी 2 करोड़ लोग वापस ाहरों में काम के लिए गए होंगे। लेकिन, अहम बात यह है कि 2021 में भी 1.89 करोड़ लोगों को 193 रु. से लेकर 315 रु. तक की मजदूरी पर भी गांवों में काम नहीं मिल पाया। यह स्थिति तब है, जब केंद्र सरकार ने मनरेगा के तहत 98 हजार करोड़ रु. आवंटित किए थे।

देश का हाल	काम मांगा	काम नहीं मिला	प्रतिशत
2021–22	11.6 करोड़	1.89 करोड़	16.3 %
2020–21	13.3 करोड़	2.14 करोड़	16.0 %
2019–20	9.3 करोड़	1.45 करोड़	15.6 %
2018–19	9.1 करोड़	1.34 करोड़	14.8 %

(ये आंकड़े केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय के हैं।)

अब वित्त वर्ष 2022–23 के लिए यह राशि घटाकर 73 हजार करोड़ रूपये कर दी गई है। यानी 25 प्रतिशत कम। मौजूदा हालात में गांवों में बेरोजगारी की यह स्थिति बेहद गंभीर है। ऐसे में अगले साल के लिए जब बजट ही घटा दिया गया है। जरा साचिए, फिर स्थिति आगे और कितनी खतरनाक होगी। हालांकि, सरकार चाहे तो साल के बीच में भी इस मद में बजट बढ़ा सकती है।[10]

चालू वित्तीय वर्ष 2022–23 में केन्द्र सरकार ने एक अप्रैल से नई मजदूरी की दर लागू कर दी है। इस माह से पंचायतों में मनरेगा के तहत निर्माणाधीन योजनाओं में श्रमिकों को 204 रुपए की दर से मजदूरी मिलेगी। केन्द्र सरकार ने मनरेगा के श्रमिकों की मजदूरी 11 रुपए बढ़ा दी है। बीते वित्तीय वर्ष 2021–22 में मनरेगा में श्रमिकों को मजदूरी 193 रुपए से बढ़ाकर 204 रुपए कर दिया है। बढ़ी मजदूरी एक अप्रैल से लागू हो गई है। इसका फायदा जिले के 1.77 लाख जॉबकार्ड धारियों को होगा। वर्तमान समय में सक्रिय जॉबकार्ड धारी परिवारों को रोजगार के लिए पंचायतों में काम चालू कर दिया गया है। जल अभिषेक अभियान के तहत स्टाप डैम, तालाब आदि के निर्माण में श्रमिकों को मजदूरी मनरेगा से दी जाएगी। मनरेगा में पिछले वर्षों मजदूरी की स्थिति इस प्रकार है : 2018–19 में 174 रू., 2019–20 में 176 रू., 2020–21 में 190 रू., 2021–22 में 193 रू. तथा 2022–23 में 204 रू. है।[11]

निष्कर्षतः

नरेगा से जहाँ ग्रामीण बेरोजगारों को रोजगार मिला है वहीं पैसा हाथ में आने से गाँवों के लोगों की क्रयशक्ति भी बढ़ी है जिससे ग्रामीण इलाकों में विभिन्न उत्पादों की खपत को बढ़ावा मिला है। यही नहीं नरेगा के तहत गाँवों में ऐसी परियोजनाएँ चलाई जा रही हैं जिससे ग्रामीणों को घर के पास ही रोजगार तो मिल ही रहा है, साथ ही गाँवों का विकास भी हो रहा है।

❐

सन्दर्भ –

1. *कौशिक, जगबीर आलेख ''नरेगा : गरीबों का सुरक्षा कवच'', कुरूक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, दिसम्बर, 2009, पृ. 4*
2. *रोजगार सूत्र, महात्मा गांधी रोजगार गारंटी एक्ट, ग्रामीण विकास मंत्रालय,भारत सरकार, पृ. 2*
3. *मनरेगा रिपोर्ट 2019–2020, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।*
4. *मनरेगा रिपोर्ट 2021–2022, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।*
5. *कोरोना काल संकट में मनरेगा बना सहारा, जागरण, 28 अगस्त, 2021*
6. *मनरेगा रिपोर्ट 2021–2022, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।*
7. *अरोड़ा, किरण ''महात्मा गांधी नेशनल रूरल इम्प्लॉयमेंट गारंटी एक्ट–एन ओवरव्यू, ईश्यू एण्ड चैलेंज, ग्लोबल जर्नल ऑफ मल्टीडिसीप्लनरी स्टडीज, 2015, 4.4:118–122*
8. *जैन, सचिन कुमार आलेख ''मनरेगा : नए ग्रामीण भारत की रीढ़'', डाउन टू अर्थ, 3 अगस्त, 2020*
9. *मनरेगा : ग्रामीण भारत हो रहा है और अधिक सशक्त, नवभारत टाइम्स, 15 फरवरी, 2022*
10. *कुमार, पवन आलेख ''मनरेगा में मांगने पर भी काम न पाने वाले गुजरात, बिहार और मप्र में सबसे ज्यादा'' दैनिक भास्कर, 18 फरवरी, 2022*
11. *नरेगा में इस बार 80 लाख का लेबर बजट, 1.77 लाख श्रमिकों को मिलेगा लाभांश, राजस्थान पत्रिका, 16 अप्रैल, 2022*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 124–131

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Shifting Paradigm of India's Foreign Policy Nehru to Modi

Rahul Shrivastava

I.C.S.S.R. Doctoral Fellow, Department of Political Science,
Banaras Hindu University, Varanasi.
Email – rahulsri@bhu.ac.in Cell: +91 9039633650

Abstract

The foreign relation of any country has its evolving nature and this not only changes its foreign policy but also reflects dynamism in the whole policy-making and its functioning, sometimes even for the future generations, when things between two states become so complex that it affects their domestic as well as foreign policy for decades. India's foreign policy has its dynamic nature, the early days were not very comfortable for India but Prime Minister Nehru's very few successors were interested in making India's position strong on the world platform and a few times Indian Prime Ministers also didn't get proper time in the office. The position of India changed very rapidly since Narendra Modi became the Prime Minister of India in 2014. His proactive foreign policy changed the whole discourse of Indian foreign relations. India established its diplomatic relation with many states and also upgraded its bilateral relation with many states which would have been done a long time before. Narendra Modi became the first Indian Prime Minister ever to make his official visit to Israel, he also became the first PM in 60 years after Nehru (1956) to stopover in Ireland, first time in 42 years to visit Canada after Indira Gandhi (1973) and many more states that have not been visited for more than three decades including some important one like UAE and Seychelles etc.

Prime Minister has not only signed commercial treaties and economic investments in the world order but has also made a strong bond with powerful leaders of the world, including President Putin of Russia, Prime Minister Netanyahu of Israel, President Macron of France, Prime Minister Johnson of United Kingdom, Sheikhs of Arab etc. This dynamism and evolution of foreign policy by Prime Minister Modi has also been referred to as the Modi Doctrine.[1]

Keywords : Nehru; Modi; Prime Minister; Foreign Policy; Strategic Partner; Introduction

With India's independence on 15th August 1947, Pt. Nehru became the central figure of India's foreign policy making. Nehru made non-alignment the cornerstone of India's foreign policy.[2] He adopted non-alignment for various reasons, which was probably the need of the hour. Then India's geographical and economic condition served as the material reasons for favouring the policy of non-alignment. The world was divided into two power blocks. Nehru easily realizes that if India joins any of these two blocks, it would bring long-term hardship itself. It was indeed crucial for India to choose the path of non-alignment.[3]

Although, to protect and strengthen its post-independent economic condition India seriously needed the cooperation of both the big powers, the U.S.A. and U.S.S.R. and their satellites the developed countries of Europe. India's access to one bloc would not only make the members of the other bloc hostile to India's interest but also might jeopardize its very independence. For this economic reason, India extended its trade relation with the other countries of the world irrespective of their ideological difference.

India always remains against imperialism because she had a bitter colonial experience. This is among the reasons India remained non-aligned. Nehru believed that both the ideologies i.e. capitalism and communism have some good qualities and merits and as such it would be unjust to accept one and discard the other. Nehru wanted to bring solidarity among the people of India who had different religious faith, language, culture and lifestyle. It served the purpose of national integration. Nehru was against all military alliances.[4] Nehru said we are in no camp and no military alliance. The only camp we like is the camp of peace.

With China Nehru works on the ideology of Panchashila' which declared that it would be the duty of the Asian states to extend mutual respect for the geographical unity and sovereignty of the other state not to interfere in the internal affairs of the other state, to respect the equality of all, to extend mutual advantages and to promote peaceful co-existence. Nehru's policy of non-alignment received much appreciation from the Afro-Asian and Latin-American countries. Soon it took the shape of a movement—the non-aligned movement (NAM) which even gain respect from two powerful blocks. Nehru, Tito and Naser headed the movement, which aimed at democratizing international relations and establishing equality based on state order of high standard.[5] Nehru established a cordial relationship with USSR and the West European democratic countries and joined the Commonwealth.[6] However, during the fag end of his Prime Ministership in 1962, China attacked India.

Followers of the common pattern

Prime Minister Nehru was chief architect of India's foreign policy, even after his death many Prime Ministers who assumed the office followed the same idea of foreign relation that was established by him. Including Lal Bahadur Shastri, despite of a successful war against Pakistan, Shashtri followed Nehru's foreign policy for the whole time. Later when Indira Gandhi assumed the Premiership she did many things during her tenure in office, some of them were sufficient enough to earn

unforgettable position in the history of Indian democracy but even she never broke the pattern of Nehruvian ideas. Indira Gandhi gave stressed to the preservation of National interest. She made India more self-reliant and brought India into her atomic age.[7] She helped Bangladesh to win her freedom in 1971, which broke Pakistan into two parts. It was a historic win for India. At the same time, it tried to improve India's relations with China, Pakistan and the Arab countries.[8]

After the assassination of Mrs Gandhi, then came an era when the office of PrimeMinister was the most unstable office in India, country saw many unexpected leaders in the Prime Minister's office, several governments under Morarji Desai, Charan Singh, Rajiv Gandhi, V. P. Singh, Chandrashekhar, H. D. Devegowda, I.K. Gujral and Dr. Manmohan Singh many leader with dynamics and innovative minds came to power but most of them followed the same pattern that was established as the stepping-stone, many times congress even opposed leaders taking decision against the ideas that Nehru didn't believed, even if the Prime Minister belonged to their own party, which withheld many Prime Ministers to take independent decisions.

Breaking the Pattern

P. V. Narsimha Rao was the first leader to make decision out of the INC ideological sphere. He did worked well as the foreign minister but was always bounded by the decision of the Prime Minister's office. When Narasimha Rao became Indian Prime Minister he made some bold and independent decision which changed the whole discourse of India's foreign policy. Prime Minister Rao established India's diplomatic relation with Israel in 1992. It took forty years for any Indian Prime Minister to establish full diplomatic relations since it recognised Israel in 1950.[9] Prime Minister Rao focused more on neighbouring countries which is popularly known as the "Look East" policy.[10] Liberalization of the economy in the 1990s broadens the base of India's relationship with other countries. Similarly, Atal Bihari Vajpayee, kept some of the primary objectives of Indian Foreign policy unaltered, but he made some historic decisions which changed India's foreign relation with many countries. The Nuclear testing of Pokhran during Vajpayee government was also criticised with serious allegation of global safety[11] and security but the Vajpayee government made it crystal clear that every decision that has been taken in India's national interest will not be negotiated, the only assurance he gave was the policy 'no first use of nuclear capablity'.[12]

The present government under the leadership of Narendra Modi is focusing on improving India's relationship with its neighbouring countries and also with the Europe and west. Modi visited Bhutan, Brazil, Nepal, Russia, Japan, USA, Myanmar, Australia, Fiji, Nepal, Seychelles, Mauritius, Sri Lanka, Singapore, France, Germany, Canada, China, Mongolia, South Korea and so on.[13] Several MOUs have been signed between India and these foreign countries. It shows how seriously the government of India takes an interest in world affairs.

Modi Doctrine: Power shift and Diplomacy

India projected itself as soft power long before even when the concept was defined by Political pundits. In the practice of diplomacy, India's soft power strategy drew world attention. Under the leadership of Narendra Modi, the passionate use of India's soft-power assets not only created media buzz all-round the world but also drafted a new Indian image before the international community.

India's soft power was recognized in many parts of the world, where people interact with India's arts and culture. In the past decade, India put a strong hold on its global stand and systematic use of soft power has been seen.

Several initiatives have been launched to push India to the forefront of the international community, including the creation in 2006 of a public diplomacy division within the Ministry of External Affairs, the worldwide expansion of the Indian Council for Cultural Relations (ICCR), the Ministry of Tourisms' ?Incredible India" campaign, and the work of the Ministry for Overseas Indians.

Besides cultural assets, strategic decisions were taken to support many countries. The promotion of business and trade, together with the creation of employment opportunities, are key components of Modi's diplomacy.

Soft-power diplomacy is not the only tool in the government's arsenal for improving the country's image. Other serious campaigns—for instance, to combat corruption and crime—are also enhancing the outsider's view of what India is, and what it can be as a leader in global politics. Soft power works on persuasion, aiming at furthering a country's attractiveness. It is based on three main categories of a country's resources —culture, political values, and Foreign policies. Soft power is mostly based on intangibles. It is the ability to modify other states' preferences.

Now a day there is a tradition of the combination of soft power and hard power, together called "smart power". Since Modi became prime minister in May 2014, India has employed such a blend, but with a strong focus on soft power. As far as diplomacy efforts are concerned, Prime Minister Modi has met several foreign leaders and visited several countries. These meetings have helped to increase India's visibility abroad. The "personal relationships that Modi has made and maintained with world leaders have not only strengthened ties between India and other countries but have also raised India's image. Political pundits of foreign affairs say soft power has the potential "to multiply the efforts of Indian diplomacy, and this should be pursued as an important objective". Modi's plans to revive national pride with the ancient values that India holds and enhance the country's hard power by using its soft-power assets.

The promotion of the country's soft power is a means to meet foreign policy objectives. The rise of Prime Minister Narendra Modi, as a populist leader, has redefined Indian foreign policy through the use of soft power in a regional and global context. The promotion of India's soft power (for example, of Bollywood films, cultural programmes and yoga)[14] is aimed at meeting the country's foreign policy

objectives and showing its willingness to play a bigger role in global politics. India's soft power is nothing less than a geopolitical tool.

While previous Indian governments understood and recognized the value of soft power to further India's foreign policy goals, attempts have been largely ad hoc. It was noted for the first time, that a more coherent effort is underway to raise India's image and brand value in foreign countries. "Under Prime Minister Modi, India is taking a strategic approach towards using its soft-power resources to enhance the nation's image abroad.

Prime Minister Modi is seen as an excellent communicator, not only in the use of technology but also in his style. When Modi addresses the Indian Diaspora community to project soft power around the world". Since the Indian community, usually have strong stakes in Societies abroad. However, India still needs greater use of Diaspora bonds than it has ever done so before.

COVID-19 which is the largest pandemic crisis of the century, not only affected the lives of billions of people but also created a ripple effect on the economy of almost every country in the world. Even American President Trump described the COVID-19 outbreak as worse than Pearl Harbour and the 9/11 attack.[15] Prime Minister Modi's Vaccine diplomacy and health aid to every friendly state and ally showed another successful picture of the Modi administration. The Modi administration not only contained the crisis domestically and administered more than 2.1 Billions vaccinations which is also the largest vaccination drive in the world but also helped other states in the world in need.

There have been several occasions when India's position on the world platform was noticed as important whether it is the Afghanistan crisis or the Russia-Ukraine war. Some countries expected Prime Minister Modi to initiate the Peace Process, and many wanted Modi to go against Putin but India took a neutral stand without going against Russia. Unlike West India and Russia has never abandoned its ally, this is also one of the reasons why India chose to stay neutral.[16]

The special partnerships : Russia and Israel

Russia

Russia has been one of the oldest and most trustworthy friends of India since USSR. Russia has been India's strategic partnership with the military, economic and diplomatic ties. After the dissolution of the Soviet Union, Russia maintained a close relationship with India which is why both states share a bond of the special relationship. Both India and Russia term this partnership a "special and privileged strategic partnership"[17] I India-Russia relationship was mostly based on five major components: politics, defence, civil nuclear energy, anti-terrorism cooperation and space.[18] However both countries aim to reach 30 Billion USD in bilateral trade in the next two years by 2025.[19] Russia is the largest supplier of defence equipment to India, approximately 68% of Indian military hardware imports come from Russia.

Unlike many western states, India and Russia have never abandoned each other in a situation of conflict or crisis. Even when India was sanctioned by the United States of America for its Nuclear testing in Pokharan, Russia was among few countries which sided with India. The Levada Centre, a Moscow-based non-governmental think tank identifies India among the top five friends of Russia along with Belarus, China, Kazakhstan and Syria.[20]

When Narendra Modi became the Indian Prime Minister it was said that the Indian foreign policy has become more proactive than before but India has shifted its policy more to America than Russia, but on many occasion both Russia and India has proved that it has never abandoned its traditional partners for other countries. Even Prime Minister Modi said in 2014, "Even a child in India if asked to say who India's best friend is, will reply it is Russia because Russia has been with India in times of crisis" (PTI, 2014)[21]

India has made several changes in its foreign policy but with a realist approach, India has balanced its traditional ties along with the new ones.

Israel

India has been primarily one of the millennia-old trade and cultural partners. It is also known, that Jews have lived in India for thousands of years and have never been discriminated against and historically lived without any instance of anti-Semitism, this fact may among the reasons for strong sentiments towards India among Israelis.[22]

India's position on formation of the State of Israel was very much affected, among which India's own partition on the basis of religion was included, as well as India's pro-Arab and Non-Alignment Policy was among the prominent ones. India voted against the partitioning of Palestine Plan of 1947 and also went against the creation and admission of Israel to United Nations in 1949. Where few Indian proponents of Hindu Nationalism like- Vinayak Damodar Savarkar and M.S.Golwalkar supported Israel's creation on both moral and political ground they believed Palestine is the natural territory of Jewish peoples, essential to their aspiration of nationhood and also condemned India's vote at U.N. against Israel.[23]

Later, on 17 September 1950 India officially recognised the State of Israel, Former Prime Minister Nehru Said stating Israel's recognition "We would have recognised Israel long ago because Israel is a fact. We refrained because of our desire not to offend the sentiments of our friends in the Arab countries." However Nehru didn't wanted full diplomatic relation with Israel and it wasn't established till 1990s, India's relation till then remained informal in nature. India formally established its relations with Israel when it opened an embassy in Tel Aviv in 1992. Ties between the two flourished since then when both shared Strategic interest and security threats. In 1997, Israeli President Weizman negotiated the first weapon deal between the two Nations, involving the Barak-1 vertically-launched surface-to-air (SAM) missiles, having the ability to intercept anti-ship missiles such as Harpoons. From 200 million US $ to 4.06 billion US $ turnover between Israel-India has a long way journey.[24]

Which has a rapid growth after Narendra Modi came in to power. Even Modi became first ever Indian Prime Minister to visit Israel.

Conclusion

Prime Minister Narendra Modi has a strategy to promote India's soft power—a strategy which has certainly brought new energy to the conduct of the country's foreign policy. PM Modi is promoting the country as a strong economic partner by highlighting India's soft power, especially its values and culture. He has made diplomatic visits to several countries in the last few years.

The use of soft power by Modi had a limited effect in terms of nurturing stronger relations with neighbour countries. India is still having difficulties in changing its neighbour's behaviours by using soft power. Neighbouring countries with weak democracies and frequent political transitions are obstacles in the path of a healthy relationship. On the other hand, States like Israel will help India to develop strategies and also this will decrease India's dependency on China.

Following the contemporary world order there may be sometimes when India will need some ally which will support India in the situation of crisis and India has to take a stand and support these states when they get into one. When Donald Trump said that American troops will be withdrawn from Afghanistan it created chaos inside Afghanistan, as some studies show Biden might be the weakest US President in taking military decisions, which might give the upper hand to the Taliban in the region. As a strategic interest, India will not be in a position to lose Afghanistan. This will also affect India's foreign policy where decision-making and rational agendas with National interest will play the greatest part, If Narendra Modi survives this crisis of world order, it will him the biggest recognition any Indian Prime Minister has ever gotten in the world.

❐

References :

1. *Pant, Harsh V. (2016)Indian Foreign Policy: An overview; Manchester University Press.*
2. *Dutt, V. P. (2011) India's Foreign Policy Since Independence. National Book Trust, New Delhi*
3. *Ganguly, Sumit (2011) India's Foreign Policy : Retrospect and Prospect. Oxford, New Delhi*
4. *Pant, Harsh V. (2016)Indian Foreign Policy: An overview; Manchester University Press.*
5. *http://www.namegypt.org/Relevant%20Documents/01st%20Summit%20of%20the%20Non-Aligned%20Movement%20-%20Final%20Document%20%28Belgrade_Declaration%29.pdf*
6. *De Smith, S. A. (1953) The Royal Style and Titles, The International and Comparative Law Quarterly , Apr., 1953, Vol. 2, No. 2 (Apr., 1953)*
7. *https://www.rediff.com/news/slide-show/slide-show-1-an-interview-with-k-subrahmanyam/20110210.htm*
8. *Kapur, Ashok (2006). India: From Regional to World Power. Routledge, London.*
9. *Kumaraswamy, P.R. (2010) India's Israel Policy. Columbia University Press, New York.*
10. *Haokip, Thongkholal, "India's Look East Policy: Its Evolution and Approach," South Asian Survey, Vol. 18, No. 2 (September 2011)*
11. *https://www.thehindu.com/todays-paper/tp-features/tp-sundaymagazine/east-meets-far-east/article6365598.ece*

12. *Sundaram, Kumar & Ramana, M. V. (2018) India and the Policy of No First Use of Nuclear Weapons, Journal for Peace and Nuclear Disarmament, 1:1, 152-168*
13. *https://www.pmindia.gov.in/en/details-of-foreigndomestic-visits/*
14. *https://www.aljazeera.com/news/2019/6/21/how-yoga-diplomacy-helps-india-assert-its-rising-global-influence*
15. *https://www.bbc.com/news/world-us-canada-52568405*
16. *https://www.aljazeera.com/opinions/2022/3/14/why-is-istandwithputin-trending-in*
17. *https://mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/Russia_-DEC_2012.pdf*
18. *https://www.rbth.com/articles/2012/11/28/top_indian_diplomat_explains_russias_importance_to_india_19391*
19. *https://www.financialexpress.com/economy/russian-indian-funds-to-invest-1-billion-in-infrastructure/18126/*
20. *https://timesofindia.indiatimes.com/india/delhi-still-among-top-five-friends-of-moscow-says-poll-by-russian-think-tank/articleshow/64768148.cms*
21. *https://journals.sagepub.com/doi/pdf/10.1177/0020881718758810*
22. *Kumaraswamy, P.R. (2010) India's Israel Policy. Columbia University Press, New York.*
23. *Ibid*
24. *https://www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/India-Israel_relations.pdf*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 132–141

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Neurocognition A paradigme shift to innovative pedagogy of teaching

Tehseen Sartaj
Research Scholar, Department of Educational Technology,
Bharathidasan University,Tiruchirappalli (T.N.)
E-mail : peerzadatehseen1920@gmail.com

Dr. S. Amutha
Assistant Professor (Supervisor), E-mail : amutha@bdu.ac.in

Dr. Mohammad Amin Dar
Assistant Professor (Co-Supervisor) Department of Education, University of Kashmir.

Abstract

The present research study was undertaken to access the neurocognitive knowledge and teaching competency of prospective teachers. The main aim of this research study was to find out the correlation between the independent variable (Neurocognitive knowledge) and the dependent variable (Teaching Competence). Through a simple random sampling technique, 420 prospective teachers were selected from 15 different teacher training colleges in the South Kashmir region of Jammu and Kashmir UT. The participants were screened using two instruments 1) neurocognitive knowledge inventory (NKI) and 2) Teaching Competence questionnaire (TCQ). The data was analyzed by employing percentage analysis, Pearson's Product Moment Correlation, and regression analysis. The findings of the study revealed a significant positive relationship between neurocognitive knowledge and teaching competence.

Keywords: Neurocognion, Brain, Teaching competence, prospective teachers, correlation, Education.

Introduction

Education is the index of progress and prosperity of a nation. A nation's educational system determines its social or economic growth. The developed nations of the world have a well established education sector. The bedrock of the entire system of education is the teacher. It is his skill, expertise, proficiency and ability which act as the cornerstone on which the establishment of excellence of any nation is based. **(Shukla, 2014)**[1] stated that the teacher plays the most crucial role in the

system of education. They are the foundation on which the stability and growth of the educational system as well the nation rests. They shoulder the responsibility of shaping the future of the nation, which depends upon the skills and efficiency of the teachers. A proficient teacher is one who adopts innovative pedagogy inorder to make his teaching more meaningful, result oriented and effective for the achievement of better learning outcomes and overall development of personality of students. The development of Competency and proficiency of teacher trainees is one of the major objectives of most of the teacher training institutions. Teacher competency is the series of techniques, ideas, and attitudes which a teacher has acquired and brings them to the classroom. (**Steiner et.al 2008)**[2] stated that "Competency is a pattern of thinking, feeling, acting or speaking; which makes a person successful in a specific job or role". Changing interests and aptitudes of the students and the modern technological advancements are posing serious challenges for 21st century teacher to shift the focus from traditional to competency based teaching. While discussing the pedagogy and curriculum as a future course of action, (**National education policy, 2020)**[3], points out that to close the gap in achievement of learning outcomes, classroom transactions will have shift towards competency based learning and education. NCTE has highlighted the need for systematic and rigorous teacher training to ensure teacher competence.

For decades, mainstream education has gravitated around behavioral paradigms, reflecting the contribution of Cognitive Psychology **(Piaget, 1952)**[4]. Modern research on learning processes inevitably relates education with neuroscience. Current neuropsychological research establishes a distinct demarcation between conditioning based learning through reinforcement and higher cognitive processes like communication and critical thinking **(Anderson, 2009)**[5]. Since there is no learning without the brain, neuroscience investigates the processes by which brain learns and remembers from the molecular levels right through to brain systems **(Goswami, 2004)**[6]. Global interest in neuroscience and education has led to a number of collaborations across disciplines to seek new ways of understanding teaching and learning. There is a hope that brain research will foster deeper knowledge of teaching and learning and even begin to provide information that is useful for shaping educational practice and policy **(Fischer, 2009)**[7]. Understanding the brain mechanisms that underlie learning and teaching could transform educational strategies and enable us to design educational programmes that optimize learning for people of all ages and of all needs **(Blakemore & Frith, 2005)**[8]**.**

The last decade of the 20th century has seen an unprecedented flow of knowledge in brain research towards learning. Modern research technologies in the neurosciences have substantially improved our knowledge of brain structure and function at increasingly finer levels of resolution. Researchers in the field of education have been able to expeditiously admit that researches in the emerging area of brain

science have a promising role towards education. There has been an increase in interest and debate about integrating neuroscience and education over the past decade **(Fischer et al., 2007)[9] and (Pickering & Howard-Jones, 2007)[10]**. A report by **(OECD 2007)[11]** makes out a point that neuroscience has a tremendous potential to contribute to educational field. A component of neuroscience that is pertinent to educational difficulties should be included in preparation of teacher education programmes **(Royal Society in the United Kingdom, 2011)[12]**. Integrating neuroscience into teacher education programs provides another perspective on learning, development, and instruction. It bolsters teachers scientific literacy and adds to teachers' "theoretical toolkit"—a view of "themselves as designers of experiences that ultimately change students' brains" **(Dubinsky, Roehrig and Varma, 2013)[13]**. The application of brain research and its findings by educators and investigators into the classroom has given birth to the neurocognitive concept of teaching. Neurocognition is the outcome of the researches carried out in the field of neuroscience, cognitive neuroscience, psychology, neuropsychology and now more recent educational neuroscience. Instead of what we learn neurocognitive concept of teaching and learning focuses on how we learn. Neurocognitive process contains a number of functions through neuronal networks where brain cells communicate with each other through an electrochemical process. Neurocognition includes perceiving, recognizing, conceiving, judging and reasoning processes **(Melvin D. Levine, 2009)[14]**.

Overview of Related Literature

Sasikumar, et.al (2016)[15] found that it is possible to facilitate the pedagogical components of B.Ed teacher trainees under teaching competency by employing the related components of neurocognitive intervention techniques.

KarnicaVyas and K.C. Vashishtha (2013)[16] found the effectiveness of teaching based on brain research with reference to academic achievement of secondary school students. Experimentation revealed that the treatment variable enhanced the academic achievement of students in the experimental group. It demonstrates that the teaching based on neuroscientific research really proves to be highly beneficial in boosting the student academic achievement.

Duman (2010)[17] examined how students from Mugla University with various learning preferences fared academically after using brain-based learning (BBL) strategy. The experiment was set up as a pre-test-post-test design. According to the study's conclusions, the BBL strategy utilized by the experimental group was more successful in enhancing the student achievement than the conventional strategy employed in the control group.

Ramachandran. S and Vadivu. P (2014)[18] found the effectiveness of neurocognitive based concept mapping (NBCM) strategy on learners in teaching

science. A total of 32 students of grade IX from a CBSE school located in Thiruvallur, Tamilnadu participated in the study. The students were divided into two groups; control group and experimental group. The students from both the groups were pre-tested with basic knowledge on the selected topics in science "The fundamental unit of life" and "Is matter around us pure". The students in the control group were taught through the conventional method of teaching where as the students in the Experimental group were taught through the Neurocognitive based concept mapping (NBCM) strategy developed by the researcher. The findings of the research study revealed there is a significant difference between the mean scores of pre-test and the post-test of the Experimental group as compared to control group.

Tornee. N, Buntern. T, Muchimapura. S and Tang. N.K (2017)[19] explored the Effect of Neurocognitive Constructivist Guided Inquiry Based (NCGI) Teaching Model and Conventional Structured (SI5E) Teaching Model on students' Attention abilities. Experimental design was adopted in this study. The sample consisted of a total of 65 students of grade 11 from 3 classes in a secondary school located at northeastern of Thailand. The findings of the study for the auditory attention variable revealed a better improvement in the attention abilities of Experimental group than control group. Similarly, visual attention variable revealed a better improvement in the visual abilities of Experimental group compared to control group.

Rationale of the study

Despite being difficult, incorporating neuroscience into teacher preparation programmes could significantly help all students accomplish educational objectives (Donna Coch 2018)[20]. Awareness of various brain mechanisms and how it impacts process of teaching has the potential to inform the process of education. The recent developments in the neurocognitive domain may enable us to perform empirical investigations into the philosophical postulate of knowledge building (Bhaskar and Sivakumar, 2012)[21]. The manner in which the brain operates does have an impact on how information is processed, stored, and retrieved during the teaching and learning process. Teachers should properly comprehend all cognitive processes in order to provide high-quality education. Understanding the process of neurocognition and its approach influences teaching desperately which is mandate in the present scenario. There is not much work has been taken in India in this direction. As a result, the researcher understood this gap and put on the effort towards neurocognition which may contribute to enlighten learners and educators about in brain science teaching.

Research Objectives and hypothesis

Objective-1: To access the extent of neurocognitive knowledge of prospective teachers

Hypothesis-1: The neurocognitive knowledge of prospective teachers may vary from low to high level knowledge on neurocognitive knowledge inventory.

Objective-2: To find out the level of teaching competency of prospective teachers

Hypothesis-2: Prospective teachers possess a moderate to high level of teaching competency.

Objective-3: To examine the relationship between neurocognitive knowledge and teaching competency of prospective teachers.

Hypothesis-3: There exists no association between teaching competency and neurocognitive knowledge of prospective teachers.

Research Design of the study

Methodology

Descriptive method with the normative survey technique was adopted on 420 prospective teachers for data collection. The data was analyzed statistically by employing percentage analysis, Pearson's product moment correlation and regression analysis.

Sample of the study

The 420 prospective teachers were selected from 15 Teacher training colleges both at rural and urban areas *in the South Kashmir region of Jammu and Kashmir UT* through simple random sampling technique.

Research tool

Researchers developed two research tools namely neurocognitive knowledge inventory (NKI) and Teaching competence questionnaire (TCQ). The tools were validated using content validity and factor analysis.

Neurocognitive knowledge inventory (NKI) The tool consists of 40 items with 5 point scale i.e. 1) Lack of knowledge, 2) Low level of knowledge, 3) Moderate level of knowledge, 4) High level of knowledge and 5) Complete knowledge.

To find out the reliability of this tool Chronbach's alpha reliability method was used and the value was "0.85".

Teaching competency questionnaire (TCQ)

Teaching competency questionnaire consists of 35 items with 5 point scale i.e. 1) I never do this, 2) I occasionally do this, 3) I hardly do this 4) I often do this and 5) I always do this.

To find out the reliability of this tool Chronbach's alpha reliability method was used and the calculated value was "0.92".

Analysis and interpretation of data

Collected data were analyzed using SPSS version 26.

Table.1. Showing neurocognitive knowledge level of prospective teachers (N=420)

Scores on neurocogniftive Knowledge inventory	Frequencey	Perecentage	Rank
Below 100	6	1.42 %	Low level of knowledge
100 - 150	202	48.09 %	Moderate Level of Knowledge
150 - 200	212	50.47 %	High Level of Knowledge

The data presented in the table 2 shows the neurocognitive knowledge of prospective teachers. The percentage analysis of the responses demonstrates that a high level of knowledge about neurocognition was found to account for about 50.47% (N=212) of the participants, followed by moderate level of knowledge 48.09% (N=202), while a low level of knowledge was expressed by only 1.42% (N=6) of the participants which justifies hypothesis 1.

Table.2.Showing Teaching competency level of prospective teachers (N=420)

Scores on Teaching Competency Questionnaire	Frequencey	Perecentage	Rank
Below 100	12	2.85 %	Low level of knowledge
100 - 150	232	55.23 %	Moderate Level of Knowledge
150 - 200	176	41.90 %	High Level of Knowledge

The information in table 2 reflects the teaching competency of prospective teachers. 35 items comprised the teaching competency questionnaire. All of the questions pertained to significant aspects of teaching competency. The objective of the questions was to determine whether the teachers exhibited the critical information, abilities, and attitudes requisite for effective teaching and learning. The analysis of the data revealed that 55.23% (N=232) of the participants have moderate and 41.90% (N=176) of them have high level of teaching competence while as only about 2.85% (N=12) of the participants showed low level of teacher competence which is in accordance with hypothesis no 2.

Table.3. Showing results for Pearson's Co-effienct of Correlation between Neurocognitive knowledge and Teaching Competency of prospective Teachers (N=420).

		Teaching Competency	Neurocognitive Knowledge
Teaching Competency	Person Correlation	1	.397**
	Sig. (2-Tailed)		.000
	N	420	420
Neuroconnitive Knowledge	Person	.397**	1
	Correlation		
	Sig. (2-Tailed)	.000	
	N	420	420

**. Correlation is significant at the 0.01 level

Results from Table 3 indicate a positive association between teaching competency and prospective teachers' neurocognitive knowledge (r=0.397), which is significant at the 0.01 level of confidence. Hence, the null hypothesis3 that claims there is no relationship between prospective teachers' neurocognitive knowledge and teaching competence is rejected. Table.4.Showing results of Regression analysis for neurocognitive knowledge and teaching competency

a. Model summary of impact of neurocognitive knowledge towards teaching competency

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	.397[a]	.158	.154	37.002

A. *Predictors: (Constant), Neurocognitive knowledge*

b.ANOVA of impact of neurocognitive knowledge towards teaching competency

Model		Sum of Square	df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	53288.055	1	53288.055	38.920	.000[b]
	Residual	284789.068	208	1369.178		
	Total	338077.124	209			

a. Dependent Variable: Teaching competency,

b. Predictors: (Constant), Neurocognitive knowledge.

c. Coefficient of impact of neurocognitive knowledge towards teaching competency

Model		Unstandardized Coeffficients		Standardized Coeffficients	t	Sig.
		B	Std. Error	Beta		
1	(Constant)	198.669	16.667		11.920	.000
	Neurocognitive Knowledge	.355	.057	.397	6.239	.000

a.Dependent Variable: Teaching competency

as many 15.4% of the variances could be predicted from the variables. This reveals that neurocognitive knowledge of the prospective teachers has its impact on teaching competency and it plays an important role in improving their teaching component. The ANNOVA table.4.b indicates that teaching component of the teacher trainees is statistically significant towards neurocognitive knowledge F (1,208) = 38.920, $p < 0.05$ (i.e., the regression model is best fit of the data).

Discussion

The investigators carried out this research study to ascertain the neurocognitive knowledge and to access the teaching competence of prospective teachers. The major objective of the study was to determine the correlation between neurocognitive knowledge and teaching competency. The investigator administered self constructed neurocognitive knowledge inventory (NKI) and teaching competency questionnaire (TCQ). The responses were collected from the participants on a 5 point likert scale from "low level of knowledge" to "complete knowledge" about neurocognition. The findings of the study revealed that a high level of knowledge about neurocognition was found to account for about 50.47%, (N=212) of the participants, followed by moderate level of knowledge 48.09%, (N=202), while a low level of knowledge was expressed by only 1.42%, (N=6) of the participants. Thus, it can be concluded that from 420 participants a large portion of the prospective teachers possessed a reasonable amount of knowledge about neurocognition. On the basis of teaching competency the study revealed that 55.23%, (N=232) of the participants have moderate and 41.90%, (N=176) of them have high level of teaching competence while as only about 2.85%, (N=12) of the participants showed low level of teacher competence. Thus, it may be deduced from the results that a significant portion of the prospective teachers have crucial teaching skills, compared to a smaller portion who do not possess it. The major objective of the research study was to find out the association between neurocognitive knowledge and teaching competency of prospective teachers. To realize this objective inferential statistics was applied. The correlation value (r=0.397) determined a positive significant association exists between neurocognition and teaching competency. Thus, it can be inferred from the findings of table 4 that the teachers' abilities as educators and their insight of neurocognitive processes are interconnected. An important component of the learning process that calls for teaching proficiency on the part of the teacher is neurocognitive knowledge. The ability to develop original ideas and employ cutting-edge teaching methods is a trait of educators who are cognizant of neurocognition. The regression analysis of the data further indicated an average or moderate level of prediction. Thus, we may conclude by saying neurocognitive knowledge has a significant positive influence towards the teaching competency of prospective teachers and that neurocognition is the determinant of the teaching competence.

Implications

Following implications from the study have been made in light of the research findings

A comprehensive analysis of neurocognition might result in the development of a new academic field that integrates the domains of neurocognition and education. It is to be encouraged to explore a clear insight of constructivism.. Since, brain is the only organ directly associated with learning, the neurocognitive approach of teaching is solely based on ideas that increase brain performance and hence make learning easier. Neurocognitive investigation could help the educational stakeholders to redesign curriculum, revise attempt to classroom interaction and educational administration. It may enable educators to create conducive classroom environment that will promote higher order thinking and maximum cognitive development of the children. Hence, it is imperative for the educators to keep this thing in mind while planning lessons and designing classroom instruction.

A coordinated effort involving expert from both cognitive and neurocognitive fields and educators is desired wherein researchers from both domains will undertake research studies, and then educators will design new classroom instruction using the findings. These new classroom instructions will then be evaluated by the researchers based on student academic progress. Such an integrative approach between neuroscience and education will certainly inform the education sector.

To prepare aspiring teachers for the challenges of a rapidly evolving society, neuroscience should be incorporated into the B.Ed and M.Ed Curriculum. Neurocognition training programmes aimed at strengthening teachers' capacity are to be organized for both preservice and inservice educators. For the professional development of pedagogy of teaching and to decrease achievement disparities among students, seminars, conferences, and orientation programmes must be held at the school, college, and university levels.

❒

References:

1. *Shukla, S. (2014). Teaching Competency, Professional Commitment and Job Satisfaction - A Study of Primary School Teachers. IOSR Journal of Research and Method in Education, 4(3), 44-64. www.iosrjournals.org.*
2. *Steiner, L. et al (2008). School turnaround teachers: competencies for success, Part from the School Turnaround Collection from Public Impact. For the Chicago Public Education Fund. June. Retrieved from www.Publicimpact.com.*
3. *National Education Policy draft (2020). Ministry of Human Resource Development Government of India. https://www.education.gov.in.*
4. *Piaget, J. (1952). The Origins of Intelligence in Children. New York: International University Press, New York, 25-26. https://doi.org/10.1037/11494-000.*
5. *Anderson, O.R, (2009). The role of knowledge network structures in learning scientific habits of mind: Higher order thinking and enquiry skills. https://doi.org/10.1163/9789087909239_005.*
6. *Goswami, U. (2004). Neuroscience and education. British Journal of Educational Psychology, 74(1), 1-14.*
7. *Fischer, K. W. (2009). Mind, Brain, and Education: Building a Scientific Groundwork for Learning and Teaching1. Mind, Brain, and Education, 3(1), 3–16. https://doi.org/10.1111/j.1751-228x.2008.01048.x.*

8. *Blakemore, S.J. & Frith, U. (2005). The learning brain: Lessons for education. Blackwell Publishing. https://www.wiley.com/p-9781405124010.*
9. *Fischer, K. W., Daniel, D. B., Immordino-Yang, M. H., Stern, E., Battro, A., & Koizumi, H. (2007). Why mind, brain, and education? Why now? Mind, Brain, and Education, 1(1), 1–2.*
10. *Pickering, S., & Howard-Jones, PA. (2007). Educators' views on the role of neuroscience in education: Findings from a study of UK and international perspectives. Mind, Brain and Education, 1(3), 109 - 113. https://doi.org/10.1111/j.1751-228X.2007.00011.x.*
11. *OECD (2007), Understanding the Brain: The Birth of a Learning Science, OECD, Paris https:// www.oecd.org/site/educeri21st/40554190.*
12. *The Royal Society. (2011). Brain waves module 2: Neuroscience: Implications for education and lifelong learning. London, England: The Royal Society, Science Policy Centre.https://royalsociety.org/ /media/Royal_Society_Content/policy/publications/2011/4294975733.pdf.*
13. *Dubinsky, M. Roehrig Gillian and Varma Sashank (2013). Infusing Neuroscience into Teacher Professional Development. Educational Researcher, (20) 10, 1-3. https://www.researchgate.net/ publication/269866707.*
14. *Levine, M. D. (2009). Differences in learning and Neurodevelopmental function in school-age children. Developmental-Behavioral Paediatrics, 535-546.*
15. *Sasikumar N, Parimala Fathima M and Mohan S. (2016) "Effect of Neurocognitive Intervention Strategies on Enhancing Teaching Competency among Graduate Teacher Trainees." American Journal of Educational Research, 4(11), 785-791.*
16. *KarnicaVyas and K.C. Vashishtha (2013). Effectiveness of teaching based on brain research with reference to academic achievement of secondary school students. International Journal of Students Research in Technology & Management, 1(04), 383-397.*
17. *Duman, B. (2010). The effects of brain-based learning on the academic achievement of students with different learning styles, Educational Sciences: Theory & Practice, 10 (4), 2077-2103.*
18. *Ramachandran. S and Vadivu. P (2014). An innovative method of teaching- learning strategy to enhance the learner's educational process: paradigm shift from conventional approach to modern approach by Neurocognitive based concept mapping. International journal of Advances in Arts, Social Sciences and Education Research, 4(12), 661-669.*
19. *Tornee. N, Buntern. T, Muchimapura. S and Tang. N.K (2017). The Neurocognitive Constructivist Guided – Inquiry Based Teaching Model For Promoting Attention Abilities. Turkish online journal of Educational Technology, special issue. https://www.ic.kku.ac.th/documents/pdf/tang6.pdf.*
20. *Donna Coch (2018) Reflections on Neuroscience in Teacher Education, Peabody Journal of Education, 93:3, 309-319.*
21. *Bhaskar. K and Sivakumar. P, (2012). Neurocognitive precept of constructivism in science education. Paripex Indian Journal of Research, 1(6), 30-31.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 142–148

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Financial Inclusion Among Koraga Tribal Community An Overview

Venkatesha Nayak
Research Scholar, Department of Economics, University College, Managlore
Email : nayakvn16@gmail.com Mob. 97382 78067

Dr. Jayavantha Nayak
Associate Professor and Research Guide
Department of P.G. Studies in Economics University College, Mangalore, Karnataka

ABSTRACT

Indian Banking has history prior to the independence. Reserve Bank of India had developed strong banking network by catering the needs, thus made possible financial inclusion and govt also initiated various schemes in this regard. There are banks which are now century old and Dakshina Kannada District of Karnataka is known as cradle of banking thus the financial inclusion of end person of the society will be true sense of Financial Inclusion. Having this question Primitive Tribal of the region Koraga Community's Financial Inclusion must be studied. This article raises the concern over study of Financial Inclusion of Koraga Community

Key words: Financial Inclusion, Koraga, Tribal Community

India has a rich history of banking system evolution. They had a crucial role even before independence. The Reserve Bank of India has been primarily focused on creating a strong banking system that can promote economic growth by mobilizing resources and deposits and simultaneously channeling them into diverse sectors to offer customers the finest financial services. As a result, the government has made the decision to use the banking system as a key agent in changing the fundamental policies that have been developed since independence. The financial system has played a crucial role because of its extensive network and simple accessibility, but the majority of the tribal community is unaware of its existence. The planning strategy acknowledged the crucial role that the general public's access to credit and financial services plays in the overall growth of the nation. As a result rapid transformation took place by the channels such as Automated Teller Machines, debit / credit cards,

internet banking and mobile banking and these banking services couldn't reach the mass but restricted to particular segment of the society. By this a segment with low income or which don't have access with mainstream of the society remained as population which doesn't have access to banking services.

The International Monetary Fund (IMF) released the results of the ninth annual Financial Access Survey (FAS) on September 28, 2018. The FAS is composed through national central banks or financial regulators. Currently, the dataset covers 189 countries spanning more than 10 years and contains 180 time-series on financial access and use (e.g., the number of ATMs, commercial bank branches, and mobile money accounts). This unique supply-side database allows policymakers to prepare and monitor financial inclusion targets and benchmark against peers. It is clear indicator that even IMF is keen interested in the financial inclusion.

In an article -Asia Needs More Access to Financial Services to Grow (Sarwat Jahan et.al 2018)[1] expressed that Asia, the world's fastest-growing region; expanding access to financial services for more people will mean higher growth, as well as lower poverty and inequality. They too believe that by providing the finical services the gap such as rich and poor can be filled. Moving further they mark a comment that 'Income is not the only factor contributing to the gap between what are often referred to as "the banked" and "the unbanked", and emphases on the need for financial inclusion.

In India, as Reserve Bank of India play a vital role in framing and forming policy for the development of nation by considering the financial strength of the country and also through this promotes economic integrity. It has two prominent rural banking extension service modes, they are 'Business Facilitator' (BF) and 'Business Correspondents'. Both of these are authorized financial service providers of banks. 'With the objective of ensuring greater financial inclusion and increasing the outreach of the banking sector, it has been decided in public interest to enable banks to use the services of Non- Governmental Organizations/ Self Help Groups (NGOs/ SHGs), Micro Finance Institutions (MFIs) and other Civil Society Organizations (CSOs) as intermediaries in providing financial and banking services through the use of Business Facilitator and Correspondent models' (RBI Circular 2005-06)[2]

BF is an extension of banking services through the banks to deliver services such as opening of zero balance accounts, facilitate loan enablement and other services to the unbanked families. BC is extensions of rural banking business services to those who are excluded from the banking stream such as institutional business service providers authorized by banks. As per the scheme RBI permitted the engagement of non-profit entities for delivery of these two services. Further, in the budget of 2007-08 the finance minister announced Financial Inclusion Promotion & Development Fund (FIPF) and Financial Inclusion Technology Fund (FITF), these two rural financial services are part of commitment of the government to provide universal banking services and to promote equity and equal opportunities for the un-served masses.

Rangarajan Committee, Report of the Committee on Financial Inclusion in India (2008)[3] defines it as *"the process of ensuring access to financial services and timely and adequate credit where needed by vulnerable groups such as weaker sections and low income groups at an affordable cost." The aim of financial inclusion will be clear that it concentrate on the inclusion of marginalized people or of those who are not linked with the mainstream of the society.*

Financial inclusion has gained growing attention in development circles. Policy makers and central bankers around the world are discussing how to build more financially inclusive economic system (Gardeva, A. and Rhyne, E 2011).[4] It is clear that financial inclusion is of the global trend where every country is planning the inclusive economic growth by the way of promoting savings and investments. Moreover limited participation of people in the financial services from a segment contributes to the general problem of social exclusion (Kempson & Whyley, 1999).[5]

Center for Financial Inclusion (CFI) in its Financial Inclusion 2020 project provides comprehensive definition as "Full financial inclusion is a state in which all people who can use them have access to a suite of quality financial services, provided at affordable prices, in a convenient manner, and with dignity for the clients. Financial services are delivered by a range of providers, most of them private, and reach everyone who can use them, including disabled, poor, and rural populations" it is clear that financial inclusion is to bring every one under one umbrella by providing the dignity and that's of the equal status.

Whereas 'India lags behind emerging nations in financial inclusion' (Nair,Remya 2012),[6] it indicates that the central government as well as central bank of the country needs to promote the idea of financial inclusion and it is supposed to reach the unreached.

Objectives

To understand the concept of Financial Exclsuion and Financial Inclusion

To Analyze the Status of Financial Inclusions Programs in Karnataka.

To Study the need for financial inclusion of Koraa Triabal Community of Karnataka

FINANCIAL EXCLUSION

The banks will need to take a comprehensive approach to address financial exclusion, including education, savings, investments, accessible credit, and financial management advice. Financial exclusion has several negative effects, such as difficulty obtaining credit, borrowing money from unofficial sources with higher interest rates, a rise in unemployment, the requirement for travel, delays in money transfers, etc. These effects are the reason why a percentage of people are financially excluded. Providing banking services without prejudice to the vast majority of underprivileged and low-income people. (Leeladhar 2006)7

According to Global snapshot of Financial Exclusion 2014(World Bank, 2014) India has low level of access to all financial products. Informal borrowing from family & friends is very high as formal credit is very limited. Out of 23 countries India has least favorable ratios of formal lending (7.7%) to informal lending (6.6%). (Impact, C. for S. (2014).[8]

FINANCIAL INCLUSION

On the topic on 'Taking banking services to the common man - Financial inclusion', Leeladhar states that Financial Inclusion is the delivery of banking services to the vast section of deserving low income people at an affordable price. He also emphasises that banks need to redesign their business strategies to incorporate specific plans to promote among the low income groups, considering it both as a business opportunity and as a corporate social responsibility. To get the fullest advantage of the system, the customers, who constitute "the bottom of the pyramid", can use the available resources including technology, expertise of MFIs and NGOs (Leeladhar, 2006).[9]

On writing about the 'Role of banks on the Financial Inclusion', Savarimuthu identifies that financial inclusion is a process of bringing the poor and downtrodden into the ambit of the formal banking sector and providing the benefits of the banking and financial services at an affordable cost. Like other countries, the access of basic banking facilities is denied in India too, that is around 65% of the Indian households do not have access to the banking services out of which 69.5% in the rural and 50.5% in the urban areas (Savarimuthu, 2006)[10]

Through empirical research, studies with bank-based financial intermediation for financial inclusion have been done. According to the report, priority sector lending has a considerable impact on inclusive growth in India. The amount of domestic savings, credit to GDP, and per capita income all significantly contribute to lowering poverty. According to the study's findings, India's banking sector reforms have helped the country achieve inclusive growth. The report added that coordinated work between banks and other financial intermediaries was necessary to create inclusive growth in order to make it easier for people who are financially excluded to access financing. (Swamy, 2010)[11]

FINANCIAL INCLUSION IN KARNATAKA

Syndicate Bank has been a leader in this new initiative for financial inclusion since it is the convener of the State Level Bankers' Committee (SLBC), Karnataka, a forum that represents all the banks in the State of Karnataka. With active support from the Govt of Karnataka and Reserve Bank of India, SLBC working closely to see that EBT (Electronic Benefit Transfer) payments of SSP (Social Security Pension) and wages under MGREGS (Mahatma Gandhi Rural Employment Guarantee Scheme) are paid through smart cards/Rupay in seven districts of Karnataka viz., Bellary, Chitadurga, Gulburga,Yadagir under one District many Bank Model which leads and By combining Chamaraja Nagar, Dharwad, and Mandya under one District One Bank Model, more people could use formal banking services and become financially included.

At the Annual Banker's Conference 2006, Usha Thorat,[12] Deputy Governor, RBI; said that introduction of IT-enabled financial inclusion would facilitate easy payments to beneficiaries under various schemes of the state and central governments

. These were in nature of social security pension schemes and the National Rural Employment Guarantee Scheme (NREGS) which can be directly deposited to their bank accounts.

Pilot projects were then started in the Karnataka districts of Bellary and Chitradurga. In coming phases, the entire state would be covered. C P Swarnkar, chairman and managing director of Syndicate Bank, said during the SLBC meeting that banks have taken initiatives to implement the 100% financial inclusion programme in areas covered by Greater Bangalore City Corporation in order to put the entire state of Karnataka within its umbrella (GBCC).

The Reserve Bank of India, however, denied the claims made by state-level bankers' committees that some districts in the nation had attained 100% financial inclusion. After the financial inclusion plan was assessed, it was determined that not all people had access to financial services.

"Most of the accounts that have been opened as part of the financial inclusion drive have remained inoperative due to various reasons such as distance from the branch, illiteracy, lack of interest and non-availability of passbooks".(Economic Times - January 23 2009)[13] Thereby we look into the operations /operationalisation aspect of these accounts.

While understanding this situation in Karnataka, a district which gave birth to the nationalized banks will be in light to discuss the effectiveness of financial inclusion ad thus a native tribal community has been selected for the study to understand the reach of financial services.

The main element that encourages financial inclusion is thought to be financial literacy. The Reserve Bank of India and the Central Government are implementing numerous projects and programmes to increase financial literacy among the populace. Even so, a large number of people lack even a basic understanding of the economic principles required to make wise investing and saving decisions. One account should be opened with a financial institution for each citizen as part of the financial inclusion concept.

Due in part to their traditional outlook and attitude toward money and savings, as well as their understanding of and accessibility to banking and financial services, the tribal groups in India have endured centuries of severe economic isolation. Since the tribal community is sparsely dispersed throughout small hamlets, financial inclusion is made all the more difficult. In this regard the present study attempts to focus on importance and enumerating the need of the status of financial inclusion of Koraga community of Dakshina Kannada District.

KORAGA TRIBE

The koraga are a tribal group primarily found in the districts of Dakshina Kannada, Udupi, and Kassargod in Kerala. The koraga community is a scheduled tribe that continues to lag behind in all areas. The community has also been designated as a Primitive Tribal Group. The Indian government has identified the Koraga as a

Scheduled Tribe. 'The Koragas are summed up, in the Madras Census Report, 1901, as being a wild tribe of basket-makers and labourers, chiefly found in Mudbidri, and in Puttur in the Uppinangadi taluk of South Canara'.(Thurston, 1909)[14] If we look at the pre independence era this tribe was severely excluded from the society as they were employed as scavengers in sanitary department and some skilful in manufacturing of cradles, baskets, and , cylinders to hold paddy etc. even now the main economic activity is concerned with basket making. 'This being the traditional occupation, people belonging to older generation is involved in basket making is comparatively more than the younger generation'(Chaudhari k Sarit 2005)**.**[15] The tribe is superstitious also and the very practice of the tribe 'Ajalu' has been prohibited with the view to provide the human dignity where they will be treated as slaves. The Karnataka Koragas (Prohibition of Ajalu[16] Practice) Act, 2000 received the assent of the governor in December 2000.

NEED FOR FINANCIAL INCLUSION OF KORAGA TRIBE

Making sure that the benefits and fruits of growth reach the populations at the base of the pyramid, particularly vulnerable socio economic sectoral groups, is a key component of inclusive growth. Therefore, inclusive prosperity in India remains a phantom and will elude us barring a thorough overhaul of every aspect of how the Indian State runs at the local level.

India has a significant number of programmes, regulations, and directives designed to increase banking access and guarantee service to the unbanked population, especially social groups. There are several programmes, strategies, and rules designed to offer financial products and services to the underprivileged. It might be difficult for those who do not have bank accounts to access banks and the services they provide. The never-ending influx of new initiatives and directives in this area amply reveals that none of them have succeeded in achieving their primary goal of financial inclusion. The review studies say "Why the majority of financial inclusion business strategies have not reached to the social vulnerable groups and sectoral groups"? The literature reviews presented in the earlier studies are very few at micro level. The majority of the studies are only at macro level but not at the micro level supported by empirical evidence. Those studies focused on business strategies and technology aspects. But there are no any studies on status of financial inclusion at tribal households in Dakshina Kannada district of Karnataka State up to now. To fill this research gap an attempt will be made in this study to focus on financial inclusion of Koraga Community of Dakshina Kannada District of Karnataka State. The main thrust of the study is to examine the status of financial inclusion of Koraga community, and the need to consider the economic strategies to achieve overall goal.

CONCLUSION

There are numerous indigenous people living in India who have not yet adopted contemporary lifestyles. India has the world's largest population of tribal people, numbering about 84.4 million. These tribes are socially excluded too, even after

many years of the independence they don't form a part in the main stream. Integrated DakshinaKannada district is called the "Cradle of Indian Banking". However, situation at bottom level is not different. The majority of tribe members and the poor lack access to the fundamental financial services that would enable them to manage their assets and earn revenue. If they have access, readily available and reasonably priced financial services open up new economic opportunities and give people confidence and power In this regard, this study is more appropriate one.

❐

References:

1. *Sarwat Jahan et.al, 2018, Asia Needs More Access to Financial Services to Grow, retrieved fromhttps:// blogs.imf.org/2018/09/18/asia-needs-more-access-to-financial-services-to-grow/*
2. *RBI Circular, RBI/2005-06/288 DBOD.No.BL.BC. 58/22.01.001/2005-2006 retrieved from https://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/Notification/PDFs/68417.pdf*
3. *Rangarajan Committee,, 2008, Report of the Committee on Financial Inclusion in India, retrieved from http://slbckarnataka.com/UserFiles/slbc/Full%20Report.pdf*
4. *Gardeva, A. and Rhyne, E. (2011) Opportunities and Obstacles to Financial Inclusion: Survey Report. Center for Financial Inclusion, Publication, 12, retrieved from https:// www.findevgateway.org/sites/default/files/publications/files/mfg-en-paper opportunities-and-obstacles-to-financial-inclusion-survey-report-jul-2011.pdf*
5. *Kempson, E., & Whyley, C. (1999). Kept out or opted out?Understanding and Combating Financial Exclusion.*
6. *Nair, Remya (2012) India lags behind emerging nations in financial inclusion, retrieved from https://www.livemint.com/Industry/ZLqb6dEHp9nav1OsubWJQL/India-lags-behind-emerging-nations-in-financial-inclusion.html*
7. *Leeladhar, V. (2006,).Taking Banking Services to the Common Man - Financial Inclusion. Reserve Bank of India Bulletin, 73–77.*
8. *Impact, C. for S. (2014).A Global Snapshot of Financial Exclusion 2014. Australia. Retrieved from http://cr.nab.com.au/docs/140502-global- snapshot-report-final.pdf*
9. *Leeladhar, V. (2006,).Taking Banking Services to the Common Man - Financial Inclusion. Reserve Bank of India Bulletin, 73–77.*
10. *Savarimuthu, M. (2006).Financial inclusion - Role of banks. Financial Agriculture: A National Journal of Agriculture and Rural Development, 38(5), 12-19.*
11. *Swamy, V. (2010).Bank-based financial intermediation for financial inclusion and inclusive growth. Banks and Bank Systems, 5(4), 1–12. Retrieved from http://mpra.ub.uni-muenchen.de/49602/*
12. *Address of Smt. Usha Thorat, Deputy Governor, Reserve Bank of India at the Annual Bankers' Conference 2006, at Hyderabad on November 4, 2006. Retrieved from https://www.rbi.org.in/Scripts/BS_SpeechesView.aspx?Id=311*
13. *RBI contradicts 100% financial inclusion claims by banks, The Economic Times (January 23 2009) retrieved from https://economictimes.indiatimes.com/news/economy/policy/rbi-contradicts-100-financial-inclusion-claims-by-banks/articleshow/4023602.cms*
14. *Thurston,Edgar,(1909), Castes and Tribes of Southern India, government press, madras (425)*
15. *Chaudhari k Sarit&Chaudhari Sen Sucheta (2005) Primitive tribes in Contemporary India vol 1, Mittal publications (128)*
16. *'**Ajalu**' -Ajalu practice includes differentiating between Koragas and persons belonging to other communities, treating them as inferior human beings, mixing hair, nails or any other inedible or abnoxious substance in the food and asking them to eat that food and to make them to run like buffaloes before the beginning of Kambala.* ***The Karnataka Koragas (Prohibition of Ajalu Practice) Act, 2000.***

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 149–159

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Paliamentary Institutions & Construction of India's Foreign Policy Decision Making

Vishakha Jha

Research Scholar, Deptt. of Sociology and Political Science,
Faculty of Social Sciences,Dayalbagh Educational Institute, Dayalbagh, Agra (U. P.)
E-mail : vishakhajha333@gmail.com Contact No.-8791623430

ABSTRACT

Globalization is interconnectedness and interdependency which is gradually narrowing the gap between internal matters and external affairs. Now all matters related to external affairs have no longer persisted business of foreign offices. Hence, parliament in a democratic country like India has been playing an extraordinary role in the construction of India's Foreign Policy. The influence of Parliament in the India's Foreign Policy Decision Making has been increasing. Therefore, this article tries to understand and evaluate the role of Parliamentary Institutions for the construction of India's Foreign Policy Decision Making. To answer these questions, I am going to use Descriptive and Analytical methods which will identify institutions' name and procedures for the construction of India's Foreign Policy. The research paper will study the fundamental proposition of foreign policy decision making will provide a comprehensive idea of India's Foreign Policy Decision Making. Along with this several theories of foreign policy decision making will scrutinize. Also this article is an attempt to explore the role of parliamentary institutions for the construction of India's foreign policy decision making. Further it will deeply examine the policy planning and research division which will help us to clearly understand the systematic process for the building of India's foreign policy. Lastly the study will give an insight of India's foreign policy making procedures, which will demonstration that how Parliamentary institutions are playing an astonishing role for the creation of India's foreign policy. Along with required improvement in this field of study and extraordinary conclusion will be suggested.

KEYWORDS: India's Foreign Policy Decision Making, Foreign Services, Ministry Of External Affairs, The Prime Minister's Office (PMO), The National Security Council (NSC)

INTRODUCTION

In the era of globalization, all nation states are living in global community. With the introduction of LPG (Liberalization, Privatization and Globalization), states became interconnected and interdependent with each other. Thus enjoying complimentary relationship to secure national interest in the complex world order, foreign policy is designed distinctively by various states. Particularly Indian parliament is also working in this regard. Nowadays parliament in a democratic country like India has been playing an extraordinary role in the construction of India's Foreign Policy.[1] An influence of Parliament in the India's Foreign Policy Decision Making has been increasing. Therefore it is very important to get familiar with the role of several Parliamentary institutions for the construction and procedures of India's Foreign Policy Decision Making. In this regard, The research paper will study the **fundamental proposition of foreign policy decision making** will provide a comprehensive idea of India's Foreign Policy Decision Making. Along with this several **theories of foreign policy decision making** will scrutinize. Also this article is an attempt to explore the role of **parliamentary institutions for the formulation and implementation of India's foreign policy decision making.** Further it will deeply examine the **policy planning and research division.** Lastly the study will give an insight of **India's foreign policy making procedures, further required improvements and conclusion.**

FUNDAMENTAL PROPOSITION OF FOREIGN POLICY DECISION MAKING PROCESS

The combined word Foreign Policy has been emerged with the two different words that are 'Foreign' and 'Policy'. The word 'Foreign' refers to the things that do not exist within a border but it is related with the external factors which are occurring across the world politics.[2] Whereas the single word Policy refers to the strategies and guidelines of a nation state. Thus foreign policy refers to the strategies and guidelines to states for the fulfillment of nation's goals in international politics. Literally, 'the word Foreign Policy is comprised of two individual words, foreign and policy. The word Foreign came from the Latin word 'foris' and 'foras' meaning 'outside'[3] and the word 'Policy' originated from the Old French word 'policies' meaning 'civil administration.'[4] Thus foreign policy is the grand strategies which are tackle the issues of international politics. According to the Oxford Dictionary,

"Foreign Policy is a government's strategy in dealing with other nations."[5]

Today the scope of foreign policy becomes vast which includes states as well as non-states actors. There are various NGOs, international organizations,

international institutions, regional organisations and great powers etc not only affect but also been affected by states in global politics. Many factors like political, economic, social, cultural etc also affect relations among states. Broadly defined Foreign Policy as according to George Modelski **"Foreign Policy is the system of activities evolved by communities for changing the behaviour of other states and for adjusting their own activities to the international environment."**[6]

Foreign policy decision making is a process by which government recognize the problem before national interest and take various steps to resolve it. During the process, states have ultimate aim not only to protect their national interest but also to maximize profits and lessening losses while dealing relations with other states. FPDM (Foreign Policy Decision Making) is an inspection to identify substitute and select more appropriate way to resolve problem. When states have to take decision while conducting their relations with others this is called Foreign Policy decision making, such as, according to Alex Mintz and Karl DeRouen Jr., in "Understanding Foreign Policy Decision Making", (2010) says **"Foreign Policy Decision Making (FPDM) refers to the choices individuals, groups and coalitions make that affect a nation's actions on the international stage. Further he added that it is the study to understand what goes into decision that presages the activities and events."**[7]

India's foreign decision making is a complex process, which deals with various issues of international affairs. Thus it needs several specialized agencies and institutions for the formulation of India's foreign policy. Ministry of External Affairs is one of the major institutions, which deals with foreign issues related India's foreign policy. Furthermore the Prime Minister's Office, the National Security Council, Ministry of Defence, the Strategic Policy Group, the Cabinet and the Parliament are playing crucial role in the formulation of India's foreign policy.[8].

THEORIES OF FOREIGN POLICY DECISION MAKING

Thus, conceptually **foreign policy** is the diplomatic strategies which have been protecting the national interest. Such as according to the Oxford Dictionary, "Foreign Policy is a government's strategy in dealing with other nations."[9] Also the connotation of **foreign policy decision making** is the procedure by which states have been recognizing the problem before their national interest and have tried to resolve it.[10] Hence there are several theories of foreign policy such as the according to the **idealistic theory**, foreign policy was a determinant to established peaceful and democratic environment by the international political system.[11] But idealism was criticized by **realistic approach of foreign policy**, which believed that sovereign states have conducted the matters of foreign affairs. And it is the prime duty of states to safeguard their national interest in global politics.[12] Further the **rationalist actor model theory of foreign policy** decision making is the process to select the

correct option for the protection of national interest.[13] After that **organizational process model** thought that origination will formulate foreign policy for the welfare of states.[14] **Bureaucratic model of foreign policy making** understood that formulation of foreign policy could be possible by an experts and diplomats of foreign policy making.[15] **Cybernetic theory** of foreign policy will choose all the best alternatives which will good enough for states interest.[16] Further **Prospect theory** of foreign policy believed that states must take decision on the bases of utility. Lastly the **Poliheuristic theory** believed that while formulating foreign policy, governments have to rationally criticize several strategies and after a long discussion they must select various alternatives of foreign policy.[17]

INSTITUTIONS OF INDIA'S FOREIGN POLICY DECISION MAKING

1.	Ministry of External Affairs (MEA)
2.	The Prime Minister's Office (PMO)
3.	Policy Planning and Research Division
4.	The Cabinet and Cabinet Committees
5.	The National Security Council (NSC)

MINISTRY OF EXTERNAL AFFAIRS (MEA)

Ministry of External Affairs is the most important institute of the formulation of India's foreign policy. Though multiple institutes are working in the same field but MEA is the primary one. It does not take decisions related to foreign affairs but also plays significant role, through collecting data, analysing and critically tackling all issues related to the same. The body is empowered with legislature, executive and judiciary functions in the decision making process of India's foreign policy. Since 1783 Ministry of External Affairs was established by the British East India Company for dealing foreign relations with other continents, such as South Asia, Southeast Asia and Frontier Nations and others also countries like Persia, Afghanistan, and Tibet. Notably under the Charter Act of 1833, internal and external functions of MEA. Further by the administrative reforms, 'Secret Branch' was abolished and the 'Foreign Department' was replaced by 'Foreign and Political Department' in 1914.[18] Later on the 'External Publicity Division' was taken away from the Ministry of Information and Broadcasting (MIB) and attached with the Ministry of External Affairs for optimum result in 1948.[19] One of the most senior and powerful cabinet members would be the head of Ministry of External Affairs. Also two or more ministers of the state will be accommodated him/her. It is noteworthy that the Prime Minister of India enjoys all exclusive powers to take final decisions related to foreign

affairs of India. Foreign Secretory and two other Secretory advise prime Minister. There are various departments working in a field of MEA (Ministry of External Affairs) such as **"Secretary (East), Secretary (Special Assignment), Secretary (DPA & ER), and Secretary (West), Special Secretary (Americas & CPV), Below the Secretaries, there are five Additional Secretaries namely, Additional Secretaries (IO), Additional Secretaries (AD), Additional Secretaries (FA), Additional Secretaries, (PR Chief Controller of Accounts), and Additional Secretaries (L&T), Under the Additional Secretary, numerous Joint Secretaries Directors and Deputy Secretaries, and other administrative staffs have been appointed to assist them in various administrative works."**[20]

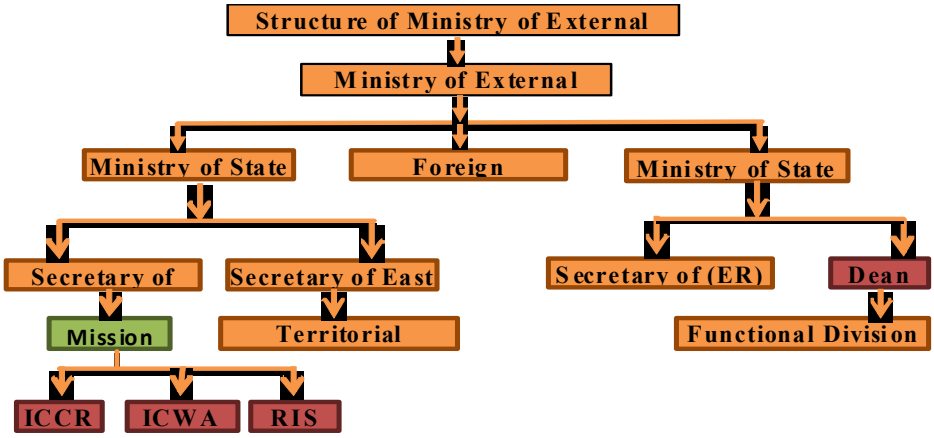

Moreover Ministry of External Affiairs has been further divided into two coprehensive authorities, the first one is the Specialized and Support Divisions of MEA and second one is the Territorial Divistion of MEA. Most important function of the MEA (Ministry of EXternal Affairs) is to make master plan and formulate strategies for the protection of India.s national interest in global politics. The MEA ha responsibility to handle problems related India's foreign policy and also its relations with other countries through diplimats, commissioner and Ambassadors, Reciprocity Act, 1943 (9 of 1943), the ministry also started handling the issues related to Immigration to India from the Republic of South Africa and technical asistance such as financial to other states.[21]

THE PRIME MINISTER'S OFFICE (PMO)

The Prime Minister's Office is a composition of several bureaucrats and diplomats who are assisting the Prime Minister of India while formulating India's foreign policy. **"Presently, the PMO consists of officers like Principal Secretary to PM, National Security Advisor, Additional Principal Secretary to PM, Public Relation Officer, Information Officer, four Joint Secretaries to PM, Private Secretary to PM, two Private Secretaries, four Officers on**

Special Duty (OSD), eleven Directors, Five Under Secretaries to deal with subjects like Funds, Public Affairs, and Administration, and a Reference Officer. Apart from these bureaucrats, supporting staffs have also been attached to the PMO to assist in the day-to-day business of the office."[22] Prime Minister of India has the main power of the executions of policy. Formulations of India's foreign policy have been influenced by the coordination between the Ministry of External Affairs and the PMO.

POLICY PLANNING AND RESEARCH DIVISION

It is also an advisory body of India's forging policy. Such as, Shashi Tharoor, 'Pax Indica: India and the World of the Twenty-first Century', stated that **"Policy Planning and Research Division (PPRD) is the nodal agency responsible to plan India's external policy based on the intelligence and bureaucratic information. Headed by Deputy Secretary, the PPRD like the Policy Planning Council (PPC) of US State Department and Policy Planning Section (PPS) of the British Foreign Ministry is setup to plan and shape India's foreign relations with the rest of the world."**[23]

Further Banndyapadhyaya in famous book 'The Making of India's Foreign Policy' (200-09) stated that **"It gives policy outlines, suggestions, guidelines, observations and other necessary directives to the Policy Planning and Review Committee (PPRC) that is primarily responsible for preparing the external policy of India. Though research no longer remains the important task of the division, still the division plays substantial role in planning India's Foreign Policy."**[24]

THE CABINET AND CABINET COMMITTEES

Cabinet as legislature as well as executive body led performs crucial functions in India's Foreign Policy Decision Making Process. All policies related foreign affairs have taken by the Cabinet in India. It provides approval for the implementation of particular. Further the cabinet ministers also give recommendations for appointments of diplomats, ambassadors and high commissioners. It is responsible of cabinet to resolve the dispute between different government institutions related to various policies.[25] During any emergency that occurred while dealing foreign relations, Prime Minister of India calls meeting of cabinet of ministers, and cabinet ministers plan, formulate and lastly resolve the problem related foreign affairs of India. It also takes other decisions to strengthen India's internal and external security in collaboration with Ministry of Home Affairs and Ministry of Defence respectively. And for the formulation of such an effective foreign policy of India they need the help of several specialized committees, named as Appointments Committee of the Cabinet, Cabinet Committee on Accommodation, Cabinet Committee on Economic Affairs and Cabinet Committee on Parliamentary Affairs etc.[26]

THE NATIONAL SECURITY COUNCIL (NSC)

The National Security Council is an advisory body of Indian government. It is working for the formulation of laws related to national security, India's foreign policy, and national defence system of India. With the consideration of the advice of the National Security Council, Prime minister and his/her cabinet ministers take final decision related India's foreign policy.[27] Along with this, Ministry of Defence is a one of the major governmental body for the protection of the Indian sovereignty and territorial boundaries. Its main aim is to formulate strong India's defence foreign policy. All defence related initiatives, treaties, policies, laws, missile programmers, construction of weapons have been suggested by Ministry of Defence (MOD). Apart from Defence Ministry of India several other committees and staffs are also working with MOD, such as, agencies of military, naval agency, and air agency. It collects all the data and an information related defense sectors. Further it makes grand strategies related India's security policy.[28]

PROCEDURE OF INDIA'S FOREIGN POLICY MAKING

India's foreign policy making is a complex process. Many scholars stated that "India's Foreign Policy behavior has been reactive rather than proactive."[29]

It further defines as defensive rather than offensive like China. For instance India-China war, India- Pak war etc decision has been taken by India in a form of reaction. It often characterized as idealistic rather than realistic. "India's Foreign Policy making process mostly follows the input-output theory. When the data and information are put inside the decision making unit the policy decision comes out in the form of outputs." [30] The First stage follows by the collection of all information related foreign policy, secondly the analyses of data and lastly execution of Foreign policy of India.

Procedure of India's Foreign Policy Making

Procedure of India's Foreign Policy Making	
1.	Information Gathering
2.	Analyzing Collected Data
3.	Policy Planning

INFORMATION GATHERING

Most crucial process of India's foreign policy is information gathering. Ministry of External affairs has collected information from reports, researches, interviews of experts, books, journals etc. Along with information has also gathered from ambassadors, who are working in other countries. Also several agencies are also publishing monthly or annually reports for India's foreign policy. These facts help to take necessary initiatives in foreign policy by the time[31].

ANALYZING THE COLLECTED DATA

After the collection of data, the agencies have analyzing the data related India's foreign policy. There are several organisations, department and agencies, such as, Territorial Divisions of Ministry of External Agencies, Joint Intelligence Committee, and Ministry of External Affairs etc working for the fulfillment of India's foreign policy major objectives[32]. Here each issue has been handles by specialized agencies. After the analyses of data, these agencies have prepared a report along with consisting recommendations and remedies.[33]

POLICY PLANNING

Now on the bases of such reports various decisions have been taken in the matter of India's foreign policy. The decision making body will be several policy planning groups, diplomats, advisors, leaders, bureaucrats etc.[34] Bureaucrats work under the supervision of political leaders. Though they are empowered to take some decision in matters of India's foreign policy, but in limited sense all the major work have done by political leaders only. All the final and primary decisions have taken by political leaders but they are not absolute. Political leaders have to take consideration of the entire rest mechanism.[35]

CONCLUSION

Indian Parliamentary, the ultimate voice of common people, plays remarkable role for the formulation and implementation of India's foreign policy. It can legislate all affairs that come under Union List, including matters related India's foreign policy. Several institutions are contributing significantly for the construction of India's foreign policy.[36] For instance Ministry of External Affairs is the most important institute of the formulation of India's foreign policy. Though multiple institutes are working in the same field but MEA is the primary one. It is not only taking decisions related to Indian foreign affairs but also plays significant role, through collecting data, analyzing and critically tackling all issues related to the same. Furthermore the Prime Minister's Office is a composition of several bureaucrats and diplomats who are assisting the Prime Minister of India while formulating India's foreign policy. Along with this the National Security Council is an advisory body of Indian government. It is working for the formulation of laws related to national security and national defence system of India. With the consideration of the advice of the National Security Council, Prime minister and his/her cabinet ministers take final decision related India's foreign policy.[37] All though parliamentary institutions

are formulating India's foreign policy but the final decision has been taken by prime minister only. Many treaties, such as the India- China Agreement of 1954,[38] the Tashkent Agreement of 1965,[39] the Indo-Soviet Agreement in 1971[40] and Simla Agreement of 1972 have never been declared to the parliamentary institutions for debate before the final conclusion of the treaty.[41] Thus it is very important to include the parliamentary institutions for debate and discussion before the closing conclusion of any agreement. This will help to improve the quality of India's foreign policy decision making.

REFERENCES

1. *Badatya,S.(2019),"Parliamentary and foreign policy decision making in India: Extent, Instruments and Impediments", Journal of Governance and Public Policy, Vol no. 9, pp.2-15, retrieved on 23 January 2020 from https://www.ipeindia.org/wp-content/uploads/2020/02/JoGPP-Vol-9-No-2-Jul-Dec-2019-15-Feb-2020.pdf*
2. *See Online Oxford English Dictionary, retrieved on August, 12 2019 from http:// www.oxforddictionaries.com/definition/english/foreign?q= foreign; also see Joseph Twadell Shipley, The Origins of English Words: A Discursive Dictionary of Indo European Roots (London: JHU Press, 2001) 72,*
3. *V. Kubálková, Foreign Policy in a Constructed World (New York: M.E. Sharpe, 2001) 35. See also Oxford English Dictionary,retrieved on August, 12 2019 from http://www.oxforddictionaries.com/definition/english/policy; also see Julia Cresswell, Oxford Dictionary of Word Origins (New York: Oxford University Press,335*
4. *See Online Oxford English Dictionary,retrieved on August, 12 2019 from http://oxfor ddictionaries.com/definition/english/foreign %2Bpolicy? q= foreign+ policy*
5. *George Modelski,,(1962) "A Theory of Foreign Policy", London: Pallmall Press, 1962) 6-7, retrieved on August, 12 2019 from https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/27735/5/05 chapter 1pdf.*
6. *Alex Mintz and Karl DeRouen Jr.,(2010), " Understanding Foreign Policy Decision Making", New York: Cambridge,p.3, retrieved on August, 12 2019 from https://pdfs.semanticscholar.org/0c7a/42d12a3710ba23fea4459fa2515728d0683f.pdf*
7. *Organisation and structure of Ministry of External Affairs published under the official web sites of MEA, retrieved on August, 12 2019 from http://www.mea.gov.in/organisation-structure.htm (17 May 2013).*
8. *This information has collected from official website of the PM's Office, Government of India, retrieved on August, 12 2019 from, http://pmindia.gov.in/p2msoffice.php, and the RTI report of Name, Designation and Emoluments of PMO Officials.*
9. *See Online Oxford English Dictionary, retrieved on August, 12 2019 from http://oxfor ddictionaries.com/definition/english/foreign %2Bpolicy? q= foreign+ policy*
10. *Tayfur M.F. (1994), "Main approaches to the study of foreign policy: A review", METU studies to development, vol. 21(1), pp.113-141, retrieved on April 13, 2019 from https://edisciplinas.usp.br/pluginfile.php/1553212/mod_resource/content/1/Main%20approachesaTyfur.pdf*
11. *Ibid*
12. *Ibid*
13. *Ibid*
14. *Sorfin A. et.al (2017), "Decision making theories in foreign policy analysis", Oxford Research Encyclopedia, pp.1to16, retrieved on April 13, 2019 from https://oxfordre.com/politics/view/10.1093/acrefore/9780190228637.001.0001/acrefore-9780190228637-e-405?print=pdf*

15. *Ibid*
16. *Ibid*
17. *Ibid*
18. *Ibid*
19. *Ibid*
20. *Organisation and structure of Ministry of External Affairs published under the official web sites of MEA, retrieved on August, 12 2019 from http://www.mea.gov.in/organisation-structure.htm (17 May 2013).*
21. *This information has collected from official website of the PM's Office, Government of India, retrieved on August, 12 2019 from, http://pmindia.gov.in/pmsoffice.php, and the RTI report of Name, Designation and Emoluments of PMO Officials.*
22. *Ibid*
23. *Tharoor, S. (2013), "Pax Indica: India and the World of the Twenty-first Century", London: Penguin UK, 2013, p. 87.*
24. *Banndyapadhyaya, The Making of India's Foreign Policy, 200-09.*
25. *Many scholars have termed India's Foreign Policy as reactive, for instance see, K.R. Gupta &VatsalaShukla, Foreign Policy of India, Vol. 1, (New Delhi: Atlantic Publishers, 2009) 109; Robert L. Hardgrave, Jr., Stanley A. Kochanek, India: Government and Politics in a Developing Nation: Government and Politics in a Developing Nation (Boston: Thomson Wadsworth, 2008) 478; Ashok Kapur, India - From Regional to World Power (New York: Routledge, 2013); David M. Malone, Does the Elephant Dance?: Contemporary Indian Foreign Policy (Oxford; Oxford University Press, 2011) .*
26. *Norton, R.J. (2010), "Understanding the Policy-Making Process: A Guide to Case Analysis, Case Studies in Policy Making", 12th Edition, Edited by Hayat Alvi and Nikolas K. Gvosdev, Newport, US Naval War College,p. 5-10.*
27. *Badatya,S.(2019),"Parliamentary and foreign policy decision making in India: Extent, Instruments and Impediments", Journal of Governance and Public Policy, Vol no. 9, pp.2-15, retrieved on 23 January 2020 from https://www.ipeindia.org/wp-content/uploads/2020/02/JoGPP-Vol-9-No-2-Jul-Dec-2019-15-Feb-2020.pdf*
28. *Kapur, Harish (2013). Foreign Policies of India's Prime Ministers, New Delhi: Lancer Publishers. Maheshwari, S.R.(1972). retrieved on 23 January 2020*
29. *Many scholars have termed India's Foreign Policy as reactive, for instance see, K.R. Gupta &VatsalaShukla, Foreign Policy of India, Vol. 1, (New Delhi: Atlantic Publishers, 2009) 109; Robert L. Hardgrave, Jr., Stanley A. Kochanek, India: Government and Politics in a Developing Nation: Government and Politics in a Developing Nation (Boston: Thomson Wadsworth, 2008) 478; Ashok Kapur, India - From Regional to World Power (New York: Routledge, 2013); David M. Malone, Does the Elephant Dance?: Contemporary Indian Foreign Policy (Oxford; Oxford University Press, 2011) .*
30. *Norton, R.J. (2010), "Understanding the Policy-Making Process: A Guide to Case Analysis, Case Studies in Policy Making", 12th Edition, Edited by Hayat Alvi and Nikolas K. Gvosdev, Newport, US Naval War College,p. 5-10.*
31. *Norton, R.J. (2010), "Understanding the Policy-Making Process: A Guide to Case Analysis, Case Studies in Policy Making", 12th Edition, Edited by Hayat Alvi and Nikolas K. Gvosdev, Newport, US Naval War College,p. 5-10.*
32. *Ibid*
33. *Ibid*
34. *Ibid*
35. *MEA Outcome Budget 2013-2014, Ministry of External Affairs, Govt. of India. Retrieved from http://mea.gov.in. Murthza, Naheed(1998). retrieved on 23 January 2021*
36. *Parliament and Foreign Policy: Reflection of India China Relations New Delhi: CADPLAN Publisher. retrieved on 23 January 2022*

37. *National Commission to Review the Working of the Constitution 2001, January 8 "Treaty-Making Power under Our Constitution" retrieved on 23 January 2021*
38. *Bandyopadhaya, J.(2003). The Making of India's Foreign Policy: Determinates, Institutions, Process and Personalities, 3rd Edition, New Delhi: Allied Publishers, retrieved on 23 January 2021*
39. *Ibid*
40. *Ibid*
41. *Ganguly S,(2010), " Structure and Agency in the Making of Indian Foreign Policy", ISAS Working pp. 116 – 21, retrieved on 23 January 2021*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक, 112, जनवरी–मार्च, 2023 पृ. 160–171

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

A STUDY ON INVESTMENT ANALYSIS OF THE SALARIED PEOPLE AT NASHIK CITY

Dr. Surinder B. Sethi
Associate Professor, Dept of MBA, Amrutvahini College of Engineering, Sangamner
E-mail : surindersethi27@gmail.com Mob. 9270937907

Abstract

Investment preferences differ from person to person, as every individual guided by his own set of circumstances. Which an expectation of generating high returns over period of time and certain level of risk, individual invest in different financial products. The present study is an attempt to analyze the investment preferences of salaried employee towards financial products based on various demographic factors It helps business strengthen their position knowledge power, use market research to gain a better perspective and understanding of your market, or target audience and ensure that your firm stay ahead of the competition this is simple but vitally important and often business critical consideration some qualitative research for deep highlights certain opportunities or warning signs that may otherwise have been missed. It's vitally important to adopt an eyes wide open approach to any market research project which is why it's often advised to work with market research agency to ensure completely unbiased reporting. It is helping to businesses in spotting emerging trends. It helps to business to stay ahead to the competition.*

(1) It helps to market spotting emerging trends.
(2) Assist to stay ahead of the competition.
(3) Provide revenue project.
(4) Focuses on customer needs and demand.
(5) Helps to evaluate the success of a business against benchmark.

Keywords : Investment Preference, Salaried Class, Market Research, Nashik City

INTRODUCTION

Saving form an important part of any economy of any nation with saving invested. Various options are available to people. An investment refers to the commitment of fund at present in anticipation of some positive rate of return in

future today the spectrum of the investment is indeed wide. Individual are more aware about the different investment Avenue.[1] Among all investment Avenues individual consider saving account, fixed deposit, provident fund, life insurance, gold/ silver, and low risk Avenues compare share market, bonds, forex, chit fund as high risk investment Avenues.[2]

The main reason behind the study are the factors like awareness level and factors consider individual before investment, like safe and low investment Avenues, moderate risk Avenues, high risk investment Avenues, emerging investment Avenues.

The finding relates to the awareness among individuals risk taking ability while investing in different investment Avenues. Investment activity involves creation of asset or exchange of asset with profit motive. An investment in knowledge pays the best interest. From the people point of view most of investment options are available with differing risk-reward tradeoffs. An understanding of the core concept and a thorough analysis one need to invest and earn return on their idle resources and generate a specified sum of money for a specific goal in life and make a provision for uncertain future contingencies.[3]

One of the important reasons why one needs to invest wisely to meet to the cost of inflation in the rate of which the cost of living increases. Investment aims at multiplication of money at higher or lower rates depending upon whether it's long term or short term investment and whether risky or risk-free investment.[4]

The purpose of the study is to understand preferences of the people towards savings and investments of the salaried people. It also helps to know how the critical situation influencing the investment decision of individual and people change the investment decisions as per changes in time.

OBJECTIVES OF THE STUDY

1. To understand preferences of the salaried people towards savings and investment in the Nashik City.
2. To examine that how the critical situation like Covid 19 influence the investment decision of salaried people.
3. To know the investment pattern of salaried people.
4. To study the factors influencing the investment decision like Profile, Experiences, Preferences, Risk perceptions and intention of salaried employees.
5. To find the problems faced by investors.

SCOPE OF THE STUDY

The study is focusing on the preferences of investment by salaried class people in Nashik City only and it will be helpful to identify the different and better investment options available in market. The study was conducted by taking limited number of samples size, which stated earlier and this study reflect awareness, factors consider for investment, risk taking ability of those salaried individual residing in Nashik. There might be chances that the awareness factors consider for investment. Nature is varied due to diversity in social life, living pattern, income level etc.

RESEARCH METHODOLOGY

The research design has been adopted as a descriptive study based on primary data and for effective and reliable survey, a simple and well-constructed online questionnaire (Google form) is prepared.

It is impracticable and impossible to study the whole population due to limitations of lockdown and other factors that are indispensable; hence the present study is confined only the area of Nashik city and the sample size is 116 salaried employee using convenience sampling method in Nashik city.

DATA ANALYSIS AND INTERPRETATION

1. Age of the respondent :

Table No. 1

Age group of Respondent	No of Respondent	Percentage
21-30	33	28.4 %
31-40	37	32.8 %
41-50	34	29.3 %
51-60	12	9.5 %
Total	116	100

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation

The 34 people are belonged to 21-30 Age group; young people can afford to take more risk with Investment activities. It advantage to those who investing including time and the ability gives more returns in Future. 38 people belonged to 31-40 Age groups. In this group focus is on the key financial goals of life, Such as buying a house, getting married etc. 31-40 Age group people focused on children's Education Responsibilities. 41-50 age group are preferring Investment planning needs to the retirement and Investment plan need to place.60 and above age people are Retired so, no longer with the regular income from profession, financial and Investment plan is important.

2. Gender of the respondents :

Table No. 2

Gender	No of Respondent	Percentage
Male	04	81 %
Female	22	19 %
Total	116	100

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation

Out of 116 respondents 94 are male salaried people. Out of 116 respondents 22 are female salaried people. Now in the new modern Era, the female participation in the company's is increased today and it also useful for the country's growth and development.

3. Annual Income :

Table No. 3

Annual Income of Respondent	No of Respondent	Percentage
Below 1 lakh	11	31 %
2-3 lakh	20	17.2 %
3-4 lakh	38	32.8 %
5-10 lakh	36	31 %
Abow 10 lakh	11	9.5 %
Total	116	100

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation

Investment is depending on the income and salary of the person. The 9.5% salaried people belonged with the below 1 lakh income group. The 17.2% salaried people belonged with the 2-3 lakh income group. The 32.8% salaried people belonged with the 3-4 lakh income groups. The 31% salaried people belonged with the 5-10 lakh income groups. The 9.5% salaried people belonged with the Above 10 lakh income group.

4. Total Number of dependents :

Table No. 4

Respondent	No of Respondent	Percentage
2-5	73	62.9 %
6-8	33	28.4 %
8 and above	10	8.6 %
Total	116	100

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation

Highly respondents having less members in their family and very few people are having high member in their family. 62.9% (73) salaried people having a 2-5 family members. 28.4% (34) salaried people having a 6-8 family members. 8.6% (10) salaried people having above 8 members in their family.

5. Have you made investment in following different avenues available?

Table No. 5

Options	No of Respondent	Percentage
Life insurance	96	82.2 %
Fixed deposit	44	37.9 %
Mutual fund	6	5.2 %
Equity Market	42	36.2 %
Gold	111	95.7 %
Post office deposit	33	28.4 %
L I C	85	73.3 %
Other	96	82.8 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation

From the above graph, the data is informed that Most of the people made Investment in life insurance i.e. 96 people. 111 people prefer for the Gold due to safe and as a traditional Investment avenue. Also, observed that major people were made Investment in LIC and 96 people in other. Very few respondents are make in post office deposit and equity market and very less respondents make Investment in mutual fund.

6. From which source you come to know above various investment options :

Table No. 6

Sources	No of Respondent	Percentage
Broker	23	19 %
Bank	13	11.2 %
Friends/Relatives	96	82 %
T.V./Newspaper	100	16 %
Other	23	19.8 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation:-

Above graph shows that, out of the 116 Respondent 96 Respondents are getting information from friends and relatives and 100 people are getting from T.V and Newspapers. The 23 Respondent knowing from the Information from the broker and 13 from Bank and remaining 23 people getting knowledge and information from different avenues.

7. **What is your saving objective :**

Table No. 7

Options	No of Respondent	Percentage
Children Education	85	73.3 %
Retirement	54	46.6 %
Home purchase	86	74.4 %
Children's Marriage	45	38.8 %
Health Care	105	90.5 %
Long Term Growth	43	37.1 %
Other	48	41.4 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

From the above graph, out of the 116 respondent inferred that, highly people give the preference to the children's education and the healthcare. 105 people are preferred the healthcare and 85 respondents are preferred for children education. Also, the 86 people are make savings for the Home purchase. The 54 people make provisions for the Retirement. 45 people for the children's marriage. 43 respondents want long term growth and 48 respondents also made savings for other reasons.

8. In which sector you prefer to invest your money :

Table No. 8

Sector	No of Respondent	Percentage
Private	49	42.6 %
Public	94	87.7 %
Goverment	102	88.7 %
Foreign	10	8.7 %

Source: Primary Data,Questionnaire

Interpretation :

From the above graph, most of the respondents make their Investment in public and Government sectors due to high security reasons 102 want make Investment in Government and 94 in the public sector, 49 preferred for private sector and only 10 respondents make Investment in foreign sector.

9. Do you have a format budget for family expenditure and saving :

Table No. 9

Options	Respondent	Percentage
Yes	87	75 %
No	29	25 %
Total	116	100 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

The 75% people are having a format budget of their income and 25% are not having a format budget of their income.

10. Do you invest money in share market :

Table No. 10

Options	Respondent	Percentage
Yes	37	32.2 %
No	79	67.8 %
Total	116	100 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

32% people are making investment in share market and 68% people are not making due to a lack of information, and any other consequences.

11. What is the time period you prefer to invest :

Table No. 11

Time Period	Respondent	Percentage
Short Term	14	12.1 %
Mid Term	68	58.6 %
Long Term	34	29.3 %
Total	116	100 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

The 12% people that means 13 people make their investment for short term period, 0-1 year. The 29.3% people that means 34 people make their investment for long term period, above 5 year. The 58.6% people are making their investment for midterm that means for 1-5 years. The mid-term period of investment highly preferred by the salaried people.

12. Is your family protected against the contingent event :

Table No. 12

Options	Respondent	Percentage
Yes	101	87.8 %
No	15	12.2 %
Total	116	100 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

The 87.8% people are aware and they make Investment for the contingencies, 12.2% people are not making Investment due to any financial problems or low income level.

13. Are you satisfied with your Investment in terms of returns :

Table No. 13

Options	Respondent	Percentage
Yes	38	33 %
No	29	25.2 %
Netural	49	41.7 %
Total	116	100 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation:

Out of the 116 respondents the 41.7% of the salaried people are neutral satisfied with their investment returns, 25.2% people are not satisfying from their investment returns, and 33% people are satisfying with the Investment returns.

14. What is the objective for choosing an investment?

Table No. 14

Options	Respondent	Percentage
Principal Safety	87	75.7 %
Maintain Standard of Living	50	78.3 %
Safeguard against Contingencies	90	78.3 %
Meet Expenses	95	82 %

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

Out of the 116 respondents, 87 people are preferred the principal safety in their life, so the people are preferred this option.

The 50 people want to maintain good standard of living, The 90 people want to safeguard against the contingencies and any consequences. The 95 people want to make some preservation for the future expenses. So, therefore Every salaried people want to make their safer side in their life for the critical situation, any consequences, future expenses etc.

15..In this lockdown period and covid-19 situation, which investment avenues you have chosen?

Table No. 15

Srl. No.	Investment Avenues	Respondent
1.	Life Insurance	105
2.	Gold	80
3.	Equity Market	25
4.	Post Office Deposit	45
5.	PPF	65
6.	Real Estate	15
7.	Others	35

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation:

In this pandemic situation above chart shows that, The 105 people preferred the life insurance option due to safe and low risk avenue, The 80 people make their Investment in Gold due to the High returns on Investment. 25 people preferred the Equity Market. 46 people choose the post office deposit, 65 Makes in PPF and Only 18 people choose the Real Estate Option. 37 people choose other option in this critical Situation.

16. Which investment avenues you ignored in covid 19 situation?

Table No. 16

Srl. No.	Investment Avenues	Respondent
1.	Life Insurance	3
2.	Gold	32
3.	Equity Market	29
4.	Post Office Deposit	-
5.	PPF	-
6.	Real Estate	22
7.	Others	12

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

In this critical situation the chart shows that the 3 people ignored life insurance option due to some consequences. 30 people ignored the Gold option due increase in prices, nobody ignored the Post office and PPF options due to the safe and low investment avenue. The 29 people ignored the Equity market options due to the fluctuations of prices of shares in the market. 22 people ignored the Real estate option. The 12 people ignored other investment options.

17. Which of the following factors you consider before Investing:-

Table No. 17.1

Investment Avenues	No of Respondents			
	Safe & low risk investment avenues	Moderate risk	High risk avenues avenues	Traditional investment avenues
Saving A/c	115	5	3	50
Fixed deposit	120	10	5	40
PPF	98	5	3	10
Post office	99	25	-	-
Savings	-	-	-	-
Government	110	50	-	-
Securities	-	-	-	-
Mutual fund	10	60	40	-

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

1) Saving Account:- Many people have choose the saving account option, because of the saving account is safe and low risk Investment avenue, near by 115 people are considering it safe option. Nearby 5 people think it moderate and 3 people think high risk Avenue, 50 people think as a traditional investment avenue.
2) Bank fixed deposit:- Near by 120 people think that it is safe and low risk Avenue, 10 people think that its moderate risk Investment and 5 people think that it's a high risk Investment. 40 people think as a traditional approach.
3) PPF:-The 98 people think it's a safe and low risk Investment Avenue, 5 people think it a moderate risk Investment Avenue and 3 people think it as a high risk Investment Avenue, 10 people think as a traditional approach.
4) Post office saving:- 99 people think it as a low and safe risk Investment Avenue, and nearby 25 people think it to moderate risk Investment Avenue, and no one think it as a high risk Avenue.
5) Government security:- 110 respondents think that it's a safe and low risk Avenue; nearby 50 people think it as a moderate risk Avenue. Due to the government participation many people think it a safe mode of Investment. So many people prefer it.
6) Mutual fund:-Above the 60 people thinks that, the mutual fund are a moderate risk Avenue, few people which is 10 think it a safe and low risk Investment avenue, 40 people think it a high risk Avenues.

Table No. 17.2

Investment Avenues	No. of Respondents			
	Safe & low risk investment avenues	Moderate risk avenues	High risk avenues	Traditional investment avenues
Life insurance	110	80	-	-
Debentures	-	28	50	-
Bonds	-	35	55	-
Equity share	5	40	38	-
Market	-	-	-	
FOREX market	10	30	50	-
Real estate	70	25	5	60
Gold/silver	110	20	-	100

Source: Primary data, Questionnaire

Interpretation :

1) Life insurance:- Near by 80 respondents think it as a moderate risk Investment avenue, 110 people think it as safe risk Avenue.

2) Debentures:- Nearby the 28 people think that the debentures are the moderate risk Avenue, near by 50 people think that the debentures are the high risk Avenue.

3) Bonds:- Nearby 55 people think that bonds are the high risk Avenue and less than 35 people think that it is moderate risk Avenue.

4) Equity shares market:- Nearby 40 people think that it's a moderate risk Avenues and less than the 38 people think that it's a high risk Avenue. Only 5 people think it as safe and low risk avenue.

5) Forex market:- 50 people think that the forex market is high risk Investment Avenue. And less than 30 people think it a moderate risk of Investment Avenue. 10 people think it a
safe and low risk and traditional Investment avenue.

6) Real estate:- 70 people think that the real estate is the safe and low risk Investment Avenue, and also less than 5 people think it a high risk Avenue Investment, 60 people think it a traditional mode of Investment. 25 people considered as a moderate risk avenue.

7) Gold and silver:- 110 people think that the gold and silver are the low and safe Investment avenue, so therefore the people are more preferring Investment in it also 100 people think it a traditional mode of Investment. 20 people think that it's a moderate risk avenue.

Table No. 18

Responses	No. of Respondents	Percentage
Known	49	42%
Unknown	67	58%
Total	116	100

Interpretation :

The 58% people are not aware about the tax saving options from the different avenues and they unable to take benefit of it and also taking benefits. The 42% Respondent are aware about the different tax saving options.

Conclusion :

Learning through the project:- Most salaried people prefer to invest in public and government sector.

· Most of the people are discuss with their family, friends, auditors, before making Investment options and decision.

· Majority of salaried people prefer to mid- term to invest as they think it is safe period than short term or long term.

· Most of the people are not aware about the tax benefits.

· Most of the people are aware about the investment Avenue like life insurance, FD, Gold, real estate but it found that people were not aware or having less knowledge about other different investment avenues like Mutual funds, Bonds, FOREX market.

· Majority of the salaried people consider FD, Gold, silver, saving account, post office saving, as a safe and low Investment avenue.

· Study of the topic inferred that majority of people consider bonds, forex, equity are the high risk Avenue.

· Many people are aware about the contingencies, any consequences, future expenses. So most of the people are making provision for it

· It finds that very few people are adopting a modern mode of Investment. In this the young investors prefer to invest in modern investment avenues.

· Many people are making a good management of their income towards Investment and saving. Most of the people make provisions for their retirement.

❒

References:

1. *Sanjay kantidas an empirical analysis on preferred Investment avenue among rural and semi-urban household, journal of frontline research, vol (01) 2011, pg.26-36. Research paper, Department of commerce, Assam.*
2. *V.R. Palanivelu k. Chandrakumar (March 2013) A study on preferred investment Avenue, among salaried people with reference to Namakkal Taluk, Tamil Nadu, India, international conference on business, economic and accounting pg.20-23.*
3. *R. Sreepriya. P Gurusamy (Jan 2013). Investment pattern of salaried people- A study in Coimbatore district, Vol 2 issue, international general scientific research, pg.48-52.*
4. *Prof. CA Yogesh P Patel, a study of Investment perspective of salaried people (private sector). Asia Pacific journal of marketing and management, vol no 2 cot 2012, pg.84-89.*

* *N. Geetha, (Nov 2011) A study on preferences in Investment Behaviour ijmer, vol 1 issue 6,Pg.54-59.*

समाचार पत्र के स्वामित्व एवं अन्य विवरण के संबंध में घोषणा

(फार्म–4 नियम–7)

1.	समाचार पत्र का नाम	:	**पूर्वदेवा**
2.	प्रकाशन का स्थान	:	मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी, बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने उज्जैन (म.प्र.) 456 010
3.	प्रकाशन अवधि	:	त्रैमासिक
4.	मुद्रक का नाम	:	पूनमचन्द बैरवा
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	व पता	:	मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी, बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने उज्जैन (म.प्र.) 456 010
5.	प्रकाशक का नाम	:	––– तदैव –––
	राष्ट्रीयता	:	
	व पता	:	
6.	सम्पादक का नाम	:	डॉ. हरिमोहन धवन
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	व पता	:	मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी, बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने उज्जैन (म.प्र.) 456 010
7.	स्वामी का नाम	:	''मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी''
	व पता	:	बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने उज्जैन (म.प्र.) 456 010

मैं पूनमचन्द बैरवा एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है ।

हस्ताक्षर

उज्जैन

दिनांक : **31 मार्च, 2023**

पूनमचन्द बैरवा

प्रकाशक

लेखकों के लिए अनुदेश

पूर्वदेवा शोध पत्रिका में प्रकाशन हेतु समाज विज्ञान के किसी भी पक्ष पर मौलिक शोध एवं साहित्य की समीक्षा पर आधारित विश्लेषणात्मक शोध आलेख आमंत्रित है।

- आलेख MS-Word एवं PDF Format में A-4 आकार के पेपर पर डबल स्पेस में KrutiDev010 फॉण्ट में टाईप होना चाहिए।
- आलेख 5000 से 8000 शब्दों के बीच होना चाहिए। शोध आलेख के साथ 150 शब्दों का सांराश भी भेजे।
- शोध आलेख E-mail ID : mpdsaujn@gmail.com पर प्रेषित करें।
- प्रकाशन हेतु प्राप्त प्रत्येक शोध आलेख की दो विषय विशेषज्ञों द्वारा समीक्षा की जायेगी । समसामयिक प्रासंगिकता, स्पष्ट एवं तार्किक विश्लेषण, सरल एवं बोधगम्य भाषा, उचित प्रविधि मौलिकता आदि आलेख के प्रकाशन हेतु स्वीकृति के मानदण्ड होंगे।
- किसी भी आलेख को स्वीकृत या अस्वीकृत करने का पूर्ण अधिकार सम्पादक का होगा।
- सभी टिप्पणियाँ एवं सन्दर्भ आलेख के अन्त में दिये जाएँ तथा आलेख में यथास्थन उनका आवश्यक रूप से उल्लेख करें।
- पुस्तकों के लिए सन्दर्भ हेतु निम्न पद्धति का अनुसरण करें:

  उपनाम, नाम, (प्रकाशन वर्ष), पुस्तक का नाम, प्रकाशक, प्रकाशन स्थान, पृष्ठ क्रमांक
- जर्नल के लिए सन्दर्भ हेतु निम्न पद्धति का अनुसरण करें:

  उपनाम, (प्रकाशन वर्ष), आलेख का शीर्षक, जर्नल का नाम, अंक, खण्ड, प्रकाशक, प्रकाशनस्थान, पृष्ठ क्रमांक

किसी भी प्रकार का पत्र व्यवहार का पता है :
सम्पादक– **पूर्वदेवा**
मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी
बाणभट्ट मार्ग, सेंट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन (म.प्र.) 456010
सम्पर्क : 9752725488

पूर्वदेवा

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी की सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

'पूर्वदेवा' के प्रकाशन का उद्देश्य मुख्यतः भारतीय समाज व्यवस्था में व्याप्त मानवीय विषमताओं के उन्मूलन, दलितों में मानवीय-अस्मिताबोध एवं अधिकार-चेतना उत्पन्न करने और तद्जनित सामाजिक परिवर्तन की भूमिका तैयार कर मानवीय मूल्यों की स्थापना के निमित्त ऐतिहासिक एवं सामाजिक आधार पर विविधपक्षीय, तथ्यपूर्ण एवं शोधपरक अध्ययन एवं चिंतन को प्रवर्त्त करना है। जिससे कि दलित, सर्वहारा वर्ग का सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक आदि क्षेत्रों में समुचित विकास एवं मानवीय सम्मान का मार्ग प्रशस्त किया जा सके।

अतएव, इस हेतु विद्वान लेखकों, अनुसंधानकर्ताओं से मौलिक लेख, शोध आलेख एवं अनुभवजन्य, तथ्यपरक लेख, पुस्तक समीक्षाएँ प्रकाशनार्थ सादर आमंत्रित हैं।

- लेखको से आग्रह है कि अपने लेख सुवाच्य अक्षरों में टंकित **Word** एवं **Pdf** फार्मेट में ई-मेल द्वारा **E-mail: mpdsaujn@gmail.com** पर भेजें।
- लेख सामान्यतः हिन्दी में लिखे हों। विशेष स्थिति में अंग्रेजी भाषा में लिखे गये लेख भी स्वीकार किये जा सकेंगे। लेख अन्यत्र प्रकाशित नहीं होना चाहिये।
- सम्पादक मंडल को किसी भी लेख को प्रकाशन हेतु स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करने का पूर्ण अधिकार है।

पूर्वदेवा का सतत् प्रकाशन सुधी पाठकों एवं लेखकों के उदार सहयोग पर निर्भर है।
अतएव विशेष अनुरोध है कि पूर्वदेवा के ग्राहक बनकर, अपना आत्मीय सहयोग प्रदान करें।

ग्राहक शुल्क की दरें (**Rates of Subscription**) इस प्रकार हैं-

❋ आजीवन शुल्क	संस्थागत रू.7500/-	वैयक्तिक रू.6500/-
❋ वार्षिक शुल्क	संस्थागत रू.350/-	वैयक्तिक रू.300/-

Book Post

प्रति,

____

____

____

क्रयादेश एवं शुल्क सहित सभी प्रकार के पत्र व्यवहार का पता :

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी

बाणभट्ट मार्ग, सेंट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन(म.प्र.) 456010

म.प्र.दलित साहित्य अकादमी के लिये पी.सी बैरवा द्वारा
न्यू गुलाब प्रिन्टर्स, उज्जैन-से मुद्रित एवं बाणभट्ट मार्ग, उज्जैन(म.प्र) से प्रकाशित
सम्पादन- डॉ.हरिमोहन धवन

आर.एन.आई.रजिस्टेशन नं. 61954/95 ISSN 0974-1100